प्रकाशकीय वक्तव्य

जीवंधर स्वामी का चरित्र संसार पार करने वाली आत्माओंके लिये परम आदर्श है। बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सब के लिये यह सुगमता से अपना कर्त्तव्य ज्ञान कराकर मोक्ष मार्ग की ओर ले जाता है यही कारण है कि संस्कृत, कनड़ी आदि भाषाओं में प्राचीन जैन आचार्यों ने जीवंधर स्वामी के चरित्र को कई तरह से वर्णन किया है। कथा ग्रन्थों का समझना और उसमें उपयोग लगाना गृहस्थ के लिये सुगम है।

कविवर नथमल जी बिलाला ने इस चारित को हिन्दी भाषा में छंदबद्ध करके समाज का बड़ा उपकार किया है। छंदबद्ध कथा ग्रंथों का समाज में महान आदर रहा है। पद्यमें कर्ण और हृदय दोनों खिल उठते हैं और श्रोता वक्ता के सर्वांग से आनन्द का प्रवाह बह उठता है। पं० उग्रसेन जी जैन M A. LL. B. रोहतक निवासी ने, जो भाषा छंद बद्ध शास्त्रों के अच्छे ज्ञाता वक्ता व रसिक हैं, इस कथा ग्रंथ को शास्त्र सभा में बड़े उत्साह के साथ पढ़ा और श्रोताओं को बड़ा आनंदित किया। यह ग्रन्थ अभी

तक प्रकाशित नहीं हुआ था और इसकी प्रति जो रोहतक में थी प्रायः अशुद्ध थी। पं० उग्रसेन जी ने उस प्रति का संशोधन करने और इसको प्रकाशित कराने का भार अपने ऊपर लिया और बड़े श्रम से इसे संशोधित किया तथा इसके प्रूफ संशोधन किये। इस विषय में पं० उग्रसेन जी का जितना आभार माना जाय थोड़ा है। संशोधन के बाद इसकी प्रति लिपि पं० रवीन्द्रनाथ जी न्यायतीर्थ ने बड़े श्रम के साथ की और इनके हम अति आभारी हैं।

इस ग्रंथ के प्रकाशन मे श्रीमती सोनादेवी जी धर्मपत्नि बा० नानकचंद जी जैन एडवोकेट ने २२५) रु० की सहायता सुगंध दशमी व रविव्रत के उद्यापन में प्रदान की। तथा ४०) श्रीमती निर्मल कुमारी सुपुत्री बा० नानकचन्द जी ने प्रदान किये। दोनों बहिनें अति धन्यवाद की पात्र हैं। यह ग्रन्थ श्री जैन मंदिर सराय रोहतक के प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है। हमारी भावना है कि यह ग्रंथ प्रकाशित होकर जिनवाणी और जिनधर्म का जगत में यश फैलावे। और इस ग्रंथ के पाठक अपने स्वपद की प्राप्ति करें।

सुगन्ध दशमी
वीर निर्वाण सं० २४६८
रोहतक

प्रकाशक—
लालचन्द जैन
प्रधान प्रकाशन विभाग
जैन मन्दिर सराय

प्राक्-कथन

जीवंधर स्वामी भगवान् महावीर के समकालीन थे उनके चारित्र का जैनियों में वही स्थान है जो स्तोत्रों में भक्तामर स्तोत्र का सूत्रों में तत्वार्थ सूत्र का। जिस प्रकार तत्वार्थ सूत्र पर अनेकों आचार्यों के व्याख्यान प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार जीवंधर स्वामी के चरित पर भी अनेक आचार्यों के ग्रंथ प्राप्त हैं।

श्री गुणभद्र स्वामी ने उनके चरित्र को उत्तर पुराण में लिखा है वादीभसिंह सूरि ने क्षत्र चूड़ामणि में उनके चरित्र को गूंथा है यह पद्य ग्रंथ है इस ग्रंथ से संतुष्ट न होकर वादीभसिंह सूरि ने गद्य चिन्तामणि बनाया जो मद्रास यूनिवर्सिटी के द्वारा M. A. के कोर्स में नियत हुआ है। यह उत्कृष्ट संस्कृत गद्य ग्रंथ है और कादम्बरी से टक्कर लेता है।

महाकवि हरिश्चन्द्र ने जीवंधर चम्पू संस्कृत में बनाया है शुभचन्द्राचार्य ने जीवंधर चरित पद्य में बनाया है इसके अतिरिक्त कितने ही ग्रंथ कनड़ी, तामिल भाषा में मिलते हैं।

क्षत्र चूड़ामणि की टीकायें हिन्दी भाषा में पं० निद्धामल जी, प० जवाहरलाल जी, पं० मोहनलाल जी ने लिखी हैं ये सब गद्यग्रंथ हैं। हिन्दी पद्य में मात्र नत्थमल जी विलाला ने ही शुभचन्द्र आचार्य के जीवंधर

चरित के आधार पर बनाया है, नथमल जी ने अनेक प्रकार के छंदों में सुगम भाषा द्वारा इसको रचकर गागर में सागर भर दिया है, जिसे पढ़ते व सुनते जी नहीं ऊबता।

जैन संप्रदाय में अनेक शुभचन्द्र विद्वान् आचार्य होगये हैं। ज्ञानार्णव के कर्ता १०वीं सदी में, श्रवण बेलगोल के भट्टारक ११वीं सदी में, सागवाड़ा के पट्टाधीश १६वीं सदी में सभी शुभचन्द्र के नाम से अलकृत थे नहीं कह सकते इनमें से कौनसे शुभचन्द्र जीवंधर चरित के कर्ता हैं—ज्ञानार्णव के कर्त्ता शुभचन्द्र जैसी योग शास्त्र की ग्रन्थियां जीवंधर चरित में नहीं पायी जातीहैं। पं० नथमल जी ने इस चरित के कर्त्ता को "पुरानन के कर्त्ता" पद से विशिष्ट किया है। जीवंधर चरित के अतिरिक्त पांडव पुराण और श्रेणिक चरित भी शुभचन्द्र

जीवंधर चरित के सभी पात्र कर्मशील हैं, काष्ठांगार के जीवन में भी उज्ज्वलता के चिह्न देख पडते हैं वेश्याओं द्वारा पान की पीक डालने पर उसका भी स्वाभिमान जागता है। वह भी जब वेश्या के यहाँ राजा का भेष बनाकर जाता है तथा वेश्या भी प्रेम भिक्षा चाहती है पर काष्ठांगार अपने व्रत को याद करके अटल रहता है। बिजया भी अपने पति के युद्ध में नाश होने पर धैर्य रख पुत्र जनती है और निर्मोहिता से गंधोत्कट को सौंप देती है। जीवंधर स्वामी का तो कहना ही क्या है।

इस चरित को हमें केवल कथा समझ कर और इसके पात्रों की कृति को देख कर ही संतुष्ट नहीं हो जाना चाहिये, इस चरित्र का ध्येय आत्मस्वरूप की जाग्रति करना है। संसार की प्रत्येक आत्मा जीवंधर (जीवधारण करने वाली) है, जिसका पिता सत्यंधर सत्य रूप है। बाल अवस्था में ही जीवंधर के १ ही ग्रास से तृष्णा रूपी भस्म व्याधी रोग नाश हो जाता है। विषय वासना रूपी हाथी निरमद हो जाता है। तत्व परीक्षा का अद्भुत ज्ञान हो जाता है। जीवंधर का जन्म श्मशान में होना अत्यन्त उपयोगी है मृत्यु ही जन्मका कारण है प्रत्येक आत्मा पर कर्मरूपी। काष्ठाँगार का प्रभुत्व है जिस समय काष्ठाँगार जीवंधर को अपने दरबार में बाँध

मंगाता है और उनको मारना चाहता है उस समय उनका मित्र सुदर्शन यक्ष अवस्था में ही उनको ऊपर उठा ले जाता है और निर्भय बना देता है। सुदर्शन ही उनकी हर समय रक्षा करता है। उस ही के प्रभाव से आठ कन्यायें रूपी अष्ट सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। सुदर्शन की मित्रता से हाथी, अग्नि, विष, परचक्र आदि के भय से जीवंधर मुक्त हो जाते हैं और अन्त में काष्ठांगार रूपी शत्रु पर विजय पाकर स्वपद पर सुशोभित हो जाते हैं।

सुगंध दशमी — रवीन्द्र नाथ
लेखक — न्याय तीर्थ हिन्दी प्रभाकर

ॐ नमः सिद्धेभ्य

जीवंधर चरित्र

मंगल स्तुति

* दोहा *

जयवंतौ वरतौ सदा, प्रथम रिषभ अवतार।
धर्म प्रवर्तन जिन कियौ, जुग की आदि मँझार ॥

सवैया २३।

वर कनक गात सुन्दर शसि तैं, छविपेख छिपैं रवि की किरनें।
सतपंचचाप उन्नत सुमेरु जिमि, खिरै सुवानि अमी झरनें ॥
शिवनाथ कहाँ तक गुण वरणौं, तुम देखत कर्म लगे टरने।
इमदेखि भया निहचै मनमें, नित नाभि तनुज रहिये शरणें ॥

॥ चौपाई ॥

श्री सनमति वांछित फलसार। सतपुरुषन को करि उपकार ॥
मुक्ति राज को विभव महान। ता करि प्राप्त होत सुख खान ॥

॥ रोला ॥

काल अनादि अनंत सार सुख तृप्ति विराजै।
ज्ञान मूर्तिकर जुगति वितनु वसुगुण व्रत छाजै ॥

ऐसे सिद्ध महंत करो मोकूं सुबोध वरु।
ता करि छिनमें भस्म होय संसार महातरु॥
वंदौ मैं आचार्य जोर कर शीस नवाई।
पंचाचार उदार आप पालैं सुखदाई॥
औरनकूं आचरन करावैं जग हितकारी।
मोकूं आतम ज्ञान देहु प्रसन्न ह्वै भारी॥
द्वादशांग को पाठ करें पाठक छिनमांही।
औरन कूं श्रुतसार पढावैं उर हित लाही॥
हैं उत्कृष्ट मुनिराज समुद्र भव शोषन हारे।
हमरी रक्षा करौ अहो भवतारन हारे॥

॥ चौपाई ॥

दर्शन ज्ञान चरित्र मनोग। सत्पुरुषनि करि ध्यावे योग।
ता करि मंडित साधु महान। देहु मोहि रतनत्रय दान॥

॥ छप्पय ॥

श्री गौतम गणराय धर्म उपदेश कियो वर।
पूज्यपाद मुनिराय बोध करता सुध्यान धर॥
समंतभद्र आनंद और अकलंक गुणाकर।
श्री जिनसेन मुनीश ज्ञान भूषण सुपरमगुर॥
शुभचन्द्र आदि मुनिराज को, करि प्रणाम उर धारकैं।
वरनौं चरित्र श्रीपाल तनौं, निज पर हित सु विचारकैं॥

❀ परिचय ❀

॥ चौपाई ॥

प्रथम द्वीप जंबू मनहार । सब दीपन के मध्य उदार ।
ज्यों उडुगन में चंद बखानि । त्यों सब द्वीपन में इह जानि ॥
ताके मध्य सुदर्शन नाम । मेरु कनक मय अति अभिराम ।
ताकी दक्षिण दिशा मँझार । भरत क्षेत्र शोभित मनहार ॥
तामैं मगध देश शोभंत । ग्राम नगर पुर विविध लसंत ।
वन उपवन सरिता अरु ताल । वापी जल करि भरी विशाल ॥
सजल धरा शोभित मनहार । धान्यादिक उपजै जु अपार ।
ठौर २ वापी जलभरी । क्रीड़ा करैं तहाँ किन्नरी ॥
जामैं लोक सुखी अधिकाय । दुखको नाम सुनै न लखाय ।
सकल धनाढ्य पुनीत उदार । शास्त्र ज्ञान शुभ चित दातार ॥
तहाँ राजग्रह पुर अभिराम । नृपन योग्य तामैं बहुधाम ।
चित्रित शोभित हैं अधिकाय । निरखत मन को लेत लुभाय ॥

गीतिका छंद

ठौर ठौर सुपौरिये तहँ राजते बहु तोरना ।
कांति ते वर चौखने सित सोभिते ग्रह सो घना ।
सांझ तैं पुनि भोर लों जहाँ गीत गावें कामिनी ।
जास में बहुदेव कौतुक देखते भर यामिनी ॥

॥ चौपाई ॥

कमल पत्र सम नैन अनूप । सकल भामिनी लसै सरूप ।
संजम शील विविध गुण युक्त । पति की आज्ञा में सब रक्त ॥

तापुर को श्रेणिक भूपाल। धीर वीर सुन्दर गुणमाल।
नारि चेलना पति सोरंत्त। रूप पुरंदर सम शुभ चित्त॥
श्री धर्मा नामा मुनिराय। एक दिवस आये वन ठाय।
वंदन हेत सहित परिवार। चलो हिये धर हर्ष अपार॥
तहां जात मारग में भूप। कही इक गुफा विषै जु अनूप।
देखत भयो उद्योत अपार। अति प्रचंड तमको क्षयकार॥
अहो परम यह जोत महान। काहे तैं दीसे अमलान।
कै सुर बैठो गुफा मझार। फैलि रही रवि किरन उदार॥
ऐसो चिनवत आयो राय। मुनि को देखत चित हर्षाय।
ध्यान विषै आरूढ़ मुनीस। आतम चितवन करै मुनीस॥
अहो किधौं यह नृप को रूप। इन्द्र कहा है या सम तूप।
कै धरणेन्द्र भूमितैं आय। अथवा है विद्याधर राय॥
किधौं दिवाकर ज्योति अनूप। तथा देह धरि काम सरूप।

भव्यनि के हितकारी सदा। वांछा रहित न आलस कदा ॥
निज आतम कूं ध्यान कराय। भव भटकन सूं रहित सु आय।
इत्यादिक गुण सहित मुनीश। लखे सुधर्माचार्य जगीश ॥
तीन प्रदक्षिणा तिनिकूं दई। अष्ट प्रकारी पूजा ठई।
त्रिविध भांति थुतिकर नम भाल। भूमि विषै बैठो भूपाल ॥
ता पीछे गुरु मुखतेंधर्म। कहो भेद करि भूषित मर्म।
भाव शुद्ध करके मुनिराय। नमस्कार कीनो सिरनाय ॥
पुनि पूछें मुनि को कर जोर। यह संसार दावानल घोर।
ताहि बुझावन मेघ समान। तुमही हो स्वामी गुणवान ॥
हे स्वामी इत गुफा मँझार। कौन जतीश्वर हैं जगतार।
कांति थकी भेद्यो तमभूर। कायोत्सर्ग ध्यान धर सूर ॥

अडिल्ल

ऐसे नृप के वचन, सुने मुनिराज जू।
कहत भये भूपति सुन, चित्त लगाय जू ॥
जीवंधर मुनि गुफा, विषै तप करत हैं।
मोह कर्म निरवारन, कूं मन धरत हैं ॥

प्रश्न

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी जीवंधर कौन। को कुल में उपजो सुख भौन।
कौन हेत तप करत उदार। कहा विभव भाषौ निरधार ॥

दशन अंशु अमृत वरषाय। सकल सभा ऽस्नान कराय।
धुनि गंभीर थकी मुनिराय। कहत भये गुरु जगहित दाय।।
हे नरेन्द्र थिर चितकर अवै। जीवंधर चारित सुनि सवै।
जैसी विधि यह भयो उदार। सब जनकूं अचरज करतार।।
ताहि सुनत मल नसै नरेश। पाप रूप मन होय न लेश।
सकल क्षेम करता सुखकार। यह चरित्र भविजन मनहार।।
आधि व्याधि भय नैकु न होय। नहिं संसार भ्रमैं पुनि सोय।
या चरित्र के सुनत महान। निसदिन सुख भुगतैं अमलान।।

॥ दोहा ॥

तातैं जीवंधर तनो, चरित कहौं सुखदाय।
जन्म सुतरु जाके सुनत, सफल फलैं अधिकाय।।

अडिल्ल

भरत क्षेत्र रमणीक इही सुखकार जू।
इस भव अर परलोक विषै निरधार जू।।
शुभ फल को दातार तास मधि जानिये।
है मागध वर देश देख सुख मानिये।।

पद्धरी छंद

जा देश विषै नर सुर समान। इन कल्प वृक्षसम सघन जान।।
फल भार भरी नय रही डाल। घर घर प्रति शोभित हैं विशाल।।
लावण्य रूप धारैं अत्यंत। नर धीर वीर गुणवंत संत
सुरनारि तुल्य सब शोभमान। नारी शोभित तहाँ शीलवान।।

सवैया २३

कामिनि डोलत हैं दसहूँ दिस नेवर घोर मचावन लागे ।
गावत हैं मधुरे सुर सो पुनि कान कूं ललचावन लागे ॥
शीत सुगंध समीर बहै तन लागत खेद बचावन लागे ।
हँस फिरैं वन वीथिन मैं तिन देखत ही मन मोहन लागे ॥

॥ दोहा ॥

तिन नगरनि के निकट ही, परी धान्य की राशि ।
शोभित है गिरवर किधौं, करत देव तँह वास ॥

अडिल्ल

दोई ग्राम आराम नगर पत्तन विषैं ।
पर्वत शिखर मंझार महल पंकति लखैं ॥
ठौर ठौर जिनभवन अधिक शोभा धरै ।
ध्वजा शिखर फहराय लखत सुर मन हरै ॥
तहाँ मनोज्ञ सरवर निरमल जलसूं भरे ।
किधौं संत पुरुषन के मन हैंगे खरे ॥
तामैं लषत सरोज भ्रमर गुंजत फिरैं ।
करें केलि नर नारि खेद तन के हरें ॥
ठौर ठौर उपवन सोहैं जु सुहावने ।
किधौं त्रियन के गुण राजत मन भावने ॥
उपजावत हैं काम कमल पग पग विषै ।
फल फूलन कर भरे वृक्ष लूमत लसैं ॥

सकल धान ता देश विषै उपजैं भले ।
फल की भार थकी झूमत भूपर रलें ॥
पंथीन की सत्कार करत मानों मुदा ।
सुरनर रहे लुभाय देख कौतुक सदा ॥
विचरत जहां मुनीश देख उत्तम धरा ।
केवल ज्ञानी मनपर्यय धारी खरा ॥
अवधि ज्ञान उत्कृष्ट युक्त मुनिराज जू ।
श्रुत ज्ञानी जहां ध्यान धरें मन लाय जू ॥
सकल देश को अधिप मनों यह धरतु है ।
सदा विभूति उदार सकल वर वसतु हैं ॥
छत्र चमर सिंहासन गहे धरें धरा ।
तारकि देश मनोज्ञ शोभ धारें खरा ॥
है मागध वर नामा देश विराजई ।
हेम रतन करि भरी सुशोभा साजई ॥
हेम कोश करि भरो देश निर्भय सदा ।
कनक समान महंत वसत नर हैं सदा ॥

श्री जिन मंदिर अति शोभंत। तिन ऊपर ध्वजगण फहरंत।
दर्शन हेत भविक समुदाय। किधौं बुलावत हाथ उठाय॥

कवित

ध्वज दंएडनि में किंकनीक को शब्द होत वर।
बाजे बजत अनेक नाद तिनको अति सुखकर॥
पुन्यवंत जीवन सों भाषित इह विधि मानो।
जैसे हैं हम तुंग होहुगे त्यों तुम जानो॥
रहित कपट नर तहाँ वसैं ज्ञानी धनवंते।
दाता धरत विवेक प्रीति सबतैं जु करंतें॥
बड़ी रिद्धि को धरें मान उरमें नहिं धारें।
सरल चित्र बुधवंत पाप किरिया निरवारैं॥
जा नगरी में भंग शब्द कहुँ सुनियत नाहीं।
भँग कुचन के विषै लखै जामें शक नाहीं॥
तहाँ चपलता नही, है जु त्रिय नैन मंझारी।
तहाँ न जाचै कोय ब्याह में जाचत नारी॥

॥ चौपाई ॥

ताड़त है न तहाँ नर कोय। ताड़त हैं मृदंग पुनि सोय।
पड़िवौ डार पत्र में धार। और कहूँ दीसे न लगार॥
ईर्षा भाव करें न लगार। धरैं परस्पर दान मँझार।
चोर तनो दीसे नहिं नाम। कामीजन चित चोरे वाम॥
तहाँ न भय नर धारे कदा। डरपत हैं कामीजन सदा।

कृपण शुधि को डर नहिं धरें। मक्खी मधु को सँग्रह करें॥
नीच शब्द भाषत नहिं जहाँ। नीची नाभि कहावत तहाँ।
हीन शुद्धि ह्वांमें नहिं कोय। जो देखो तो बालक जोय॥
ज्ञान हीन नर कोई नहीं। शील रहित नारी नहिं कहीं।
अफलवृक्ष कोई न लखाय। फल फूलन कर भरे अघाय॥
तहाँ भूप सत्यंधर नाम। सत्य वचन बोलत अभिराम।
सत्पुरुषनिकरि माननयोग्य। कलाज्ञान गुण धरत मनोज्ञ॥
जा प्रताप तें अरि भूपाल। पत्तन आदिक तज सु विशाल।
बसे पर्वतनि गुफा मँझार। करत सर्प तहाँ अति फुंकार॥
शोभा अर्थ खड्ग कर माहिं। धारत नृप यामें शक नाहिं।
युद्ध निमित्त नृपके अवलोय। कोई न बैरी सन्मुख होय॥
सुखी तहां हैं नर अधिकाय। सुर तरु की वांछा न कराय।
तहां भूप मन वांछित दान। करें सदा शोभित गुणवान॥
रहे प्रताप ज्ञान गंभीर। जीते अखिल देश बलवीर।
सम गज के अंग महान। धारत शक्ति अधिक बलवान॥
ताके विजया रानी लसे। प्राणन मूं प्यारी मन बसे।
पतिव्रता गुणधरन विख्यात। महा विचक्षण है अवदात॥
सरल क्रियामें विजया नारि। नृप के प्राण वल्लभा सार।
भई विख्यात बड़ी बड़भाग। दुर्लभ है जग में सौभाग्य॥
सुरपति के इन्द्राणी यथा। शशि के लसें रोहिणी तथा।
कामदेव के ज्यों रतिनारि। लक्ष्मण के ज्यों कमलासार॥

लसत राम के सीता प्रेम। पार्वती शंकर के तेमि।
धारत हँस हँसनी सार। तैसे नृप के विजया नारि॥
निशिदिन विजया सँगरमाय। जाते काल न जाने राय।
जीते हैं बैरी तिन भूरि। तातें राजत निर्भय सूर॥

॥ दोहा ॥

विषय सुखनमें मगन नृप, गुण नहिं धारे ऐन।
नहिं प्रवीणता उर धरे, भाषत झूठे बैन॥

॥ चौपाई ॥

पिशुन कर्म तें गुरुता हान। होइ नीच जनतें अपमान।
इनतें कामी जन निरधार। डरत नहीं जु त्रिलोक मँझार॥
दान विवेक विभव परमार्थ। ए सब गुण छोड़े नर नाथ।
कामी पुरुष जगतके मांहि। निज जीवन छोड़े शक नांहि॥
भयोविषय करि अंध नरेश। राजकाज बुधि तजी अशेष।
कामी जन की चेष्टा क्रूर। वर्णन कहा करों अब भूरि॥
धर्मदत्त नामा मंत्रीश। मंत्र कार्य में निपुण गरीश।
पर के चितको जाननहार। दुर्लभ पंडित गुण सँसार॥
एक दिवस चारणमुनि दोय। चारित्र कर उद्दीप्त जो होइ।
तरुवल्ली कर वन मनहार। आवत भये जगत हितकार॥
ज्येष्ठ ज्ञानसागर मुनि ईश। लघु गुणसागर जान महीश।
ध्यान अभ्यास विषै परवीन। ज्ञानी कर्म करें बलहीन॥
सुनिके मुनि आगमन पुनीत। पुरजन हर्षित होय सुनीत।

अष्ट द्रव्य उत्तम ले संत। युत परिवार चले बुधवंत ॥
जुग मुनिके समीप जनजाय। तीन प्रदक्षिणा दे सिरनाय।
पूजा करि बैठे तिह थान। धर्म सुनन की तृषा महान ॥
ज्ञानजलधिमुनि भाषितसार। उन्नत धर्म सुनो अविकार।
व्रतउपवास भेद जा मांहि। शुभ फलको दाताशक नांहि ॥
मुनिमुखते सुनिधर्म विशाल। लीने उत्तम व्रत तत्काल।
कैयक शील धारते भये। कैयक प्रोषध वर व्रतलये ॥
कैयक निशिको तजो अहार। कंदमूल कैयक परिहार।
किनहू कियो ग्रन्थि परमान। किनहू लीनो उत्तम ध्यान ॥
कैयक दरशन भाव धरंत। कैयक दान विषै रत संत।
कैयक संजमभाव विचारि। करत भये तप भव्य उदार ॥
तहाँ इकभागचाह अघधाम। काष्ठांगार जासको नाम।
चित्तरहित क्षुल्लक गुनमान। व्रतनिमित्त मुनिकूं नयो आनि ॥

॥ दोहा ॥

अहोजतीश्वर देव तुम, व्रतदेवहु शुभहेत।
धर्म शुद्धता जीवकूं, सुरतरु मम सुखदेत ॥

बांधव सुभक्ति वत्सलकरंत। शुभ अन्य सुजस जग में लहंत
वपुअति निरोग अरु राजमान। चंवरनिकी पंकति विद्यमान।

॥ दोहा ॥

अहो दलिद्री धर्म तें स्वर्ग संपदासार।
लहैं सुभविजन मुक्तके सुख रतन त्रय धार॥
द्रव्यरहित तन रोगमय षंढ दासता अंध।
पराधीन विडरूप तन नसे सकल कुलवंधु॥
कुजस कुनारी कुवज तन दोष बहुत अविचार।
पाप जोग ते ये सबै लहैं जीव निरधार॥

॥ चौपाई ॥

अहो मित्र तुमअंगीकार। करो अणुव्रत पंचप्रकार
अष्टमूल गुण शील धरेहु। निशि भोजन हिंसा तजदेहु।
काष्ठांगार भक्ति उरधार। बोल्यो मुनिसेती तिहिवार
जो मोपै व्रत पले मुनीश। सो हित करता देहु जगीश।
तब विचारि करके मुनिराय। कह्यो दलिद्री सों इह भाय
पूरण पूनम शशि युतसार। ता दिन शील पालि निरधार।
मुनि सेती व्रत ले शुध भाव। पालत भयो शील सुखदाय
मुनि वचमें रत होय अतीव। उदर पूरना करै सदीव।
ताही षत्तन में अभिराम। वेश्या रहे प्रभावती नाम
रूप सु जोबन गर्व धरंत। सुतिय देवदत्ता निवसंत।
पर ठगवे कूं चतुर सदीव। गीत नृत्य में निपुण अतीव

अति सुकंठ नृप मानँवरा । नर कुरंग बंधन वागुरा ॥
मानग्रना तसु भवन उतंग । तिनको शोभित है सर्वंग ।
काटभार निर्मनिकट उतारि । खंदित बैठो काष्ठांगार ॥

अडिल्ल

नव जुग गणिका ठई झरोखा आयकें ।
देत भई करताल चित्त हरपायकें ॥
चन्दन वमत सुगन्ध माल उर धार हीं ।
ता करि उठी सुगन्ध भ्रमर झंकार हीं ॥
मुख वारिज तंबोल रँग कर सोह ही ।
अंग मनोहर तिनको लख मन मोहई ॥
लखि तिलोत्तमा रूप सु तिनको राजई ।
उन्नत कठिन अनूप पयोधर राजई ॥

॥ कवित्त ॥

निज दृग कटाक्षकर विकल किये शशि सूर मनुज अमिताई ।
वय रूप गुगुन को धारत हैं मद निज मनमें अधिकाई ॥
गृह गवाक्ष तल तिनि देखो तब भारवाह दुख भीनो ।
निन्द्य रूप देखत घिन उपजे पूरब पुन्य विहीनो ॥

सोरठा

थरे कोल मम देश, अल्प वस्त्र शतखंड को ।
निन्दित रूप अशेष, कियो न्हवन नहिं जन्मतें ॥

॥ चौपाई ॥

कहत देवदत्ता तिहिं बार। पद्मावती सुनो वचसार।
करिये यह वर है तुम जोग। सुख निमित्त कारण है भोग॥
सुनकर वचन रिसानी सोय। मद धर पान पीक मुख जोय।
गेरी भाखाह पै तवै। कस्तूरी करि वासित जवै॥
परी पीक ता ऊपर जाय। अति मलीन निन्दित अधिकाइ।
तब कौतूहल करिके वाम। करी हास्य ताकी अघधाम॥
जब उगाल ता ऊपर परो। काष्ठांगार कोप तब करो।
दुष्ट कनिष्ट अहो पापिनी। शील रहित अति धारै मनी॥

अडिल्ल

दुरगति पँथ दिखावन दीप समान हो।
कहा अपने मनमें धरत गुमान हो॥
निन्द्य रूप लह बृथा हास किम करत हो।
वित्त निमित्त शरीर बेच अघ भरत हो॥

॥ दोहा ॥

ऐसे बचन तू क्यों कहे, हमसों नीच गँवार।
राजमान सौभाग्यवर, धरैं रूप को भार॥
देह पँच दीनार जो, हम घर करे प्रवेश।
और प्रकार प्रवेश नर, नहिं पावे लवलेश॥
अरे दुष्ट भोजन वसन, घर धन आदिक हीन।
तेरे तन को देखिके, घिन उपजे मति हीन॥

जब वेश्या निर्वाटियो, गयो ग्रेह दुख पाय।
आप पराभव पाय के, निन्दत कर्म अघाय॥
ठगों न याकूं जो अबैं, निरधाटों नहिं याहि।
तो मेरो जीवन वृथा, इमि चिन्तवन कराहि॥

॥ चौपाई ॥

काष्ठ भार कूं नित प्रतिजाय। कृपण बुद्धि करि वित्त उपाय।
भेली करी पाँच दीनार। कष्ट कष्टकरि तिहि निरधार॥
एक दिवस धोबीघर जाय। काठ भारदे वसन लहाय।
एक बेर पहिरन के हेत। दिये रजक ने हर्ष उपेत॥
मंजन विधिसों करि धीमान। माला वसन पहिर अमलान।
द्रव्य सुगंध तेल लगवाय। भूषण पहिरे बहु अधिकाय॥
पान खाय मुख कीनों लाल। शोभित कियो सुवर भूपाल।
इह विधि सेती कर सिंगार। लीला सहित चल्यो तिसद्वार॥
पद्मावती के गेह मँझार। तिष्ठो जाय हर्ष उरधार।
घंटा कौतुक नाद कराय। विषयासक्त चित्त अधिकाय॥
घंटा को सुन शब्द विशाल। आयो नर जानो तिहि काल।
तब पद्मा हर्षित चित भई। घर में ताहि बुलावत भई॥
तब वह ताके आंगन जाय। तिष्ठो तहँ पद्मा हरषाय।
सन्मुख आय कियो सगाम। कामबाण पीड़ित अघधाम॥
तब इन दई पँच दीनार। ताके सुख की इच्छा धार।
गुण लावण्य रूप संपदा। ताहि देख मोहित भयोतदा॥

अडिल्ल

अस्ताचल पै सूर्य गयो तब जाय के।
कामी जन की दया कियो उर लायके॥
बड़े पुरुष की चेष्टा है जग माहिं जू।
केवल पर उपकार निमित्त बताय जू॥

॥ दोहा ॥

एक रूप जग कूं करत, फलो नीलतम घोर।
अपनो औसर पायके, कौन धरे नहिं ज़ोर॥

कुसुमलता छन्द

दिशा वधू भई श्याम छिपति रवि, वारिज अंक मलीन भये।
नाथ गये ते कौन जोषिता, आकुलता उर नाहिं लये॥
निशावलोकन हारे निशकरि, करि उद्योत शोभे जु खरो।
दिशा समूह प्रकाशित कीनी, अंधकार को पूर हरो॥
कामीजन के चित्त प्रफूले, कुमुदनी परकाश भई।
उदै भयो शशि पूर्ण तमोहरि, निशि में अति शोभा जुथई॥
लख निशकर उद्योत कहो तब, कहो बाले तिथ आज कहा।
सकल मनोरथ पूरन हारी, तू शोभित सुन्दर जु महा॥

चाल छन्द

हे नाथ आज उजयारी, पूनौ शशि किरण प्रसारी।
सुनि बचन तास उर मांही, शुभचित व्रत याद करांही॥

मैं तो मुनि पै व्रत लीनो, शुभ गति दायक सुख भीनो।
पालों यह जतन कराई, प्राणन तें भी अधिकाई॥

कवित्त

भोगन करिके कहा किये दुख अधिक दिखावैं।
पाप प्रगट ये करनहार संसार बढ़ावैं॥
जाननहार जे तत्वज्ञान के हैं जग माहीं।
तिनकर साधन जोग कदाचित हैं जे नाहीं॥

॥ चौपाई ॥

भोगनिविषै त्रिविधि यह जीव। तृप्त न होत कदाच सदीव।
अग्नि काष्ठतैं तृप्त न होय। उदधि तृप्त नहिं आवत तोय॥
ज्यों ज्यों सेवे विषय अघाय। त्यों त्यों चाह बढ़ै अधिकाय।
जैसे अग्नि तापतैं खाज। बढ़त अंग में करत इलाज॥
सपरस इन्द्री राग वसाइ। जैसे गज छिन मांहि नसाइ।
त्यों हू इनके सेवनहार। जग में कहा नसैं न विचार॥

॥ दोहा ॥

रसना सुख वश होयके, मांस लोलुपी मीन।
कंठ छिदावै वड़िश तैं, औंडे जलमें दीन॥

अडिल्ल

नासासक्त भ्रमर इन्द्रिय वश होय के।
सांझ समय सुखकार गंध में मोह के॥

पद्म कोष के विषैं करै थिति जाइ के।
संकोचित भये अंबुज प्राण नसाय के ॥

॥ कवित्त ॥

लख शुभ रँग पतँग नेत्र इन्द्रिय वश होई।
दीपक अग्नि मझारि भस्म कूं प्रापति होई ॥
और पुरुष जो नेत्र विषय धारै अधिकाई।
नाश कहा नहिं लहैं जगत में अति दुखदाई ॥

* दोहा *

देखो मृग वनमें बसत, श्रवण विषय रस लीन।
छोड़ सुखन कूं लालची, तजै प्रान मति हीन ॥
इक इक इन्द्रियके विषय, सेवत जीव अपार।
महा कष्ट सहिके मरें, यांही जगत मँझार ॥
जे पाँचों सेवें सदा, कहा तजे नहिं प्रान।
प्रेरे कर्म किसान के, बहैं सुहल जग थान ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे चित में करत विचार। भार कांह्र कर मिस तिहवार।
आयो उलटि आपने गेह। व्रत रक्षा पर याको नेह ॥
वेश्या ताकी वाट निहार। व्याकुल हो जोवति निजद्वार।
भारवाह आयो नहिं जान। कियो विषाद उदास महान ॥

॥ दोहा ॥

एक दिवस यापुर विषें, राजा महल मझार ।
हास्य करन विजया सहित, अचरज को दातार ॥

॥ चौपाई ॥

सुर दत्तादिक वेश्या सबैं । शुभ नाटक आरंभो तबैं ।
रानी सब गनिका अवलोय । पद्मावती लखी नहिं कोय ॥
काहूसों रानी इहि भाय । पूछी पद्मा क्यों नहिं आय ।
भारवाह को सब विरतांत । आद्योपान्त भयो तिहि भाँति ॥
जा दिन तें वह चर्ची बात । ता दिन तें पद्मा अवदात ।
करन शृंगार न नृत्य विलास । रहत निरंतर निज आवास ॥
तासु वचन सुनकें नृप जोय । चित्त विषें अचरज अति होय ।
पद्मा को विरतान्त जु सबैं । रानी नृपसूं भाषो तबैं ॥
रानी वचन सुनें जु नरेश । उरमें अचरज कियो विशेष ।
ताहि बुला पूछी नृप तबैं । वचन यथार्थ कहो निज सबैं ॥
भारवाह के देखन काज । निज सेवक भेजे महाराज ।
बहुत जननसों कियो तलाश । ताकूं ल्याये भूपति पास ॥
गंदे वसन धारें विद्रूप । तासों इह विधि पूछे भूप ।
देके नाहि पंच दीनार । पद्मा छाटी कौन प्रकार ॥
रूप वसन कछु धनसों हीन । पर औगुण देखन परवीन ।
पद्मामें क्या दोष निहार । सो मोसों सब कहो विचार ॥
रूपवान धनवान विशेष । हे नृप यह राजन है वेष ।

याको मेरो कौन संजोग । वसन हीन नहिं रूप मनोग ॥
नृप कारन जानो तुम देव । धारो मद मोकूं लख एव ।
नीच जानि इन गेरी पीक । किम इच्छै इम कहत अलीक ॥

कवित्त

भारवाह के वचन सुने वेश्या उर लाई ।
निठुर वचन मैं कह्यो सुमर मनमें थिर लाई ॥
बिलख वदन तब भई देख नृप पूछो ताकूं ।
कहो भद्र विरतंत सकल ऐसो सो याको ॥
भारवाह सों फेर कहो भूपति द्रुति करता ।
कैसी विधि वह कार्य कियो अचरज को करता ॥
याने गेरी पीक दई दीनार पँच तब ।
तजी कौन विधि याहि कहो सांची जु बात सब ॥
पूनम को व्रत शील लयो पूरव सुखकारी ।
भई हिये मुरझाय देख शशि की उजियारी ॥
गयो आपने ग्रेह वचन कहके हितकारी ।
सुनि करि अचरजवंत भयो नृप आदिक सारी ॥
देखो यह आश्चर्य शील व्रत सार धराई ।
वेश्या के घर जाय तासु रक्षा जु कराई ॥
धन्य पुरुष जग माहिं सार ये ही गुणवंतो ।
या सम धरनी माहिं नहीं कोई बुधिवंतो ॥

॥ चौपाई ॥

इनमें विस्मय धर नरराय । भूषण वसन दिये बहुभाय ।
कन्या विज्ञान सहित सुखहेत । परणा दीनी हर्ष उपेत ॥
राजा सूं पायो सन्मान । करन लगो तब सेव महान ।
व्रतफल इस भव परभव माहिं । उत्तम फलको को न लहाहिं ॥
कोटिक ग्राम चित्त चहु पाय । अनुक्रमतें पायो सुखदाय ।
सेवक सेवा करें अनेक । परम रिद्धि लहि धरत विवेक ॥

दोहा :

एक दिवस सर्वार्थ इमि, करि चिंतवन निज चित्त ।
भूमि भाग याको अबै दूं, सुख सिद्धि निमित्त ॥
होय निराकुल विषय सुख, भोगूं मैं निरधार ।
चिन्ता करि पीडित रहैं, तिनकूं सुख न लगार ॥

॥ चौपाई ॥

धर्मदत्त आदिक मंत्रीश । नृप इच्छा में हैं जु गरीश ।
कहत भये भूपतिसों तबै । विनती एक सुनो नृप अबै ॥
हे नृप पर नर की परतीत । राजा करें नहीं यह नीति ।
यदि मम परजन को इतबार । करे कहा भूपति निरधार ॥
सोन वर्ग नृप सेवें सदा । करै विरोध न इनमें कदा ।
परंपरा सुख भोग अनूप । क्रमतें होय मोक्ष के भूप ॥

॥ अडिल्ल ॥

भोगनि के अर्थी नरेश जे हैं सहीं।
धर्म अर्थ तिन-तजवो जुगतो है नहीं॥
धर्म अर्थ तैं सुख भोगैं चिरकाल जू।
मूल बिना सुख कहा सुनौ भूपाल जू॥

॥ चौपाई ॥

सौंप नियोगी कूं भूभार। जे सेवति हैं काम उदार।
सौंपति पय बिलावकूं तेह। सुखकी इच्छा चाहत जेह॥
पूर्व अपर सब अर्थ विचार। कीजे कारज कर निरधार।
और प्रकार करे भूपाल। दीरघ ताप लहे दरहाल॥
ऐसे प्रतिवोध्यो सचिवेश। तो भी छोड़ो न हठ लवलेश।
होनहार सूं कहा वसाय। नर की मत ऐसी ही थाय॥
तब भूपति ताकूं हरषाय। राज भार दीनो सुखदाय।
पुन्य उदय तें काष्ठांगार। सुखी भयो ले राज उदार॥

* कवित्त *

तब राजभार कूं देके नृप तिय युक्त विषय सुखनमें रातो।
निज इच्छा करि रमणीक विषयमें रमत भयो मदमातो॥
कबही निज मंदिर जल थल में केलिं करत सुखदाई।
कबही गिरि की दिव्य भूमि लखि रहो तहाँ विरमाई॥
काष्ठांगार तब नृप कर दीनी भूमि पाय सुखकारी।
व्रत करि उपजो पुण्य महा फल शुभ भोगति अधिकारी॥

नरपतिगण राजत स्वछंद तिनको प्रताप कर क्षीनो ।
प्रबल पुन्य मेती अति अद्भुत विक्रम कर जस लीनो ॥

॥ छप्पय ॥

व्रत करिके सुख होय मिले त्रिया शीलवान वर ।
स्वर्ग संपदा लहे लहे चक्रीपद सुखकर ॥
व्रत करिके सब होय सिद्धि बहु यश विस्तारे ।
तीर्थंकर पदपाय मोक्षलहि वसुगुण धारे ॥
व्रत कर जीवन कूं वस्तु बहु दुर्लभ होत सुलभ सदा ।
यातें शुभ चित्त भविजन करो नहीं प्रमाद धारो कदा ॥

॥ प्रथमोऽध्याय. समाप्तं ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ छप्पय ॥

वंदों आदि जिनद धर्म जामों अति शोभित ।
धारत लक्षण वृषभ सकल सुरनर मन मोहत ॥
युग की आदि मँझार धर्म उपदेश कियो वर ।
सुख अनंत कर तम, मोह मद रागद्वेष हर ॥
महिमा अनंत भगवंत प्रभु, शुक्ल ध्यान धर कर्महन ।
युग हाथ जोर 'नथमल' नमत, राख मोह निजपद शरण ॥

❀ कुन्डलिया ❀

परम देव इस जगत में प्रथम ऋषभ अवतार ।
जयवंतो जग में रहैं भविजन तारनहार ॥
भविजन तारनहार कर्म भू विधि दरसाई ।
दया सिंधु जगतात सकल जीवन सुखदाई ॥
सुखदाई संसार में कथित एक जिनको धरम ।
ता करि शिवपुर जायके वरै मुक्ति रमनी परम ॥

॥ चौपाई ॥

एक समय निश अन्त विचार । अल्प नींद युत सेज मँझार ।
विजया सोवत सुप्न लखाय । भयके जे सूचक अधिकाय ॥
फेर प्रभात समय अवलोय । बंदी जन जस गावत सोय ।
बाजन को सुनि नाद महान । जागी मृगनैनी सुखदान ॥

॥ जलज छंद ॥

तब उठ उदार कर न्हवनसार तन वसनि धार वर कर शृंगार

॥ चौपाई ॥

गई शीघ्र भूपति ढिग वाम । विस्मय सहित कियो प्रणाम ।
अर्धासन पर बैठत भई । स्वपनों का फल पूछत भई ॥
पहिले पहिर विषै भूपाल । सुपने मैं देखे तिहिकाल ।
इनको शुभफल अशुभअतीव । जानत हो वर उत्तम दीव ॥
लखो अशोक वृक्ष मैं सार । कोमल पल्लव छांह उदार ।
फेरि पवनतें भूपर परो । यों लख विस्मय उरमें धरो ॥

पुनि वाही तरुमें भूपाल । आठ लखी जु अनूपम माल ।
तिनकी पास रही महकाय । तिनमें भ्रमर रहे लुभ याय ॥
हे भूपति ये सुपने तीन । तिनको फल तुम कहो प्रवीन ।
इनको फल नृप जान विरूप । कछू दुखित चित बोले भूप ॥

मरहठा छंद

तुम लखो अशोक वृक्ष अति छोटो वसु शाखा युतवालो ।
सुनो तास फल सुत हो तिहारे भोगे राज विशालो ॥
पुनि लखी आठ शाखा में लटकत माला आठ सुखकारी ।
फल सुनो तासु तुमरो सुत सुंदर परनेगो वसु नारी ॥
वर तरु अशोक पहिले मैं देखो अहो नाथ सुखदाई ।
पुनि पवन योगतें गिरो भूमि पै सो फल मोहि बताई ॥
अब ताको फल पूछे मत बालो है खोटो अति भारी ।
तुम सुनो नार काल यह मेरो सूचत है दुख भारी ॥

चौपाई

सुनत वचन नृपके तिहिकाल । हाय नाथ इम कह तत्काल ।
मूर्छित होय पड़ी भू माहिं । सुधिबुधि ताहि रही कछु नाहिं
रानी को मूर्छित लखराय । आप अचेत भयो अधिकाय ।
दुख समीप आये तें सही । होत अनिष्ट को नर कै नहीं ॥
तब शीतल कीनों उपचार । भये सचेत भूप तिहि बार ।
सावधान भूपति जब भयो । रानी कूं प्रतिबोधत ठयो ॥
सुपने को फल यह निरधार । प्रान रहित तूं मोहि निहार ।

सुपने देखत हैं बहु लोय। फलदाई कोई कहुँ होय ॥
विपति नाश कूं शोक अपार। कहा करे नर जगत मँझार।
अति दुख नाशन के है हेत। कहा अग्नि इच्छे शुभ चेत ॥
शोक करे होय रोग अतीव। पुन उपजत है पाप सदीव।
पाप होय अरु दुक्ख अपार। यातें शोक तजो परनार ॥
सब अनिष्ट नाशन के हेत। एक धर्म साधो शुभ चेत।
जैसे गरुड़ आवते देख। नशै सर्प इम जानि विशेष ॥
शोक वृक्ष कूं छेदन हार। एक धर्म जानो निरधार।
जैसे दीप बले तम भूर। होय छिनक ही माहिं दूर ॥
या प्रकार संबोधन पाय। चिन्ता शोक खोय थिरथाय।
रमण सँग निज रमती भई। सुखमय है दुखकूं विसरई ॥

॥ कवित्त ॥

कछु यक बीतौ काल तवै विजया सुखदाई।
दिवतें चयो सु जीव गर्भ धर हर्ष बढ़ाई ॥
पड़त सीप में बूंद महाघन की सुखकारी।
उज्ज्वल मोती होय जेम विजया सुतधारी ॥

॥ चौपाई ॥

पुनि रानी के चित्त मझार। भयो दोहला इक निरधार।
क्षीणगात मुख पीत लखाय। उदासीनता किधौ बताय ॥
दोहलो सहित लखी निजनार। नृप पूछी हठ कर तिहबार।
"क्योंही क्योंही" ऐसे कही। दीरघ स्वांस लेत सो वही ॥

धर्म क्रिया करिवे की चाह। मो उर वरतत है नरनाह।
पुनि मयूर यंत्र के माहिं। बैठ भ्रमूं नभ यह चित माहिं॥
ऐसो दोहलो सुनत प्रमान। खोटे स्वप्नों के फल जान।
करत भयो तब पश्चाताप। निज रक्षा तत्पर चित आप॥

अडिल्ल

नार वचन मचिवन के ये माने नहीं।
भाग्यहीन हों मैं निश्चय कीनी सही॥
रहित विवेक पुरुप जे जगमें हैं महा।
कर्म उदय संतन के वच मानें कहा॥

॥ चौपाई ॥

निकट विपति आवे अधिकाय। तब मूरख कहा जतन कराय।
अग्नि प्रचंड लगे घर जले। खोदत कूप काज कहा सरे॥
पश्चाताप चिन्ता अति शोक। मोकूं अब करनो नहिं योग।
अपनो वंश तनो मोहे सार। जतन सदा करनो निरधार॥
निज कुल रक्षा हेत नरेश। केकी यंत्र करायो वेश।
भावी काल तने अनुसार। हीन बुद्धि जीवन की नार॥
ऐसो यंत्र कियो भूपाल। रानी बैठाई दर हाल।
कियो गमन आकाश मझार। पूजा दिक कीनी तिहवार॥
दोहला पूर्ण करे नृप नारि। जानो हाल महाँ फलसार।
मुग्र कर सहित भट तब मोय। निश्चय त्रिय पूरखनी होय॥
तिन में मंदिर होय नरेश। शल्य सहित तिष्ठो वर भेप।

सदा धर्म को करत विचार । दीरघ दरशी है नृपसार ॥
लख २ सहित गर्भ निजवाम । उरमें हर्ष धरे अभिराम ।
दुख के पीछे सुख उद्योत । अतिशय सहजै नर के होत ॥
महा कृतघ्नी काष्ठांगार । और कृतघ्नी लीने लार ।
नृपके मारन को सु उपाय । सदा विचारे चित्त अधिकाय ॥
पराधीन पुनि होय जु जीव । भूमि विषै जीवे जु सदीव ।
तिनको जीवो ऐसो जान । कटी पूंछ के वृषभ समान ॥
जो पुरुषारथ धरे महान । सोई है जग में बलवान ।
सिंह सदा बन माहिं वसंत । किन मृगेन्द्र पद दियो महंत ॥
मैं ही आप शक्ति बहु धरों । पराधीनता कैसे करों ।
अपने हाथ करों इहराज । तातें सरें सकल मो काज ॥
ऐसे चित्त में करत विचार । सचिवन सों भाषे तिहवार ।
राज द्रोह मैं करों सुचेत । नृप पद सुख पावन के हेत ॥
सुनो सचिव मेरी इक बात । स्वप्न लखौ मैं पिछली रात ।
राक्षस एक दुष्ट भयकार । मैं देख्यो संशय न लगार ॥
तिह मोसूं यह वचन उचार । मोहिं जान राक्षस निरधार ।
जो मेरो बच माने नहीं । सचिवन जुत दुख पावे सही ॥
मैं भाषो तेरे बच कहा । सो पुनि बोलो निरलज महा ।
नृप को मार लेय तू राज । सचिवन जुत भोगो सुखसाज ॥
सुनके धर्मदत्त मंत्रीश । मनमें कियो विचार गरीश ।
दुष्ट जीवको चरित विख्यात । वचन द्वार किम वरनो जात ॥

यह पापी निज चित्त मँझार । नृप मारन कूं करत विचार ।
मीठी वचन कहत सु बनाय । निहचै मूढ़ लखो दुखदाय ॥

॥ अडिल्ल ॥

मनमें तो कछु और कहत कछु और है ।
करत कछू सूं कछू जान नहीं परत है ॥
पापी जन की चेष्टा कैसे कर कहूँ ।
सो रसना कर कथन करत अंत न लहूँ ॥
दुष्ट जनन की रीति वचन सीतल कहैं ।
कारज करत कठोर प्रगट अपजस लहैं ॥
ज्यों थूहर को दूध स्वेत दीसै सही ।
फल जाको दुखकार जान संशय नहीं ॥
करो बहुत उपगार दुष्ट नरकू सदा ।
सो मानैं नहिं किंचित् हू मन में कदा ॥
दूध पिलावे बहुत सर्प कूं ल्याय के ।
प्राण हरे तत्काल सु विष उपजाय के ॥

॥ चौपाई ॥

जो ऊँचे आसन आरूढ़ । तो भी खलसों खल ही मूढ़ ।
कनक सिंघासन पै थिति जोय । बैठो वायस हँस न होय ॥
आत्म ज्ञानधारी यत तास । धर्मदत्त मुनि वचन प्रकाश ।
निज स्वामी की भक्ति उदार । को चाहत नहीं जगत मँझार ॥
जो तुम सुपनो देख्यो मित्र । तो भी सो वच सुनो पवित्र ।

भूपति है जीवन के प्राण । तिन जीवन सब जीवें जान ॥
इष्ट अनिष्ट राय के होय । तो सब जन सुख दुख अवलोय ।
नृप द्रोही जो होय अतीव । पंच पाप सो लहे सदीव ॥
पर को शिक्षा देय नरेश । तातें वे गुरु जान विशेष ।
तिनसों द्रोह किये अवलोय । गुरु द्रोही सो कहा न होय ॥
नृप देवन के देव महान । सबकी रक्षा करें सुजान ।
नृप सबमें दीपति है जोय । देवघात तिनि मारत होय ॥
चोर शत्रु भय छेदत भूप । जीवन कूं सुख करत अनूप ।
यातें भूप पिता सम जानि । ता मारे पितु घात प्रमान ॥
गुरु,आदिक पातक पुन जेह । मनुषन कूं उपजत हैं तेह ।
नृप के घात करन तें वीर । यातें यह कारज तज धीर ॥
ता नर को अपजस जग होय । दुरगति लहे हाथ में तोय ।
राजद्रोह सम पाप महान । हुओ न होय जगतमें आन ॥
ऐसे न्याय वचन इन चये । ताकूं मरम छेद सम भये ।
जग परकासन हार दिनेस । घूघू को न रुचै सो लेश ॥
स्वामी द्रोह निज निन्दा दोष । गुरु आदिक पातक अघपोष ।
इनकूं देखति भयो न सोय । अर्थी दोष लखे न कोय ॥

* दोहा *

साल्यो काष्ठांगार को, मदन नाम मतिवान ।
कहत भयो खल ये वचन सुनवे जोग न कान ॥

अडिल्ल

मैं मन कियो विचार नृपति कूं मारि के ।
सबको रक्षा करूँ सु हिये विचार के ॥
यह विचार मन करो मित्र मन में कदा ।
नृप की रक्षा किये होत शुभ ही सदा ॥
पुनि तैं कियो विचारि भूप मारो नहीं ।
तो सबको होय घात जान निश्चय सही ॥
मंत्रिन की रक्षा जु करै नृप मार के ।
कौन कार्य लक्ष्मी तू लहै विचारि के ॥
सालो के सुनि वचन जु काष्ठांगार जू ।
कियो कोप अधिकाय मूढ़ अविचार जू ॥
तृण समूह के विषै अग्नि कूं डारिये ।
कहा न प्रज्वलित होय हिये सु विचारिये ॥

॥ चौपाई ॥

धर्मदत्त मन्त्री अधिकार । नृप उपदेश तनो दातार ।
वंदीगृह में दीनो ताहि । दुष्ट कहा चेष्टा न कराइ ॥

॥ दोहा ॥

मथन सूं मसलत करी, पापी काष्ठांगार ।
भूपनि के मारन विषै, बुद्धि करी तिह बार ॥

॥ चौपाई ॥

सो पापी नृप मारन काज। चलो सँग ले सेना साज।
भुजग बदन में जो पय परे। सो विष रूप तुरत अनुसरे॥

॥ दोहा ॥

सेना काष्ठांगार की गई, नृपति के द्वार।
मर्यादा कूं लोपती, ज्यों समुद्र को वारि॥

॥ चौपाई ॥

द्वारपाल लखि सेन विशाल। व्याकुल चित्त भयो दरहाल।
सिंहासन थिति लखि नरनाथ। विनती करी जोर निजहाथ॥
महा दुष्ट मंत्री भूपाल। मारन कूं आयो इह हाल।
ऐसे वच सुनि क्रोधो राय। युद्ध करन कूं उठो सुधाय॥
अर्धासन बैठी नृप नार। गर्भवती देखी तिह वार।
किधौं प्रान कर रहत अतीव। अतिशय भय त्रियधरत सदीव॥

मरहठा छन्द

ज्ञान को प्राप्त भये तब राजा, रानी कूं प्रतिबोध करें।
संत पुरुप आरत के माहिं, तत्वज्ञान उर माहिं धरें॥
पाप उदय मनुषन के आवे, कहा अनिष्ट तब होय नहीं।
तातें शोक करो मत रानी, सूर्य छिपै निशि होत सही॥
पाप उदय सेती जीवन कूं, महा विपत्ति न होय कहा।
ता अनिष्ट के प्रगट करन कूं, श्रीमुनिवर है निपुण महा॥
यह तन जल बुद २ समजानो, इन्द्र जालवत् लच्छि सवे।

जोवन चपला सम अति चंचल, तिनमत अचरज कौन अवै ॥
है संयोग वियोग सहित सब, साता दुखकर सहित बनो ।
हर्ष विषाद सहित है निहचै, जीवन मरन समेत मनो ॥
सम्पता दारिद सहित सबै ही, तन निरोग गद सहित सबै ।
इनके आगम में सतन को, शोक दशा कबहूँ न अवै ॥
भये नात संसार विषै जे, वेही वैरी भाव लहैं ।
जग संजोग विचार इसो है, हित अर्थी नर कहा न कहैं ॥
निज उर चंदन वसत अनूपम, त्रिया रूप कर सुक्ख परा ।
भोगे इस संसार विषै जे वेही, सागर कूर नरा ॥
यातैं सुख दुख विषै जु प्यारी, हर्ष विषाद कहा करनो ।
मरण शोक छोडो अब निश्चय, धर्म सदा उरमें धरनो ॥

॥ दोहा ॥

भूप कथित इस धर्म, वच रानी हृदै न धार ।
बोयो बीज न ऊगजे, ऊसर भूमि मँझार ॥

॥ चौपाई ॥

अब निज सत्य परीक्षा हेत । भूप उद्यमी भयो सचेत ।
सम्यक्त्वानि सों बुद्धि उद्योत । आग्नि विषै अलप नहिं होत ॥
गर्भ सहित रानी को साथ । कैसी यंत्र विषै बैठाय ।
पहुँचायो निज गगन मँझार । विधिना और रची निरधार ॥
गयो यंत्र अंबर में जबै । उद्यत भयो युद्ध को तबै ।
सेना सत्रु सहाई न कोइ । बिन अंकुरा बीज सुजोय ॥

॥ दोहा ॥

पटहादिक बाजे न को, होत भयो अति शोर ।
दुहूँ ओर के सुभट जहं, करत भये रण घोर ॥
मुदगर कुंतल चक्रसर, लिये हाथ में वीर ।
रुद्र भाव उरमें धरे करत, युद्ध अति धीर ॥

छन्द भुजगी

तवै बानके घातको ही विदारे । कहें क्रूर बानी मनौ सैल मारे ।
जवै कोप हो जीवके चित्त मांही । तबै कौनसो पाप जोहोत नांही
खड़ो अग्रजो वीर ताकूं पछारे । तबै जायके तासकूं वेग मारे ।
करें बाहु से युद्ध केई जुधीरा । लरें खड्ग सूं ध्याय केई सु वीरा
धरें हाथको दंडको वीर कोई । तजैं बान वाणी कहें क्रूर जोई

॥ चौपाई ॥

गज घोड़े रथ प्यादे भूर । पड़त ही तहाँ भये चकचूर ।
भरो नृपति को आंगन सबै । महा भयंकर रण लख तबै ॥
निज भट मरे देख सब ठौर । गज घोड़े आदिक सब और ।
जगत अथिर जब जानो राय । विरकत चित्त भयो अधिकाय ॥
वृथा घात जीवन को होय । ता कर मोहि प्रयोजन कोय ।
राज थकी पुन कारज कहा । मरें जीव अघ उपजे महा ॥
विषय निमित्ततें जीव सदीव । दुख अनेक सो सहे अतीव ।
विषय सुखन सूं दोष महान । परभवमें जु लखो दुख खान ॥

अडिल्ल

पूरब तैंने जीव भोग भुगते घने ।
आगों और अनेक भोग माहिं सने ॥
सो अब सबकी झूठ सुधी सुख होत जू ।
भोगे जगत मझार कहा सु सुचेत जू ॥
होयन तृप्ति कदाच विषय सुख भोगतैं ।
उपजत है निज गात खेद के जोगतैं ॥
ऐसे दुखदायक भोगन कूं लख सदा ।
बुधजन इनसों प्रीति करै नाहिं कदा ॥

॥ चौपाई ॥

भोगन सुख उपजै अधिकाय । अंत विषै जु महा दुखदाय ।
विषफल खाते मीठो जान । पीछे निहचै हरै सुप्रान ॥
हो न विषय सुख थिर चिरकाल । आप ही सूं विनसै तत्काल ।
ऐसे त्याग करे नहीं संत । त्याग किये शिव होय तुरंत ॥
सुर पुन असुर चक्रधर सोय । इनसों तृप्त भये नहिं कोय ।
नरदेही के भोग असार । सो मैं तृप्त किमहीं निरधार ॥
अंबुध नीर करै अवलोय । बड़वानल त्रासे नहिं कोय ।
ओस बूंद करके निरधार । कैसे तृप्त तृषा निरवार ॥
अंतकाल ये भोग असार । भोगे अब वांछा न लगार ।
आतम सुखमें तृप्ति महान । अब मैं भयो भिन्न तन ज्ञान ॥
ऐसो चितवैं कर मुनिचार । भावन भयो भावनासार ।

जगसूं भयो उदास प्रवीन । संतन को मन मति आधीन ॥
आंगन तैं उलटो फिर भूप । थिर आसन बैठो सुख रूप ।
अशनरु भोगनको करि त्याग । मुक्ति हेतु चित धरे विराग ॥
भारवाह की सेना महाँ । अघ समूह कर आई तहाँ ।
कर नृप के घर में प्रवेश । धन धान्यादिक हरो विशेष ॥
पद्मासन बैठो लखराय । भारवाह तहाँ कोप्यो जाय ।
हनो नृपतिको तिन अविचार । पंच पाप भाजन निरधार ॥
शुद्धभाव करिके धीमान । त्यागे भूप तवै निज प्रान ।
प्रापति भयो देव गति जाय । कल्पसुमन करि अति सो भाय ॥
पुरजन घर घरमें तिहवार । करत भये सब शोक अपार ।
इष्ट वस्तु जब विनसै सही । शोक कौन के उपजे नहीं ॥

अडिल्ल

नृप के शोक थकी पुरजन पीड़ित भये ।
देह भोगते उदासीन उरमें थये ॥
नयो शोक जीवन कूं उपजत है सदा ।
अतिशय कर वैरागभान उपजे तदा ॥
अहो भूप ने यह कारज कीनो कहा ।
वनिता मंवन हेतु राग वश ह्वै महा ॥
अद्भुत राज महान तुच्छ सुख हेत जू ।
भारवाह को दीनो हर्ष उपेत जू ॥
त्रिया प्रेम वश होय अंध प्रानी जिके ।

राज भाग उत्कृष्ट सबै त्यागे तिके ॥
महा पाप भार्या रागी नर देहजू ।
काज सकृत्य कहा जु करे नहिं तेहजू ॥

॥ जोगी रासा ॥

नारिन को मुख कफ करि पूरित दाढ़ भरे जुग नैना ।
नासा पुट दुर्गंध द्रव्य सब धरे कहूँ किम बैना ॥
ऐसे निन्द वचन सों मूरख भाषै चंद्रमुखी है ।
तिमर सहित दृग निरख सीप कूं मानत रजत यही है ॥
केश समूह सहित तिय वेणी ताको चमर कहे हैं ।
ऐसे मूरख दृष्ट अज्ञानी ता पर मोह धरे हैं ॥
पिंड मांस के कुच युग तिनसूं सुधा कुंभ इम भाषै ।
जैसे आमिष कूं अति हितकर वायस ही अभिलाखै ॥
नारि योनि मूत्रमल थानक कामी जहाँ सुख माने ।
विष्ठा कीरग विषै जिमि शूकर कहा प्रीति नहिं ठाने ॥
नारिन को सुख है कितनो इक करहु विचार जु ऐसो ।
खोटी चिति याको जग माहीं कर्दम धोवो जैसो ॥
नारिन को तन सप्त धातु मय बहुविध कष्ट धरे है ।
राग अंध नर तिनसों रत हैं कैसे प्रीति करे हैं ॥
सबै करन हु संतन की मति लगे कुकारज माहीं ।
भले काज कूं तजत अज्ञानी डरत नहीं मन माहीं ॥
संतन की मति विषय सुखन को मानत है अघकारी ।

तो भी विषयन में वरते सो मोह महातम भारी ॥
खोटी वस्तु विषै मोहित ह्वै भले बुरे कर प्रानी ।
मोह कर्म बैरी कर वंचें सुध बुध भूले अयानी ॥
केवल वनिता ही के कारण रावण आदि नरेशा ।
राज विनाश मरण करिके पुन कीनो नरक प्रवेशा ॥
कहाँ जाय हम कहा करें पुन कहाँ थिति कर सुख वेहुँ ।
कहाँ ते लक्ष्मी की ह्वै प्रापति कौन नृपति मैं सेऊँ ॥
भोग कौनसू भोगवै अब रूप सहित को नारी ।
कारज कारी कौन वस्तु है अन्य किसौ हितकारी ॥
कहा कहूँ सोऊँ किह थानक यह प्रकार उर माही ।
बड़े मोहकर चिंतवन करते दुर्गति जाय लहाही ॥
विकलप रूपी बैरी करिके वंचे नर बहुतेरे ।
नाना कष्ट सहे निशि वासर मोह कर्म के प्रेरे ॥
ऐसी विधि निर्वेद भाव धरि पुरजन सोच करंते ।
संत विपति में निहचै करिके उर वैराग धरंते ॥

* दोहा *

यह तो कथन रहो अबै, और सुनो उर धार ।
नभतें केकी यंत्र पुनि, आयो भूमि मँझार ॥
याही पुर के प्रेतवन, महानिंद्य भयदाय ।
यत्न सहित नृप नार कं, तहाँ दई बैठाय ॥

॥ चौपाई ॥

मुरदन की जु चिता जिहठाम। दीखत भय करता दुखधाम।
रानी के दुख कूं जु निहार। किधौं परे जे चिता मझार॥
तहां नचत हैं प्रेत समाज। भारवाह को देख सुराज।
प्रगट बात है जगमें येह। दुर्जन को दुर्जन सों नेह॥
मांस अहारी गीध बराह। करत भये मन माहिं उछाह।
डाकिन शाकिन अरु वेताल। डोलत हैं जहाँ अति विकराल॥
मृतकन के मस्तक के केश। भ्रमत पवन कर गगन अशेष।
मन्यथर को गयो उद्योत। पापी कहा निशंक न होत॥

अडिल्ल

ता मसांन की भूमि विषै नृप की त्रिया।
परी सुमूर्छित होय शोक उरमें किया॥
देत जीव अब कष्ट अनेक प्रकार जू।
कहा नहीं यह करहि जान निरधार जू॥
काल चक्र के ज्ञाता हैं जे नर सबै।
ते निहचै करि इहि उर में जानो अबै॥
राज विभव आदिक क्षण भंगुर हैं मही।
मेघ महल सम विनशत वार लगै नहीं॥

॥ चौपाई ॥

प्रात समै नृप की वर नारि। पूजनीक थी जो निरधारि।
भई सांझ सो मृतक समान। इम लख अथिर करो सुजान॥

अडिल्ल

गई रैन जो रानी पलंग में सोवती ।
सो अब अगली रैन विषै दुख भोगती ॥
सोवत भई मसान भूमि बनमें मही ।
कर्म पराभव करें यही सँशय नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

मूर्च्छा के वश रानी होय । दुख प्रसूत का लहे न कोय ।
पूरनमास भये तब जबै । सुत उपजायो रानी तबै ॥
पुत्र पुन्य सेती निरधार । सिद्धारथा सुरी तिहिवार ।
धाय रूप कर तिष्ठी सोय । कहा पुन्य तें दुर्लभ होय ॥
ताहि देख जागो नृपनार । उमड़ो शोक समुद्र अपार ।
सुजन निकट जब आवे कोय । ताहि देख अधिको दुख होय ॥

* रोटक छंद *

रानी कूं रोवती देख देवी गुणवंती ।
संबोधी तिहवार पुत्र सों नेह धरंती ॥
बालक के गुणसार कछुयक वर्णन करती ।
बोली गद गद वैन हर्ष उर मांहि जु धरती ॥
हे बाले तू बृथा रुदन मति करे जु बनमें ।
यह तेरा सुत पुण्यवंत है जानो मनमें ॥
कभी तो सुख है सार कभी है दुःख अपारा ।
इस संसार असार विषै लखिये निरधारा ॥

॥ चौपाई ॥

हे रानी सुत पालन हेत। चिन्ता तू मत करे सुचेत।
याके पुण्य तने परभाव। कोई पालेगो हित लाय॥
बड़ो होय बालक निरधार। अरि हनि राज करेगो सार।
पुण्य उदय जे जन्मे सही। कौन वस्तु ते पावें नहीं॥
यह तो कथन रहो इह थान। आगे और सुनो जु बखान।
तापुर में इक सेठ प्रधान। करत सेव ताकी धनवान॥
गंधोत्कट है ताको नाम। पुण्यवंत सज्जन गुणधाम।
नारि सुनंदा ताके सही। शीलवंत गुणगण की मही॥
मृतक पुत्र सो जने सदीव। पूरव अघ को उदय अतीव।
सुत को मरण महा दुखदाय। कोके दुख निमित्त नहिं थाय॥
एक समय जोगीन्द्र गणेश। वनमें थित लख सेठ सुधीश।
भगति सहित कर युग धर भाल। करि प्रणाम पूछो गुणमाल॥
स्वामी मेरे पुत्र समत्थ। गेह भार धारन समरत्थ।
हो यक नहीं कहो निरधार। हे मुनीश तुम हो जग तार॥
तब मुनि सेठ प्रतें इम कही। तेरे पुत्र होयगा सही।
वैन सुने मुनिके इह भाय। सेठ तबै बोलो हरषाय॥
हे मुनीश होगो तो कबै। सुनि के मुनिवर भाषो तबै।
काष्टांगार नीति तजि सबै। भूपति कूं मारेगो जबै॥
मृतक पुत्र ताही दिन मांहि। तेरे होय सेठ शक नांहि।
ताके धरबे हेत सुजान। जैहै तू मसान भू थान॥

तासु मसान विषै थितधार। राजपुत्र पासी गुणकार।
ताके पुण्य थकी तो गेह। पुत्र एक होसी शुभ देह॥
ऐसी सुनकर हर्ष बढाय। तिष्ठत भयो गेह निज आय।
जावत भारवाह अज्ञान। नृपकूं पहुँचा यो जम थान॥
ताही दिवस सुनंदा नारि। जायो मृतक पुत्र दुखकार।
पिता आदि परिजन जन सवै। मृतक देख रोवत भये तवै॥
गंधोत्कट तबही मृत बाल। आप उठाय लियो दर हाल।
प्रेत विपन माहीं जब गयो। भूमि खोद बालक धर दयो॥
पुनि पुनि बचन सुमर सुखकार। बालक ढूंढन कूं तिहिवार।
महा भयानक बनमें वीर। ढूंढत भयो वणिक पति धीर॥
वाल मात युत लख बनथान। मुनि के वचन किये परवान।
सत्य बचन परगट अविलोय। अचल वचन को निश्चय होय॥
रानी लखो सेठ गुणवान। देवी के वच करि परवान।
हर्ष विषाद सहित नृप नारि। रानी होत भई तिहवार॥
सेठ तवै बोलो तिहिवाल। कोतूं कितते आई हाल।
या मसान में आधी रात। क्यों तिष्ठत सो कह तू बात॥

॥ दोहा ॥

भ्रात सत्यंधर भूप की, मैं रानी निरधार।
आई यंत्र प्रयोग तें, पुत्र जनो सुखकार॥
हे भ्राता तू कौन है, किस कारन यहाँ आय।
आधी रात मसान में, मोसु कहु समझाय॥

॥ चौपाई ॥

मैं गंधोत्कट सेठ उदार । नार सुनंदा मेरे सार ।
मृतक पुत्र सो जने सदीव । अशुभ कर्मको उदय सदीव ॥
हे रानी तानें इस काल । प्राण रहित उपजायो बाल ।
ताके धरबे को वन माहिं । आयो या अवसर शक नाहिं ॥

॥ पद्धड़ी छन्द ॥

रानी उपाय का लख अभाव । देवी की प्रेरी धर सुभाव ।
राजा की मुदरी सहित बाल । दीनो जु सेठ गोदी विशाल ॥
तब सेठ लियो बालक महान । रोमांचित हूवो हर्ष आन ।
ईंधन ढूंढन नर मणि सुदेख । हर्षित किम होय नहीं विशेष ॥
बालक ले सेठ चलो उदार । 'चिरजीव' मात इम वच उचार ।
अमृतवच सुन यह विधि ललाम । जीवक याको धर है सुनाम ॥

॥ चौपाई ॥

सेठ गयो निज घर सुखमान । श्रेष्ठ क्रिया में निपुण महान ।
निज नारी में क्रोध कराय । युक्ति वचन सो कहे बनाय ॥
हे बाले जीवित सुत येह । जन्म कष्टतें मूर्छित देह ।
पर्न पुत्र तब याहि निहार । कैसे मृतक कहो वर नार ॥
इम निन्दा कर पुत्र अनूप । दियो सुनंदा को वर भूप ।
सर्व सुलक्षण पूर्ण गात । अवयव अंग सकल अवदात ॥
नंदन लियो सुनंदा नारि । लख कीनो आनंद अपार ।
प्राण समान पुत्र है सदा । मृतक जियो ताको पुन कहा ॥

बाजे बाजत विविधि प्रकार। नारी गावें मंगलाचार।
इह विधि सुतको जन्म उछाह। करत भये सो नाम जनाय॥
प्रथम जीव वच माता चयो। मृतक प्राण धारक पुन भयो।
यातें जीवंधर तसु नाम। धरो सुजनमिलि सब अभिराम॥

॥ दोहा ॥

यह वर्णन इस थल रहो, आगे सुनो सुजान।
लीनो काष्ठांगार ने, राज महा सुखखान॥
ताही दिन वा दुष्ट ने, मनमें कियो विचार।
हर्ष विषाद सुकौन के, कर लावे निरधार॥
नगर माहिं घर २ विषै, लखो शोक तिंन जाय।
गंधोत्कट के हर्ष बहु, कहो नृपति सों जाय॥
विमल चित्त है सेठ की, ताको भूप बुलाय।
मूरख फिर पूछत भयो, ह्वै आकुल अधिकाय॥

॥ सोरठा ॥

सेठन के सरदार आज रयन किस अर्थ तें।
उत्सव कियो अपार दीनन कूं बहु तृप्त कर॥

॥ चौपाई ॥

नृप के अंतरंग की जान। तब श्रेष्ठी बोलो बुधिवान।
राज्य लाभ तुमको अविलोय। कहो कौन के हर्ष न होय॥
पुन मेरे सुत उपज्यो सही। कैसे हर्ष करों मैं नहीं।
किसके कनक न ह्वै सुख हेत। वहुरि लसै सो रतन समेत॥

वचन सेठ के सुन इम जबै । हर्षित चित हो बोलो तबै ।
मानत भयो मुनिज पर अर्थ । मोह कर्मवश भयो कदर्थ ॥
मन वांछित वर सेठ सुचेत । मांगो तुम अब निजहित हेत ।
कियो राज को उत्सव सार । यातैं मन हरषो निरधार ॥

अडिल्ल

नृप के वच सुन के उर में हर्षित भयो ।
उरमें कर सु विचार तबै ऐसे चयो ॥
शुभ कुल के बालक उपजे पुर में जिते ।
वढन हेत परवार सहित दीजे तिते ॥

॥ चौपाई ॥

तब राजा की आज्ञा पाई । पंच सतक बालक सुखदाई ।
माता पिता मित्रन श्रुतसार । पाए सेठ तबै निरधार ॥
सब बालक परवार समेत । प्रीति सहित ल्यायो सुख हेत ।
अपने घरके निकट बसाई । घर धन आदि देय बहु भाई ॥
तिन कर अतिहि लडायो बाल । दिन २ बढ़त भयो गुणमाल ।
मात पिता को हर्ष बढ़ाय । दुतिया शशि ज्यों उदय बढ़ाय ॥
बोलैं सिथिल गति वच तुतलाई । सकल बालकन सहित रमाई ।
जैसे राजत नाग कुमार । तैसे शोभित बालक सार ॥
आप हँसे सबको हँसवाई । कबहुँक पीठ रहै सुख पाई ।
करैं बालकन सों अति प्रीत । कबहुँक लड़ै करै विपरीति ॥

* दोहा *

ऐसे सुखसों निवसतै, जनौ सुनंदानंद ।
नंद नाम सब सुतनकों, उपजावत आनन्द ॥
निकट सुवर्ती नन्द युग, तिन करि सेठ महान ।
महा सोभ धरतो भयो, उरमें बहु सुख मान ॥
जैसे शशि सूरज थकी, शोभित मेरु उदार ।
अति दुर्लभ सौभाग्य है, जगत विषै निरधार ॥

* मरहठा छंद *

दोनों पुत्र पाँचसौ बालक सहित सेठ गुणवंतौ ।
शुभ वसन और नाना विधि भूषण तिनकर अति शोभंतो ॥
निर विघ्न भोग भोगत सुखकारी जातो काल न जानै ।
'जय नंद वृद्ध' ऐसे वचनन कर वंदी जन थुति ठानै ॥

॥ द्वितीयोऽध्यायः समाप्तं ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ गीतिका छंद ॥

श्री अजितनाथ जिनेन्द्र के, युग चरण कमल जु उर धरौं ।
कर जोर युग धर शीश पै, मैं भावसों प्रणमन करौं ॥
जीते अजीत सु कर्म बैरी, अखिल मन पुनि वश किया ।
शोभित सलक्षण गज तनो, तिन देखतें हुलसे हिया ॥

* दोहा *

अब आगे विजया तनो, सुनो कथन उर धार ।
निष्ठुल मन गुवन विषैं, धारत शोक अपार ॥
देवी तब सिद्धारथा, भने वचन शु अशेष ।
तिन कर प्रतिबोधन भई, हित धर हिये विशेष ॥

॥ चौपाई ॥

हे सुन्दर तो भ्रात महान । देश विदेश तनो पति जान ।
नृप गोविन्द अबै विख्यात । प्रभुता सकल धरैं अवदात ॥
चलो संग तुम हर्ष उपेत । ता घर धरों तोहि सुख हेत ।
अतिशय करि प्रियनकूं जोय । पिताग्रेह में शरनो होय ॥
नाम वचन सुन रानी तबै । बड़ी बुद्धि करि बोली जबै ।
भक्ति सहित भ्राता अभिराम । हे देवी मेरे किन काम ॥
गई सर्व लक्ष्मी पुनि देश । विविध प्रकार गये सुख वेश ।
पाप उदय से सबको नाश । रहैं कहा अब भैया पास ॥
जोलों पाप उदय को घात । मेरे होय नहीं विख्यात ।
तौ लग निरजन वनके माहि । मोकूं रहना है शक नाहि ॥

अडिल्ल

पाप भार वेष्टित जे जीव जहान में ।
निज सुख हेत विचार जाहि जिहि थान में ॥
तहां अनेक प्रकार अंश मिल ही मही ।
बैठ ज्यों खल्वाट नारियल तल सही ॥

॥ चौपाई ॥

पाप सहित जे नर जग मांहि। तिनकूं शर्म एक छिन नांहि।
जैसे मृग बन में निरधार। सिंह थकी पीड़ित दुखधार॥
अशुभ उदय प्राणी के आय। सब सुख सहजै विनशही जाय।
हे देवीं तुम जानो जहाँ। रावण आदि पराभव लहा॥
पाप बंध तें सब जग जीव। दुख अनेक विधि लहे सदीव।
फेर पाप ही ठाने तेह। देखो जग विचित्रता येह॥
कोई किसीका नहिं जगमांहि। सुख दुख आप सहे शक नांहि।
यातें भ्रात आदि की आश। कहा करो मोसूं प्रकाश॥
ज्ञान सहित बच सुनिके सुरी। अति संतुष्ट भई तिही घरी।
हे रानी मेरे सुन बैन। राखों बन आश्रम तोहि ऐन॥
ऐसे कह विमान बैठाय। दंडक बन मांही ले जाय।
तापसीन के आश्रम पास। रानी कूं थापी सुख राश॥
गई सुरी निज घर हर्षाय। रानी तापस वेष धराय।
तापसीन के आश्रम पास। तपको मिसकर करत निवास॥
रानी निज मन मंदिर विषै। जिन पद पकज राखे अखै।
जुत विवेक चित्त जिनको थाय। दुखमें तिनको तत्व जगाय॥
निर्मल व्रत पालत हित आन। जपत मंत्र नवकार महान।
रानी मिथ्या भाव न जाय। तापस आश्रम निकट रहाय॥
हँसतूल की सेज मझार। आगे सोवत थी नृप नारि।
सो अब कठिन डाभकी शयन। तापर सोवत है सब रयन॥

मोदक आदि अन्न सुख हेत । भोजन करती हर्ष उपेत ।
वनके पत्र हाथ तैं ल्याय । विधि वशतैं सब अशन कराय ॥
कोमल वस्त्र अमोलक सदा । आगे जे पहिरे थी मुदा ।
विधि विपाकतैं सो नृपनारि । जीरन फटे वस्त्र तन धारि ॥
ऐसे रानी काल वितीत । करत धर्म सेती अति प्रीति ।
कर्म शुभाशुभ कीनो जोय । भोगे विनते जाय न सोय ॥

॥ दोहा ॥

इह तो कथन यहाँ रहे, आगे सुनो बखान ।
लोक विषै अति प्रगट है, रूपाचल श्रुति मान ॥
अपनी शोभा करहि ज्यों, चंदकिरण अमलान ।
ताकी उपमा कहन कूं, समरथ को बुधवान ॥

॥ चौपाई ॥

पूरब पश्चिम उदधि में जाय । दोऊ अनी समुद्र मिलाय ।
भरत क्षेत्र नापन कूं जान । मानूं शोभे दंड समान ॥
भरत क्षेत्र के बीच उदार । है पचास योजन विस्तार ।
उन्नत जोजन है पच्चीस । शोभित है मानूं अवनीश ॥
गंगा सिन्धु नदी सुमनोग । तिन निकसनकूं गुफा नियोग ।
युग युगकुल नीचे सुनकरी । किधौं जगत निगलै वैं खरी ॥

॥ अडिल्ल ॥

भूतल तैं दश जोजन उन्नत लसत है ।
युग श्रेणी दुहुं ओर विद्याधर बसत हैं ॥

सुरग गमन के हेत कियो ये सार जू।
धारत है युग पँख महान उदार जू॥

॥ दोहा ॥

दोनों श्रेणी के विषै, खेचर नगर उदार।
एक शतक दश वसत हैं, ज्यों गल मोती हार॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

इनसूं दश योजन और तुंग। श्रेणी युग राजत है अभंग।
किल्विष देवन के पुर वसंत। दिवके नगरन को मनु हसंत॥
इनसूं उन्नत जोजन सु पाँच। पर्वत मस्तक पर लसत साँच।
नौ कूट तहाँ शोभित अभँग। मानौ परवत के करि उतंग॥
जोजन सुसवाछह व्यास मूल। उन्नत इतनै ही जान सूल।
इनतैं आधो है व्यास भार। ऊपर के भाग कहो विचार॥
पहिलो सु कूट है सिद्ध नाम। ता मांहि सिद्ध प्रतिमा ललाम।
आवत जहाँ चारणमुनि समाज। सुरनर आवत जिनदर्श काज॥
पर्वतको कंद सुनो सुजान। जोजन सुसवाछै तसु प्रमान।
अवनी पर्वत शोभत अतीव। खेचरगन विचरत तहाँ सदीव॥
ताकी दक्षिण श्रेणी मझार। पुर मेघ नाम शोभित उदार।
खाई प्राकार सहित दिपंत। उन्नत अति ही नभको क्षिपंत॥

॥ चौपाई ॥

द्रव्य मिथ्याती तहां न कोय। द्रव्य कुलिंगी तहां न होय।
मिथ्यादेव भ्रांति करतार। तहां कहूँ दीसे न लगार॥

तीन वरण की परजा बसैं । तीन पदारथ साधन लसैं ।
धर्म ध्यानमें रत सब लोक । त्रिभुवन के सुख भोगत योग ॥
जहां के उपजें सज्जन परम । मूर्तवंत साधत जिनधर्म ।
और धर्म मेंये नहिं करैं । स्वप्नांतर में भी नर सबैं ॥
लोकपाल तहां लसत महीश । खेचरगण नावत निज शीस ।
सज्जन को आनन्द करतार । लोकपाल मनु देव कुमार ॥
पुर की रक्षा करत नरेश । सुर पुर की जैसी अमरेश ।
सभा विषै बैठे बुधिवान । लसत भूप सो इन्द्र समान ॥
ताके प्रिया गोमती नाम । गंगा गुण सब धरत ललाम ।
भले गुणनिके गण करि भरी । ज्यों कंदर्प के रति अति खरी ॥
तिनके पुत्र सुमति बुधिवान । सत्पुरुषन को बुद्ध समान ।
सकल कलामें अति परवीन । महा प्रतापवंत गुण लीन ॥
लोक पाल भूपाल विनीत । सकल प्रजा पाले करि नीति ।
भोगत भोग अनेक प्रकार । युग इन्द्री मन सुख करतार ॥
इक दिन बैठे झरोखे राय । दशूं दिशा देखत हर्षाय ।
बादल को इक महल अनूप । देखो जगत विषै वर रूप ॥
सुन्दर वरन किसो इम सार । उन्नत है अति ही मनुहार ।
देखी इह की कांति विशेष । ऐसे विस्मय करत नरेश ॥
इस बादल गृह के आकार । श्री जिन भवन कराऊँ सार ।
तौलों इम चिन्तो भूपाल । तौलों विनश गयो दर हाल ॥
ताहि विनशो देख नरेश । जगतें भयो उदास विशेष ।

देह भोग अरु इह संसार । है अनिष्ट अति महा भयकार ॥
देखत देखत ही जिम एह । नाश भयो बादर को गेह ।
तैसे सुत नारी परवार । क्षण भँगुर सबही निरधार ॥
जोबन गगन नगर आकार । पंडित जन भाषैं निरधार ।
लक्ष्मी विद्युत वेग समान । इन्द्र चन्द्र चक्री की जान ॥
जल के फुलका सम है देह । समय मध्यान छांह सम नेह ।
विषय सुख जल भवर समान । बिनसत वार न लगे सुजान ॥
तडित समान विभूति उदार । श्याम नागवत भोग निहार ।
मेघ समूह तुल्य यह राज । क्षण भँगुर सब जान समाज ॥
दूनो नृप वैराग्य बढ़ाय । सुमति पुत्रको निकट बुलाय ।
धरत भानु सम कांति अपार । ताकूं राज दियो निज सार ॥
ज्ञान उदधि मुनि निकट महीश । बनमें जाय नाय निज शीस ।
द्विविधि परिग्रह त्याग प्रमान । जिन दीक्षा धारी अमलान ॥
सुगुण सुभाव सहित तप करे । कोमल भाव हृदय में धरे ।
याते गुरु आदिक मिल सबै । आरज नंद नाम धर तबै ॥

॥ दोहा ॥

पँच महाव्रत पुन समिति, तीन गुप्ति सुखकार ।
तेरह विधि चारित्र शुभ, हर्ष सहित तिन धार ॥

॥ चौपाई ॥

आर्य नंदि मुनि करत विहार । पहुंचे पद्म नगर इक बार ।
वसुदत्त सेठ ग्रेह बुधिवंत । अशन निमित्त गये मुनि संत ॥

वसु कांता तियजु तिहिवार । आये देखे मुनिवर द्वार ।
'तिष्ठ २' इम वचन कहाय । पड़िगाहे श्री मुनि हर्षाय ॥
ऊँचे आसन बैठे ठाय । चरण कमल धोये सुख पाय ।
आठ द्रव्य ले पूजा करी । नमस्कार करि अस्तुति करी ॥
मन वच काया त्रयकर शुद्ध । दोष रहित पुनि अशन जु शुद्ध ।
इह विधि नवधा भक्ति कराय । करत भयो वसुदत्त सुआय ॥
सरधा दिक गुण सात उपेत । मुनिको दियो अशन शुभ हेत ।
तबही महां विघन करतार । आयो बिलाव एक तिहिवार ॥
वसु कान्ता बिलाव कूं देख । तबही महा भयधार विशेष ।
नये ग्रेह में मूंद सुदयो । बिन जाने मुनि भोजन ठयो ॥
भोजन कर मुनि वनको गये । ध्यान विषै चित धारत भये ।
मूंदो बिलाव बिसर सोगयो । भूख वेदना तिनि अति भयो ॥
क्षुधा वेदना कर दुख पाय । पाप उदय ताको भयो आय ।
इतर उपल को चूनो लग्यो । दही जान ताने सो भख्यो ॥
ताकी गरमी कर दुख लह्यो । उदर भस्म ताको तब भयो ।
सहित अकाम निर्जरा सोय । मरो बिलाव सु आकुल होय ॥
अकाम निर्जरा योग पसाहि । भई वितरी तिस वन माँहि ।
अंतर्मुहूर्त विषै तिहिवार । भई विभंगा अवधि अपार ॥
अवधि विभगा तें तिन सबै । पूर्व वृत्तान्त जान के सबै ।
ता मुनि के ऊपर तिहकाल । कियो कोप तिहने ततकाल ॥
इतर उदर उन फोनो तबै । याको उदर जराऊँ अबै ।

इह विधि मनमें करत विचार। मुनिके निकट गई तिहिवार ॥
रे मुनि तैं विलाव गति माँहि। पीड़ा मोहि करी अधिकाय।
सो प्रति वैर लेहुंगी अबै। कही विंतरी ऐसे तबै ॥
भस्म व्याधि कर मुनि की देह। गई विंतरी अपने गेह।
कियो कर्म जीवन कूं सही। अवश्य भोगनो संशय नहीं ॥
अल्प सु तप करके अवलोय। कर्म विनाश न समरथ कोय।
आलो काठ बावरी माँहि। अग्नि कना किम भस्म कराय ॥
भस्म व्याधि के वशतें मुनी। तृपति कहा धारै नहिं गुनी।
सनमुख सेन समूह जु होय। सुख इच्छा कर सोवे कोय ॥
सब श्रावक के घर आहार। ता करि तृप्त न होय लगार।
बहुत नदीन को लेकर तोय। सिन्धु कहां सु तृप्तता होय ॥
तब चिन्ता करि दुखित अपार। ऐसे मनमें करत विचार।
कहा करों तिष्ठौ किहि थान। कहाँ जाऊँ अघ ठगौ महान ॥
जो मैं मुनि का वेष धराय। स्वेच्छाचारी होय अघाय।
तो पापिन को मैं सरदार। होहूँ मैं संशय न लगार ॥

* दोहा *

किये पाप परमत विषै, जीव कपट धर भूर।
जो शुभ जिन मतके विषै, निहचै होहैं दूर ॥
जिन शासन में अघ कियो, सो परमत के माँहि।
छूटत नहीं कदापि वह, वज्र लेप हो जाँहि ॥

अडिल्ल

पाप उदय जौलौं जीवन के अनुसरैं ।
तौलौं उग्र तपस्या कैसे विधि धरैं ॥
धर्म कार्य के विषै अनेक प्रकार जू ।
होन अनेक विघन संशय न लगार जू ॥

॥ दोहा ॥

निरमल जिन शासन विषै दोष न लगै लगार ।
सो कारज करनो मुझै पाप पंक भय धार ॥

॥ चौपाई ॥

जौलौं भस्म नाम इस रोग । मिटै नहीं मेरे असनोग ।
तौलू जिन मुद्रा तज सार । उदर भरौं अपनो निरधार ॥
करि विचार ऐसे चिरकाल । अल्प राज सम तपनज हाल ।
विधि प्राचीन जीव अनुसरै । ताकूं कर्म कहा नहीं करै ॥
परिव्राजक को धरके भेष । विचरत भयो सु भूमि अशेष ।
कभि इक भिक्षुक रूप धरंत । कभि इक नग्न होय विचरंत ॥

अडिल्ल

वर्णी को धर भेष देश पुर ग्राम में ।
करनाट देश मदंव ढोग शुभ ठाम में ॥
पट्टन वाहन आदिक जे जहँ सवैं ।
इन हेतु सो तिनमें ज्ञान भयो तवै ॥

॥ चौपाई ॥

पाखंडिन के रूप अशेष। घर घर पुर पुर भ्रमै विशेष।
पक्क अपक्क अन्न सुख हेत। भक्षण करे सुशाक समेत॥
इच्छा भोजन करतो फिरै। भस्म व्याधि सूं तृप्ति न धरै।
धर्म रहित नहिं तृप्ति लहाय। ज्यों समुद्र जलसों न अघाय॥
देश अनेक विषै भरमंत। इक दिन आरजनंदी संत।
आयो राजपुरी के पास। निज अघकर्म करत परकाश॥
एक दिवस अति भूखौ भयो। गंधोत्कट के मंदिर गयो।
भस्म रोग है अति दुखदाय। ताके नाश हेत उमगाय॥

अडिल्ल

धर्मवंत पुरुषन कूं धर्मीजन सही।
शरणा है निरधार अपर कोई नहीं॥
स्व स्वभाव कर धर्मवंत नर को सदा।
कुलवंतौ नहिं दोष धरैं मन में कदा॥

॥ चौपाई ॥

गयो सेठ के आंगन धाय। जप नवकार थयौ सुख पाय।
भोजन देहु मोहि इम कही। जिनमत को मैं भोजक सही॥
तब घरमें जीवंधर नाम। सकल सुतनमें अति अभिराम।
द्रग विशाल देखो अवदात। जानत सो पर मन की बात॥
जीवंधर याकूं तब देख। साधर्मी जानो सु विशेष।
ताकी भूख हरन के हेत। उदित भयो सु हर्ष उपेत॥

याके भोजन हेत कुमार। माता दिक कूं वचन उचार।
बहुत दिवस को भूखो एह। याकूं अशन वेग ही देय॥
हर्ष उपेत सुनंदा मात। बैठायो थानक अवदात।
तृप्ति हेत पूरा भरथार। दीने याकूं कर मनहार॥

❀ अडिल्ल ❀

मांडे अरु पक्वान्न विविध घृत के भले।
मोदक मिश्री दाल भात घृत सों रले॥
दही दूध पुनि व्यंजन विविध बनाय के।
सुत की भैंरी ताहि परोसी ल्याय के॥

॥ सोरठा ॥

तृप्त न लखो लगार, घोटक ऊंटन के सबै।
दाना लाय कुमार, धर दीनों ताकूं तबै॥

॥ दोहा ॥

दानो सब खायो तदै, तृप्ति न भयो लगार।
तब उर में अचरज कियो, जीवंधर सुकुमार॥

॥ गीतिका छंद ॥

फिर सकल अन्न जु लाय याकूं दियो घरको लाय के।
तो भी अतृप्त निहार ता को जीवंधर पुन जाय के॥
एक ग्रास अपने दियो भोजन भयो तृप्त सो वह नहीं।
जिमि उदधि अखिल नदीन के जलतें अघावत है कहीं॥

॥ चौपाई ॥

सर्व अन्न खातो तिस देख । सकल त्रिया तब हँसी विशेष ।
पूवा आदिक और मंगाय । दिये सुनंदा ने उमगाय ॥
अहो कृतान्त यहै निरधार । कै पिशाच राक्षस सरदार ।
कै व्यंतर खग विद्या धरै । भस्म रोग युत कै यह फिरै ॥
यातें नहीं मनुष यह जीव । सकल घरनको अन्न अतीव ।
खायो तृप्त भयो नहीं तबै । ऐसे कहत त्रिया मिल सबै ॥
सर्व घरन भोजन कर लिये । 'और देहु' इम भाषत भये ।
अघ कर जो नर पीड़ित होय । आशा उदधि भरे नहिं कोय ॥
देहु देहु इम बचन भनंत । निकट आय जब कुमर तुरंत ।
अपने करसूं ग्रास उठाय । दीनो भिक्षुक कूं सुख पाय ॥

* दोहा *

एक ग्रास के स्वाद तें, भूख गई पुन ताहि ।
अहो पुन्य अतिशय लखौ, आशा उदधि भराय ॥

॥ चौपाई ॥

पुन्यवंत के कर संजोग । भस्म रोग नासो अमनोग ।
पुन्यवंत की संगत पाय । शुभ कारज कूं को न लहाय ॥
नाश भयो मुझ रोग अवार । तपसी ने कीनो निरधार ।
कुमर पुराय को कारण येह । महा चतुर गुण भूषित येह ॥
व्याधि नाशतें में तप घोर । पूरववत करिहों अघ तोर ।
साधोंगों मैं अब निरधार । पद निर्वाण अखिल सुखकार ॥

कुमर महातम है यह सबै । मैं निहचै कीनो मन अबै ।
इन मोपै कीनो उपकार । कारण विना कर्म क्षयकार ॥
यह कुमार उत्तम गुण खान । यातैं प्रत्युपकार महान ।
कहा करों मैं हौं धन हीन । ऐसे चितवन करत प्रवीन ॥
उपकारी हम महा प्रमान । इनकूं विद्या देऊँ महान ।
त्रिभुवन जोग बहु फल दातार । निरभै महा योग निरधार ॥
विद्या देउं याकूं मैं अबै । दुद्धर तप आराधों तबै ।
मित्र भाव यासूं उपजाय । ऐसो मनमें करूँ उपाय ॥
आरजनंद पलट निज भेष । उरमें धार सनेह विशेष ।
गंधोत्कट के घर तब गयो । सार वचन पुनि कहतो भयो ॥
सुनो सेठ पुण्यवंत महत । जीवंधर आदिक सब संत ।
पुत्रन हैं जे सुत सु मनोज्ञ । पाठ पढावे भये सुयोग्य ॥
पुत्रन के गुणढावे काज । वांछा होय जु वाणिज राज ।
तो मोहि आज्ञा दीजे अबै । पुत्र पढाऊँ तेरे सबै ॥
मुनि के वचन सुने हितकार । बोलो सेठ हर्ष उर धार ।
पित्त सहित जो होय शरीर । क्यों न पिये मिश्री पय वीर ॥
जीवें विद्या बिन जे जीव । ते हैं मरण समान सदीव ।
बिना सुगंध सुमन केहि काज । भयो न भयो सुनो मुनिराज ॥
विद्या मनुषन को निरधार । सुख सौभाग्य मान करतार ।
चंद्र चांदनी सूं जिमि रैन । अति शोभित मन हर्ष सुदेन ॥
मेरे पुत्रनिकूं मुनिराय । अर्थ सहित सब शास्त्र पढाय ।

इन मुनि सो दीनो उपदेश । प्रीति भार धर हिये विशेष ॥
शुभ दिन जिन मंदिरमें जाय । भक्ति सहित जिन पूज कराय ।
भले सुतन कूं पढ़ने हेत । सौंपे इनको हर्ष उपेत ॥
विघन रहित शुभ सिद्धि निमित्त । सिद्ध भक्ति करके शुभ चित्त ।
ॐ नमः सिद्धं पाठ सुखकार । प्रथम पढ़ावत भयो उदार ॥
मात्रा विद्या प्रगट ललाम । वरणन की पुनि लिपि प्रधान ।
लक्षण छंद भेद शुभ नाम । एकादिक गिनती अभिराम ॥
अलंकार अरु तर्क पुराण । ज्योतिष वैद्यक शास्त्र महान ।
बाजी रत्न परीक्षा सार । सामुद्रक नृप नीत उदार ॥
और परीक्षा गज की सबै । जीवक आदि सुतन कूं सबै ।
उरमें अधिक सनेह बढ़ाय । विद्या विविध प्रकार सिखाय ॥
सुश्रूषा पुन विनय अपार । भोजन आदि सनेह उदार ।
सेवा आर्यनंदि गुरु योग । जीवक करत भयो सुमनोज्ञ ॥
प्रीति शिष्य की जान विशेष । पूर्व कथित विद्या सुअशेष ।
ताहि पढ़ावत भयेजु तेह । कामधेनु सम है गुरु नेह ॥

॥ कवित्त ॥

जीवंधर सुकुमार शोभतो भयो अवनि में ।
विद्या पढ़ो अनेक अर्थ सब जानत मन में ॥
श्री जिनधर्म अनूप ताहि जानत हितकारी ।
भोगत भोग सदीव बुध सुरगुरु सम भारी ॥
आर्यनंद को मोह अधिक जानो जीवंधर ।

तातें गुरु पर स्नेह अधिक कीनो सु कुंवर वर ॥
जगमें ज्ञान विशेष मोह गुरुजन को भारी ।
करे मोह नहिं कौन तास पैं जगत मंझारी ॥

॥ सवैया ॥

कबही तो लक्षण की चरचा करैं कुमार,
कबही गणितकार छंद को रचे विचार ।
कबही तर्क ग्रंथ पढ़त पुराण सार,
कबही सुराज नीति नाटक नाना प्रकार ॥
कबही गावत राग मधुरी सुवाणि कर,
रचत संगीत सार बाजेहु बजाय वर ।
पिता गुरुजन भ्रात सबही सूं प्रीति धर,
दिन दिन प्रमोद कूं करत विस्तार पर ॥

॥ इति तृतीय सर्ग. ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

❀ श्री संभवनाथ स्तुति ❀

॥ लीलावती छंद ॥

संभव जिनंद हैं जगत चंद, शोभा अमंद अघ ताप हरो ।
महिमा अनंत भगवत महंत, ध्यावत सुसंत उर ध्यान धरो ॥
करुणा निधान उचरी सुवाणि, परकाश ज्ञान मिथ्यात हरो ।
करि कर्म नाश वसुगुण प्रकाश, करि अचलवास शिव नार वरो ॥

॥ चौपाई ॥

एक दिवस आरज मुनि संत । जीवंधर मुनि निज विरतंत ।
कहतौ भयो सही समुझाय । अति प्रमोद उरमें सरसाय ॥
लोकपाल नामा भूपाल । था मैं पुत्र सुनो गुणमाल ।
हो उदास जिन दीक्षा लई । अघतें भस्म व्याधि पुन भई ॥
व्याधि योग दीक्षा तज सार । मैं आयो तो ग्रेह मझार ।
तेरे कर को ग्रास अनूप । खाते व्याधि गई दुख रूप ॥
प्रत्युपकार हेत उपकार । विद्या तोहि दई सुखकार ।
विद्यमान विद्या सुखदाय । चोरादिक सूं हरी न जाय ॥
विद्या है जगमें सुखकार । और प्रशंसा जोग उदार ।
क्षीर पानवत पुष्ट करंत । विद्या भूषण सम शोभंत ॥

॥ दोहा ॥

विद्या तें आचार सब, कृत्य अकृत्य सुराज ।
हित अनहित जाने सबै, हो सब वांछित साज ॥
सुन गुरु को वृत्तान्त सब, जीवंधर सुकुमार ।
विनय सहित कहतो भयो, विनय सु शुभ दातार ॥

* रोटक छंद *

गुरु की जानी निर्मल ताई । तिनसूं प्रीति करी अधिकाई ।
रतन लहे तें हर्ष बढ़ाय । शुद्ध लहे तें अति सुख पाय ॥
हे स्वामी तुम गुरु हितकारी । रतनत्रय दाता गुण सारी ।
निर्मल आतम व्रत तुम धारी । तुम प्रवीण जगके हितकारी ॥

पात्र देख तुम प्रीति करो हो। निर्मल आतम ध्यान धरो हो।
सब जीवन पै करुणा धारो। भवसागर तें पार उतारो।
धर्मवंत बुधिवंत प्रवीना। आप सुशोभित हो गुण भीना
निर आलसी डरै भव सेती। सो शिष्य गुरु सेवे हित सेती।
गुरु सेवा तें शिव पद लाधै। अल्प वस्तु सो कहा न साधै
रतन अमोलक तें जग मांही। काष्ठभार आवै छिन मांही।

॥ अडिल्ल ॥

गुरु द्रोही सुकृतघ्नी पुरुषन के सबै।
ऐसे गुण सो कोई नसै नाहीं अबै॥
क्षिणमें विद्या जाय न संशय जानिये।
जड़ बिन तरु किम रहे नाथ उर आनिये॥
गुरु के जे घाती अज्ञानी जीव हैं।
सो जगके घाती निहचै अघलीन हैं॥
तिनको नहिं विश्वास द्रोह गुरु सों करै।
औरन सों करते जु द्रोह कैसे डरै॥

॥ चाल छंद ॥

यातें तुम शरन सहाई। हित करता तुम सुखदाई
तुम पिता बहुत उपकारी। तुम सम नहीं जगमें भारी।

॥ चौपाई ॥

शिष्य वचन इमि सुनके सबै। आर्यनंद मुनि बोले तबै
सबसों तुम हित कीजो सदा। अहित कार्य कीजो मत कदा

पंच उदंबर तीन मकार । आठ मूल गुण ये सुखकार ।
पुन गृहस्थ को धर्म महान । जीवक कूं दीनो सुख खान ॥
पुनि जीवंधर ऐसे कही । अहो प्रभो मैं वानिज सही ।
तोष रोष कर कारज कहा । सिद्ध होय मैं परवश महा ॥
क्षत्रिय कुलमें मोहि समान । होते जे नर अति बलवान ।
तिनकूं दुर्लभ जगत मंझार । कहा वस्तु होवे निरधार ॥
ऐसे वच सुनि आरजनंद । शुभ वच कर संबोधो नंद ।
अब तू भय मत करे महंत । तू न वैश्य क्षत्रिय है संत ॥
जीवंधर तब बोले एम । मैं क्षत्रिय कुल उपजो केम ।
सो तुम कहो नाथ समझाय । तातें मेरो संशय जाय ॥
सुनो वत्स सत्यंधर भूप । जाके विजया नारि सरूप ।
तिनके तूं जीवंधर नाम । पुत्र भयो गुणगण को धाम ॥
भारवाह कर कपट अपार । राज खोस भूपत को मार ।
पुत्र बुद्धि कर सेठ विनीत । तोही उठायो धरके प्रीति ॥
गुरु मुखतें जानो निरधार । नृप को घाती काष्ठांगार ।
ता मारन के हेत कुमार । पहिर कबच कर क्रोध अपार ॥
बार बार गुरु मनै करंत । तो भी शांत होय नहीं संत ।
प्रगटे क्रोध हिये अधिकाय । तबै बिचार कछू न लहाय ॥
दुसह क्रोध जानो मुनिराय । कहत भयो तासूं समझाय ।
क्षमा करो इक वर्ष कुमार । मेरे बच तें अब निरधार ॥
ये ही देउ दक्षिणा शुद्ध । मारो मति तुम पुत्र सु बुद्धि ।

गुरु ने मने कियो इम मांय । गुरु आज्ञा शुध लवै न कोय ॥
कोप गये ताको मुनिराय । परवश देख चित्त में लाय ।
देत भयो नव शिक्षा येन । हित करता है गुरु के बैन ॥

अडिल्ल

क्रोप धनञ्जय प्रथम जलावे आपको ।
औरन को पुनि एह उपावे पाप को ॥
वंशअग्नि जिम दाहत है निज को सही ।
पीछे भस्म करे वन कूं संशय नहीं ॥
करि के क्रोध सु जीव नरक में जात हैं ।
दुखका भाजन होय अधिक बिललात हैं ॥
तू नहि जानत वन्य नरक गति में गये ।
द्वीपायन मुनि आदि विविध दुख कूं लये ॥
हेया हेय विचार चित्त में जो नहीं ।
शास्त्र पढ़न को खेद वृथा संशय नहीं ॥
तंदुल रहित धान का खंडन जो करे ।
हाथ न आवे कछू वृथा श्रम को धरे ॥
वैर विषे जे जीव प्रवरते धर मुदा ।
तत्व ज्ञान सब तिनको निरफल है सदा ॥
दीपक हाथ लिये तें कारज को सरै ।
जानि पूछि मति हीन कूप मांही परै ॥
तत्वज्ञान अनुसार सार कारज करो ।

और प्रकार असार कार्य चित ना धरो ॥
मोहादिक्क जु प्रचंड चार जगमें सही ।
व्याधि रूप धन तिनपै जात हरौ नहीं ॥
लोक विषै जे उत्तम सज्जन हैं जिके ।
कही इक जतन थकी ढूंढ लहिये तिके ॥
जैसे रतन अमोलक कहीं इक पाइये ।
ठौर ठौर है लोह कहा हित ल्याइये ॥

॥ चौपाई ॥

सत्पुरुषनि की संगति पाय । क्षमा आदि शुभ भाव धराय ।
गुण उपजें नाना प्रकार । इस भव परभव फल दातार ॥
सतन के वचनन तें जान । सज्जनता तत्वन को ज्ञान ।
होय अधिक उपजे आनन्द । सुनो वचन मेरे सुखकंद ॥
कइयक नर जोबन मद धार । नाश भये जगमें निरधार ।
ईश्वरता को गर्व धराय । कैयक नष्ट भये दुख पाय ॥

॥ दोहा ॥

कइ इक बहु समुदाय कर, नष्ट भये जग थान ।
तातैं तजो विकार तुम, अहो कुमर बुधवान ॥

॥ चौपाई ॥

देश काल के बल कूं पाय । जब बैरी हतयो दुखदाय ।
राहु काल के वशते सही । कहा चंद्र छवि नाशत नहीं ॥

॥ दोहा ॥

देश काल बल पाय के, शुभ अरि नाश कराय ।
जैसे औषध योग ते, छिनमें व्याधि नशाय ॥

॥ चौपाई ॥

रोग पुरुष मार्गी को होय । शिक्षा वचन रुचै नहिं कोय ।
फूटे पात्र विषै सुविचार । कहो तेज ठहरै निरधार ॥
कारज अंध सुनै नहिं कान । लगै नहीं प्रतिबोध महान ।
भले मार्ग मैं चाले नांहि । जीवन अंध जगत के मांहि ॥

अडिल्ल

यातैं देश सुकाल उपाय करीजिये ।
निज कारज की सिद्धि विषै चित्त दीजिये ॥
और भांति कारज को नाश लहै सही ।
निश्चय सुत शुभवत जान संशय नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

आप आप में आप ही जान । आप काज निज करै सुजान ।
तातैं अपनो गुरु इह जीव । है निरधार सु आप सदीव ॥
इस प्रकार प्रति बोध कुमार । छमा कराई तब ही सार ।
मोह जु पाश काट के मुनी । तप निमित्त उद्यत भयो गुणी ॥
जाय विपन में आरजनंद । गुरु ढिग दीक्षा लई अमंद ।
विनय सहित सामग्री सार । निज कारज कर है निरधार ॥

॥ अडिल्ल ॥

गुरु वनमें जब गयो तबै सुकुमार जू।
करत भयो उर शोक अधिक विस्तार जू॥
गर्भ धारने तैं माता गुरवी सही।
पिता और गुरु शिक्षा तें पूजित मही॥

॥ चौपाई ॥

उत्तम कुल वर वंश मझार। उपज्यो जीवंधर सुकुमार।
गुरु कूं गये सुवन में प्रीति। कहूँ न धारत भयो विनीत॥

॥ कवित्त ॥

पुनि जीवंधर शोक रूप दावानल मांही।
तपत भयो अधिकाय काज कछु नाहि सुहाही॥
तत्वज्ञान जल थकी क्षणिक ही मांहि बुझाई।
अति शीतलता जोग कहा आताप न जाई॥

॥ चौपाई ॥

नक्षत्र माल आदिक्र वर हार। बाजू बंध कड़े मनहार।
कुंडल करि मेखला लसंत। तिनसों कुमर अधिक शोभंत॥
चतुर त्रियन के चित्त मंझार। बुद्धि पुंज सम शोभित सार।
मूरति धर मानो है काम। बुद्धि रूप गुण युत अभिराम॥

कवित्त

ऐसी त्रिया जगत में को जो देख कुमर को रूप अपार।
पीड़ित मदन पाँच शर सेती वेधी गई नाहिं निरधार॥

महा सुभग मन मोहन मूरति ता आगे लाजत है मार।
पूरब पुण्य कियो अति भारी तातें पायो शुभ आकार॥

॥ दोहा ॥

कबहूं जल क्रीडा करे, मित्रन सहित उदार।
रमें रम्य थानन विषे, सुरपति वत निरधार॥

॥ चौपाई ॥

कबही रथ में हूं असवार। कबही शिविका बैठ कुमार।
कबही घोडे चढ़ें सुधिवंत। राज मार्ग में गमन करंत॥
अब आगे याही पुर पास। गोकुल तहाँ बसै सु निवास।
उत्तम गोकुल सुत शोभंत। चौपद विविध तहाँ निवसंत॥
नंद गोप तहां ग्वाल महान। सकल ग्वालन में परधान।
गोदावरी ताम घर नार। तिनके सुत गोपाल उदार॥
गोविन्दा तिनके वर सुता। शुभ लक्षण भूषित गुण युता।
सकल कुटुंब के मन कूं हरे। कमला सम ते शोभा धरे॥
एक दिवस मिल भील अशेष। आन हरी तिनि गाय विशेष।
भए पर अंध होय जो जीव। कहा पाप कर है न सदीव॥
गये भील गोधन ले सबै। व्याकुल भये गोपगण तबै।
जाय भूप के सदन मझार। सबही करत भये सु पुकार॥
स्वामी भूप हमरी सब गाय। हर ले गये भील बहु आय।
ऐसे ग्वालन करी पुकार। सुनके तबै जु काष्टांगार॥
कियो क्रोध उरमें विकरार। ताकर कंपित भयो सुगात।

दुरजन करि कीनो अपमान। कैसे सहे पुरुप पर धान ॥
भीलन के जीतन के हेत। सेना भेजी नृपत सु चेत।
वेढि लियो भीलन को साल। करन भये जु युद्ध चिरकाल ॥
गिरि के ऊपर तें जु किरात। बानन की वर्षा जु करात।
तिन कर भारवाह की सेन। भई जर्जरी लहो अचैन।

अडिल्ल

छोड़े बाण समूह भील धनु तान के।
लगे शीस मुख चरण नाक उर कान के ॥
तिनकर पीड़ित होय फेर भूपर परे।
भारवाह के वीर महा दुख ते भरे ॥
गेरत भये पापान भील हुंकार के।
वीरन के सिर छिदे परे मन मार के ॥
डारे वृक्ष उपाड़ भूप के नरन पै।
तिन कर टूटी पीठ गिरे पुनि धरन पै ॥
इह विधि सवही सेन चित्त व्याकुल सबै।
भीलन को परचंड जान भाजे तबै ॥
उर में भये उदास महा दुख पाय के।
आये उलट सिताब आप पुर धाय के ॥

* चौपाई *

नृप सेना की हार निहार। नंद गोप उर माँहि विचार।
अपने थानक को वल ठान। कुंजर सूं डरपै नहिं स्वान ॥

उदर पूर्णा गई सो सबै । कहा करूँ कारज में अबै ।
बिना द्रव्य नर है जग माहि । जीरण तृण सम संशय नाहि ॥

कवित्त

द्रव्य उपारजन काज कुशल प्रानी जे होई ।
सुख धन को नहि पार क्षेम संशय नहिं कोई ॥
दिन दिन बढ़े सु रिद्धि होइ आनन्द अपारा ।
दुख को होय विनाश द्रव्य करि के निरधारा ॥

* दोहा *

द्रव्य बिना प्रानीन को, जीवन निष्फल जान ।
अब मेरे धन क्षय भयो किम जीऊँ जग थान ॥

॥ चौपाई ॥

वृथा शोक करके अब कहा । शोक पाप उपजावन महा ।
पाप थकी दुख होय अतीव । तातें तजनो पाप सदीव ॥
धनार्जन को उपाय पुनि सार । यथा शक्ति कीनो निरधार ।
कियो उपाय सरै सब काज । ऐसे कहत पूर्व ऋषि राज ॥
ऐसे करि विचार तत्काल । करत भयो उपाय दर हाल ।
निज कारज अर्थी नर जान । दीरघ दर्शी होत महान ॥
नंद गोप पुनि नगर मझार । दई घोषणा इस विधि सार ।
जाय भोग जोनि जो सबै । ताको देऊँ सुता निज अबै ॥
सो घोषणा सुनी महान । कई इक छत्री उठो सुजान ।
ऐसो भूमि विषे नहि कोय । मरने कूं जो प्रापत होय ॥

जीवक अपनी मति कर गैन। भीलन की बेढ़ी सब सेन।
खड्गबान मुद्गर पुन गदा। तिनकर करत भये रण तदा॥

॥ अडिल्ल ॥

मार बहुत किरात कुमर निज बाण तैं।
कितेक भये उदास डरपि निज प्राण तैं॥
जैसे सिंह निहार मतंगज भय करे।
तैसे कुमर विलोक शबर अति ही डरैं॥
फेर संभल के भीलन रण कीनो जबै।
छांडे शर पाषाण भजी सेना तबै॥
निज सेना लख भंग लाल लोचन किये।
उठो कोप कर भ्रात पंचशत सँग लिये॥
किये खड्ग कर खंड शबर केई जबै।
प्राण छोड़ छिन मांहि गये जमग्रह तबै॥
गदा घात कर चूर्ण शबर केई भये।
वज्रपात कर किधौं अचल खंडित भये॥
होय अधोमुख परे भूमि केई नरा।
कइयक आकुल होय परे लोटें धरा॥
कइयक मूर्च्छा खाय अवनि ऊपर परें।
जैसे गरुड़ निहार भुजंग भाजैं खरे॥
पुनि करिके चिरकाल युद्ध जीवक सुधी।
कर उपाय बहु भांति भील नायक कुधी॥

जाको नाम कुरँग विदित सब खलक में ।
निज मति बलतें बाँध लियो जिन पलक में ॥

॥ चौपाई ॥

जीवंधर की सेन मझार । हर्ष सहित जय शब्द उचार ।
पुण्यवान पुरुषन को लोय । दुर्लभ वस्तु कौनसी होय ॥
भील कुरंग नाम सरदार । ताकूं छोड़ दियो सुकुमार ।
बड़े नरन को कोप महान । जल रेखा सम रहे प्रमान ॥
तासु चरण प्रणामो शिर नाय । विनय सहित बोल्यो वनराय ।
मैं तेरो किंकर महाराज । आज्ञा देऊ करों सो काज ॥
जीवंधर बोले तिहिवार । रे कुरंग गोकुल कुलसार ।
ग्वालन कूं सौंपो तुम सबै । पालो मो आज्ञा तुम अबै ॥
ऐसे सुन ग्वालन कूं लाय । गो समूह दीने हर्षाय ।
हेम वसन भूषण सब सार । जीवक कूं दीने तिहिवार ॥

* पद्धड़ी छन्द *

हे नाथ आज सेती जु मान । जीवन तुम तें मानूं पुमान ।
तुम नरन मांहि होगे नरेश । करुणा सागर सज्जन विशेष ॥
तुम सम नांही जगमें कृपाल । वृष भाजन तुमहो सुगुण माल
तुम विन कारण जग बंधु देव । नित पर उपकार विषै सु एव ॥
यातें मैं किंकर हों अधीश । निज परिजन युत जानो सुधीश
इह विधि कुरंग विनती अपार । सो करत भयो मतिसार धार ॥

॥ चौपाई ॥

भीलनाथ कूं ले निजलार। आये निजपुर कुमर उदार।
बाजे विविध सु बाजन भये। धुनि सुनि पुरजन भय जुतथये॥

॥ अडिल्ल ॥

विनय सहित परणाम कियो निज तात कूं।
कहत भयो हर्षाय विजय की बात कूं॥
बार बार जननी चरणन सिर नाय के।
करि प्रणाम पुनि आँगन बैठो आय के॥
अंबा सुत कूं गोद विषै बैठाय कै।
मस्तक चूमत भई सनेह उपजाय कै॥
कहन भई भीलन कूं तुम जीते अबै।
विजय सुपाई कैसे मोहि भाषो सबै॥
पुत्र कहा तेरे कर हैं कोमल अबै।
कहां दुष्ट वे भील जये कैसे सबै॥
कौतुक सो उर माहि बड़ो बरतै सही।
सो मोसों समझाय कहो संशय नहीं॥

॥ कवित्त ॥

हितसों चिरकाल सु जीवक कों करके बहु आदर नेह कियो।
पुनि वारहिवार हिये सु लगाय महा सुख पाय प्रमोद लियो॥
"जगजीव" इसो वरवाक् चये उरमें हर्षाय अशीस दियो।
तिहि औसर जो सुख मात लियो, अब मोपै सो नहि जाय कह्यो॥

॥ रोला छंद ॥

निज गोकल कूं पाय नद गोपाल हिये वर ।
कियो बहुत आनन्द कहो नहि जाय सुमुख कर ॥
पुरुषन के जग माहि मान तें धन निरधारौ ।
गरवो है अधिकाय कहा संशय न लगारो ॥

॥ चौपाई ॥

भारवाह यह सुन विरतंत । उरमें भयो उदास अत्यत ।
रवि को उदय जगत हितकार । घु घू कूं कहा रुचै विचार ॥
यह तो कथन रहो इह थान । और सुनो आगे मतिवान ।
नंद गोप अपनी वर सुता । रति समान नाना गुण जुता ॥
देवे की इच्छा उर ल्याय । कीनी अर्ज़ कुंवर पै जाय ।
करण योग कारण जो होय । संत तहां चूके नहिं कोय ॥
जीवंधर तन काँति विभास । दशन अंशु कर है परकाश ।
सकल सभा को दान करंत । नंद गोप सों बचन कहंत ॥

कवित्त

अहो गोप पद्मा सुभ्रात मेरो हितकारी ।
ताहि सुता तुम देहु आपनी अति सुखकारी ॥
उत्तम मत के धरनहार नर जे जग मांही ।
वस्तु अयोग्य विषै सुधरैं वांछा वे नाँही ॥

॥ चौपाई ॥

फेर नंद बोलो सुनि देव । दई सुता तुम कूं में एव ।
कैसे याकूं दीनी जाय । तुम विचार देखो शुधिराय ॥

॥ दोहा ॥

गोत्र मात्र ही भिन्न हूँ, निश्चै करि यह जान ।
क्रिया चलन करतूत करि, भिन्न नहीं मधान ॥
ऐसे वचन प्रबंध करि, नंद गोप तिहवार ।
हर्ष बढ़ायो कुंवर कूं, बहुत कियो सुख सार ॥

॥ चौपाई ॥

लगन देख शुभ नंद गोपाल । विनय दान सन्मान विशाल ।
आनन्द सहित व्याह उत्साह । करत भयो सो कर चित चाह ।

अडिल्ल

गोविन्दा नामा सुसुता गुन की मही ।
गोदावरी त्रिया तें उपजी सो सही ॥
आनन कमल समान कुंवर जीवक तबै ।
तात वचन तें पाणि ग्रहण कीनो जबै ॥

* सवैया *

जाको मुख चंद्र देख चंद्र हु लजात भयो,
लोचन निहार मृगी जाय बसी वन में ।
जाके शुभ बैन सुन कोकिला भई है स्याम,
अलि मंडलात हैं सुगंध लेत तन में ॥

ऐसी वर नारी सार रति कैसो रूप धार,
तन को उद्योत जैसे दामिनी सु घन में।
पुण्य के प्रभाव ऐसी नार पाई जीवक ने,
भोगत है भोग सार पाप नहीं मन में॥
सत्यंधर को कुमार जीवंधर बलधार,
भीलन को समुदाय जीतो जाय क्षण में।
भीलन को राय बांध बाजी धन आदि पाय,
गोकुल छुड़ाय मद धारो नहिं मन में॥
आय निजपुर माँहि भ्राता सब संग लिये,
इन्द्र कैसी शोभा धरैं गाढ़ौ निज पन में।
पूर्व कियो है पुण्य नाना फलकारी तिन,
जानौ बुध यातें अब राजत सुजन में॥
राजत मयंक मुख जीवक को प्रकाश मान,
देख जुवती जन कमल दल नैन सों।
शोभित प्रताप जाको भान को उद्योत मानो,
धारत भय वैरी भूप रहत अचैन सों॥
करैं प्रतिपाल निज कुल को उदार मत,
करैं सन्मान दान बोलें मधुर वैन सों।
शोभित अवनि विषै पुण्य के प्रभाव सेती,
भोगत हैं भोग सुख अपने धाम चैन सों॥

॥ इति चतुर्थ सर्गः॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

❀ अभिनन्दन स्तुति ❀

॥ छप्पय ॥

अभिनन्दन आनन्द कंद जगजन सुख दायक ।
जगत शिरोमणि ज्येष्ठ जगत भरता जग नायक ॥
जगत तात जग ईश जगत गुरु हे जग नामी ।
शिव रमणी भरतार देउ शिव सुख शिव गामी ॥
जगत पाल जग बंधु तुम अशरण हो जग के शरण ।
युग हाथ जोर नथमल्ल कहत तार तार तारन तरन ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

इस आगे पुर या ही मझार । श्रीदत्त नाम श्रेष्ठी उदार ।
ताके घर लक्ष्मी है महान । सो दीनन कूं बहु देय दान ॥
इक दिवस सेठ इम कियो विचार । लक्ष्मी पैदा करिये सुसार ।
अतिशय करके इस जगत मांहि । धन की वांछा काके जु नांहि ॥
लक्ष्मी को फल दीजे जु दान । ता कर फैले कीरति महान ।
सुख होय धरम करके अतीव । सोई उपाय कीजे सदीव ॥
है विपुल लच्छि मम तात गेह । तापर मेरो नाही सनेह ।
जो धरत शक्ति अपनी महान । सो परधन नहिं वांछे सुजान ॥
जो लक्ष्मी परमें हो अतीव । खरचे बिन उद्यम जो सदीव ।
भूरन हू भोगत भोग सार । सो क्षीण होय दिन दिन मझार ॥

धन नाश भये दालिद्र अतीव। आवत निजघर मांहिं सदीव।
दालिद्र समान दुख नांहि कोय। तिस नाम लिये मन क्षुभितहोय
सिंहन कर सेवित विपिन जेह। वसवो वर तरु तल सुचि सुगेह।
विष फल भक्षण करवो मनोग। धन रहित प्राण धरवो न योग॥
जैसे दलिद्र ते दुखित होय। ऐसे मरने तें नाहि कोय।
प्रानन के छूटे मरण होत। युत प्राण मरण धन बिन उद्योत
निर्धन को जस फैले न कोय। पुनि गुण समूह नहिं प्रगट होय।
पुनि विद्यमान विद्या अतीव। धन बिन जु कहा शोभित सदीव
धन बिन जगमें उपजो न जान। जीवत ही जानो मृत समान।
धनहीन अफलतरु सम असार। थितहु अनथित है जग मँझार॥
धन बिन नरको आदर न होय। ता करि कारज सर है न कोय।
तैसे धन बिन या जगत माँहि। किंचित कारज कछु सरत नाहिं
धनवंत मानियत सकल थान। कुल हीन हू पूजत सब जहान।
अब बहुत कहन तें काज कोय। देखत ताको मुख सकल लोय॥
संपति पाये को फल महान। संतन को पोषै प्रेम ठान।
सहकार फले मो जगत लोय। भोगे यामें संशय न कोय॥
जीवन कूं संपत जग मँझार। सो विपत सहित जानो विचार।
ज्यों कूप कुंभ तें जल भरंत। पुनि निकस निकट आवे तुरंत॥
धन होय ग्रेह तो नर महान। मुनि आदिक कूं बहु देत दान।
तातें हो जगमें जस उदार। भव भव में सुख पावे अपार॥
जो नीचन कूं धन लाभ होय। सो शुभ मारग लागे न कोय

जिमि नीम वृक्ष फल लगत भूर। तिनकूं वायस ही खात क्रूर
उपजइये विधि तें धन महान। तासों निजहित करिये महा
सुखके निमित्त बुद्धिवान जीव। को जतन करे नांही सदीव

॥ दोहा ॥

यह विचार चिरकाल कर, कियो सेठ प्रस्थान।
बहुजन युत व्यापार कूं, लै निज वित्त अमान॥

॥ चौपाई ॥

बैठ जहाज चलो सो जबै। पोतवाह लीने सँग तबै
धन को अर्थी जो नर मही। कहा उदधि अवगाहे नहीं
और जहाजन में सुख पाय। व्यापारी चाले अधिकाय
रतन द्वीप की इच्छा धार। पहुँचो उदधि बीच तिहिवार
तब सब अर्थ उपार्जन हेत। उरमें कर विचार शुभ चेत
सब जन सहित उदधि के तीर। पहुँचे निकट विपै धर धीर
तब वारिधि के नीर महान। चली पवन अति ही भयवान
सघन जलद छायो आकाश। सब जन व्याकुल भये उदास
महा प्रचंड पवन तें जबै। भये जहाज चलाचल सबै
सबै वणिक दुखतें "हा" कार। करत भये उर में भयधार

॥ अडिल्ल ॥

नावन के इम नाश को कारण देखकें।
करन भये सब वणिज जु शोक विशेषकें॥

कारण लख निज नाश तनों निरधार जू ।
कष्ट कौन के होय नहीं सु विचार जू ॥
श्रीदत्त सेठ जहाज तनों दुख देख के ।
औरन कूं संबोधित भयो विशेष के ॥
तरत महान सु पुरुष आप संसार सों ।
औरन को तारे निहचै भव वारिसों ॥

॥ चौपाई ॥

श्रीदत्त शोक कियो न लगार । तत्वज्ञान को जानन हार ।
लख दुख सुधी विकारन करे । मूरख शोक महा उर धरें ॥

॥ दोहा ॥

होनहार आपद निरख, तुम क्यों होहु उदास ।
सर्प वदन में मेल कर, अहि शंका किम तास ॥

॥ चौपाई ॥

विपति विषै इक है उपचार । शोक और भय को परिहार ।
तत्वज्ञान प्राणी जो धरें । ते इस भव पर भव सुख करें ॥
ध्यावत भयो सेठ भगवान । लियो दुविधि सन्यास महान ।
तत्वज्ञान के जानन हार । तिनकूं तत्व शरण निरधार ॥
पवन योग तें उठी तरंग । ता कर भयो पोत को भंग ।
पूरब भव में पाप अपार । कियो उदय सो भयो अवार ॥
जपो सेठ नवकार महान । ता करि उपजो पुण्य प्रधान ।
काष्ठ खंड इक लखो उदार । दुर्लभ कहा जपत नवकार ॥

नाशन पोत वणिक जे सबै । डूबत भये उदधि में तबै ।
कोइ यक काष्ट खंड कूं पाय । गये तीर ते पुण्य पसाय ॥
धर्म प्रभाव सेठ श्रीदत्त । काष्ट खंड पायो शुभ चित्त ।
पूर्ण आयु धारें जे जीव । तिनकी रक्षा होय सदीव ॥
चढ़ो काठ पर सेठ महंत । सुखसूं तट पै गयो तुरंत ।
जैसे राज भ्रष्ट भूपाल । भाग्य रहें तो होय खुशाल ॥

॥ अडिल्ल ॥

मूढ़ आतमा वृथा नेह तू करत है ।
तृष्णा अग्नि प्रचंड थकी क्यों जरत है ॥
इस भव पर भव मांहि महा दुख धरत है ।
तृष्णा नहिं सुखदाय जिनेश्वर कहत हैं ॥
धार सदा वैराग्य भाव निज उर विषै ।
इस भव परभव मांहि होय संपति अखै ॥
कर तू धर्म सदीव जीव सुख हेत जू ।
पर की आशा छोड पाप फल देत जू ॥
छोड़ धर्म कूं मनुष जगत में धर मुदा ।
सुख कीरति की इच्छा धारत हैं सदा ॥
सो नर तरु को मूल थकी सु उपार कें ।
फल समूह चाहैं सुख हेत विचार कें ॥
रहो प्रगट संसार महा दुख खान है ।
यामें कछु नहिं सार यही निरधार है ॥

प्राणी करत विचार और उरमें सही ।
विधि वशतें पुनि होय और तैं और ही ॥
याही तैं योगीन्द्र सकल इन्द्रिय विषै ।
राज संपदा छोड़ जाय बनके विषै ॥
मुक्ति हेतु तप तपैं सार तजकें मदा ।
धन्य धन्य त्रैलोक्य विषै वे नर सदा ॥

॥ कवित्त ॥

तात मात सुत भ्रात और कान्ता सुखदाई ।
तथा सकल परिवार विविधि संपति अधिकाई ॥
सब झूठे व्यवहार प्रीति उरमें क्यों धारे ।
पंथी जन को नेह जेम यह जग थिति धारै ॥
तत्वज्ञान वेत्ता जु सेठ अपने चित्त माँही ।
ऐसे करत विचार छिनक बैठो तिह ठाही ॥
तत्वज्ञान युत जीवन कूं सुख दुख मंझारा ।
जागत है उर ज्ञान रूप संपत निरधारा ॥

* मरहठा छंद *

तब श्रीदत्त सेठ के सु पुण्य को प्रताप कोई इक नर तहाँ आयो
मनुष्यन के निज पुण्य उदयतें बनमें मिलो मित्र मन भायो ॥
पुनि आप सेठ के आगे बैठो अधर नाम नभचारी ।
सो बिना विचारे लाभ भयो शुभ मन वांछित सुखकारी ॥
तब सेठ अधर विद्याधर आगे आदर युत हित भीनो ।

जब सकल वृतान्त आपनो तासों कहवे कूं मन कीनो ॥
तब ही खेचर पूछी हो तुम कौन कहाँ तैं आये।
तुम उदधि नीर क्यों बैठे अकेले कहो कहा दुख पाये ॥

॥ चौपाई ॥

नभचर आगे सब विरतंत। निजपुर आदि उदधि पर्यन्त।
धन जहाज़ नाशे जनसार। सो सब कहो सेठ तिहिवार ॥
अधर नाम विद्याधर संत। सुनो सेठ को सब विरतंत।
है जु सेठ को बांछक सही। कपट सहित कछु भाषों नहीं ॥
कोइ इक मिसकर नभचर तबै। धर विमान में ताकूं जबै।
नभ मारग होके गुणवंत। रूपाचल को चलो तुरंत ॥

॥ दोहा ॥

सो विद्याधर प्रीत करि, श्रेष्ठी को तिहिवार।
तरु मनोज्ञ विस्तार जुत, वन दिखलायो सार ॥

॥ पद्धड़ी छन्द ॥

नभचर तहं इक गिरिवर उतंग। दिखलायो वांसन युत अभंग।
मानूं खगवंश उदार सार। ताकूं सु बतायो प्रीत धार ॥
कहिं पुर पट्टन करवट महान। बहु देश नदी अति शोभमान।
कहुँ हरि मर्कट क्रीड़ा करंत। दोऊ देखत नभ में चलंत ॥
क्रीड़ा करते दोऊ उदार। अनुक्रम तें रूपाचल मझार।
सुर सेनी पहुंचे जाय संत। उरमें प्रमोद धारो अत्यन्त ॥

विजया चल ऊपर बन महान। तरु बल्ली फलकर शोभमान।
लख उतर विमान थकी गिरीश। बैठे दोऊ हर्षित सुधीश ॥

॥ दोहा ॥

विद्याधर सो सेठ ने, तब पूछो हर्षाय।
क्यों तूं मोहि लायो यहां, सो बोलो निरधार ॥

॥ चाल छंद ॥

यह विजयारधगिरि सोहै। सो रजत वरन मन मोहै।
इकसौ दश पुरी विराजैं। सुर पुर सम शोभा साजैं ॥

* रोटक छंद *

अति विस्तार समेत इहाँ है दक्षिण श्रेणी।
रहै सास्वतो धर्म सदा उत्तम सुख देनी ॥
तामधि पुरी पचास कोटि खाई अति राजै।
इक इक कोडि सुग्राम पुरी प्रति शोभा साजै ॥

॥ चौपाई ॥

तहाँ देश गंधार उदार। बन उपवन कर शोभ अपार।
साधर्मी जन वसत अतीव। दया दान व्रत करत सदीव ॥
तामें नित्या लोकापुरी। नाना गुण कर शोभित खरी।
वलयाकार लसै प्राकार। खाई कर शोभित मनहार ॥
उन्नत भवन अनेक लसंत। तिनपै ध्वजा विविधि फरहंत।
देवनि कूं वसने के हेत। किधों बुलावत हर्ष उपेत ॥

गरुड वेग तहाँ है खग ईश । गुण गणकर शोभै सु गरीश ।
रिपु अहि मद मर्दन कूं जान । कियौं तृप इह गरुड़ समान ॥
ताके त्रिया धारणी नाम । प्राणन तें प्यारी अभिगाम ।
हाव भाव विभ्रम सुविलास । इन आदिक गुण गण परकाश
तिनके गंधर्वदत्ता नाम । कन्या है अति ही अभिगाम ।
जैसे गंधर्व सुर की सुता । तैसे यह शोभित गुण जुता ॥

कवित्त

मुख चंद्र अमंद मनोहर देखत इंदु सदा उरमें झटकें ।
शुभ वेनी श्याम तमा अलकें युग मानो नागन सी लटकें ॥
युग द्रग विशाल चंचल कुरंग सम बांकी भौंहन करि मटकें ।
नासा शुक दर्पण वत कपोल विद्रुम सम अधर सुधा गटकें ॥
दाडिम दशन धरत शशि की द्युति कोकिल वैन सुधा गटकें ।
जुग भुजा कल्प शाखावत सोहें कर पल्लव कोमल लटकें ॥
युग कुच कुंभ कठिन उन्नत शोभित हैं दोऊ तट के ।
नाभि लसत सरसी वत गहरी केहरि सम कृश तट कटि कें ॥

॥ मरहटा छन्द ॥

राजि शोभित नितंब कदली के तट पग थूल पुष्ट छवि धारे ।
काम फांस आलान थंभ जुग उरु मनोहर कियौं सवारे ॥
युग जंघा शोभित हैं कदली वत चरन कमल छवि न्यारे ।
गति सम गयंद चालन अति धीमी नव आभूषण तन छवि धारे

॥ चौपाई ॥

कन्या तरुण गृही के होय । ताकूं निद्रा सुख नहिं होय
रहे शल्य ताके घट सदा । जाके सुख को लेश न कदा ॥
पुत्री कूं तब भूपति सार । शिक्षा देत भयो हितकार ।
ऐसो जनक कौन जग माँहि । देत सुता कूं शिक्षा नांहि ॥
हे पुत्री तू जनक समान । काँतिवान श्रेष्ठी कूं जान ।
जाकूं देय तोहि यह सत । जान प्राण सम ताकूं कंत ॥
पति अनुचरनी नारी होय । निहचे साता पावे सोय ।
पतिव्रत भनो त्रियन को सार । इस भव परभव सुख दातार ॥

॥ सोरठा ॥

गिनियो तात समान रे पुत्री सुसुर कूं ।
सासू मात समान देवर सुत सम जानियो ॥

* दोहा *

हे पुत्री भरतार की कीजो भक्ति सदीव ।
पूज्यनीक पुरुषन तनी, करियो विनय अतीव ॥

॥ चौपाई ॥

अव्रत पुनि प्रमाद दुखदाय । पण मिथ्यात पच्चीस कषाय ।
इनको त्याग कीजियो सदा । इन सेती सुख होय न कदा ॥
दुर्जन भाव चपलता चित्त । पुनि कठोर परिणाम सुनित्त ।
तजिये दुर्जन जन निरधार । हे पुत्रि मो वच मन धार ॥
बार बार जल्पन अरु हास । जहां तहां कूं गमन विनास ।

शील रहित नारी सूं प्रीति । तजियो सदा धार इम नीत ॥
तजियो मान महा दुखदाय । ता करि प्राणी दुर्गति जाय ।
रावण आदि मान मद धार । नर्क विषै दुख सहे अपार ॥

॥ दोहा ॥

तत्व अतत्व विचारिये, हित के हेत सदीव ।
बिना विचारे हित अहित, नहीं जानत है जीव ॥
इन आदिक दे सीखवर, अरु आभूषण सार ।
कन्या को स्नेह युत, आयो नगर मझार ॥

॥ चौपाई ॥

अनुक्रम तें सो सेठ सुमान । आयो राजपुरी शुभ थान ।
कोट विशाल सुवलयाकार । स्वर्गपुरी सम कांति अपार ॥

॥ अडिल्ल ॥

गंधर्वदत्ता संग तब जाइके ।
निज मंदिर परवेश कियो हरषाय के ॥
मानखंभे वर उन्नत महल विराज ही ।
फटिक रतन करि जहां अधिक छवि छाज ही ॥

॥ चौपाई ॥

पुनि कन्या की कथा पवित्त । कही त्रिया सूं कंत सुचित्त ।
नारी होय सदा मति हीन । सद मोहित अघ कारज लीन ॥
गयो सेठ भूपति के पास । भेंट किये रतनादिक तास ।
नमस्कार कीनो हरषाय । मिल्यो राय तब कंठ लगाय ॥

पूछत भयो फेर भूपाल । कहाँ रहे तुम इतने काल ।
ऐसे सुनि सो सेठ सुजान । कहत भयो तासूं निजवान ॥
नाथ पोत मेरो फट गयो । तब विजयारध गिरि पै गयो ।
तहँ तें कन्या अधिक स्वरूप । लायो दई विद्याधर भूप ॥
ता कन्या ने भूप उदार । करी प्रतिज्ञा ऐसी सार ।
वीणा वाद कर जीते कोय । ताकूं परनूं हर्षित होय ॥
कन्या आई जान नरेश । हर्ष करो उर माँहि विशेष ।
तरुणी जो रुपि तासूं अनुराग । को न करे जगमें बड़भाग ॥
नृप आज्ञा तें सेठ महान । वीणा मंडप रच्यो सुजान ।
कियो उछाह महा अतिसार । बाजे बाजत विविध प्रकार ॥
पत्र सुलिख कर सेठ विशाल । भूपन को भेजे दर हाल ।
रच्यो स्वयंवर ताम महान । कन्या व्याहन हेत प्रवान ॥
वीन बजावन में परवीन । होय सो यहाँ आवो गुणलीन ।
वीणा कर जीते जो हाल । कन्या सो परणै भूपाल ॥
वीण भेद को जानन हार । ऐसो धरणीश उदार ।
पत्र वाँच हर्षित होय जबै । वीणा मंडप आये सबै ॥
यथा योग्य थल विषै नरेश । बैठे हर्षित होय विशेष ।
त्रिया राग करके अब सही । ठगे गये जगमें को नहीं ॥

अडिल्ल

काष्ठाँगारक भूप आदि सिंगार कें ।
वीन कला में निपुण वीन कर धार कें ॥

कन्या को वर रूप देख मोहित भये।
जोलों मंडप मांहि धरें मद कूं थये॥
जोलों खग की सुता धाय निज संग ले।
आई मंडप मांहि बीन कर मांह ले॥
रूप थकी जग को जु मोह विस्तारनी।
भूषण विविध प्रकार अंग में धारनी॥
हरपी मृगी समान चपल दृग सोहने।
चलत चाल जिमि करी अरुण पग मोहने॥
ताको रूप विशाल देखके नृप सबै।
लिखी भीत की मूर्ति भये तैसे तबै॥

॥ सोरठा ॥

या सम रूप अपार विद्याधर ग्रह में नहीं।
कोमल बैन उचार मोहत है सब जनन कूं॥

॥ चौपाई ॥

जगत विषै जे नारी सार। तिनकूं जीते यह निरधार।
विधिना ने यह रची अनूप। करत भये इम वितरक भूप॥
कन्या धाय सहित हर्षाय। निज आसन पै बैठी जाय।
अवलोकन अमृत जलधार। ताकर सींचे नृपति उदार॥
सोगरा कर कन्या ने तबै। अनुक्रम कर जीते नृप सबै।
पूर्ण विद्या जो नहिं धरै। सो तो अवज्ञा फल अनुसरै॥

॥ चौपाई ॥

गुण सरूप गति वचन उदार । लावनता पटुता अधिकार ।
जैसे याके तनके माँहि । तैसे और त्रियन के नाँहि ॥
गान कला में अधिक प्रवीण । किधौं किन्नरी यह गुणलीन ।
श्री देवी सम है अवदात । रूपाचल पै यह विख्यात ॥
गरुड़ वेग खग ईश उदार । एक दिवस लख कन्या सार ।
ब्याह योग यौवन युत देख । उर में चितवन कियो विशेष ॥
कन्या ब्याह हेत खग राय । निमिती लीनो वेग बुलाय ।
पूछत भयो तबै हर्षाय । दशन अंश करि सभा न्हवाय ॥
हे मति सागर मेरी सुता । यौवन सहित कलागुण युता ।
कौन होय सो कहो तुरंत । होनहार याको वर संत ॥

॥ दोहा ॥

जन्म लग्न अवलोक-के निमिती बोले वैन ।
हे नृप याको वर सुभग, कहूँ सुनो सुख दैन ॥

॥ चौपाई ॥

हेमांगद नामा शुभ देश । राजपुरी नगरी तह वेश ।
भूपति, के गेहनि करि लसै । अलकापुरी किधौं इह वसै ॥
ताही राजपुरी में जान । बीन बाद कर रूप निधान ।
जीतेगो याको निरधार । सो होसी याको भरतार ॥
निमित करि विदा नरेश । त्रिया धारणी सहित विशेष ।
तासु पुरुष की प्रापति हेत । गूढ़ मंत्र तिनि कियो बिशेष ॥

कहां राजपुर है वरनार । कित यह गिरि रूपाचल सार ।
भूमंडल पर रचना कहो । होय गमन मेरो अब तहो ॥
यह कारज दुद्धर है नाम । कैसे होय सुनो गुण धाम ।
कीजे कौन विचार अवार । सो कह भंति न रहे लगार ॥
जावे राजपुरी जो अवे । तो यह राज रहे किम अवे ।
व्हा को भी निश्चय नही कोय । कब ताँई वर प्रापत होय ॥
तहां उपाय एक है सार । रुचै तोहि तो कीजे अवार ।
सबके बढ़े प्रमोद महान । यामें संशय नेक न जान ॥
राजपुरी में श्रीदत्त नाम । वैश्य मित्र मेरो गुण धाम ।
मेरो हितकारी जु अतीव । हमसों धारत प्रीति सदीव ॥
हम कुल उन कुल माही प्रीति । क्रमतें आई चली सुरीति ।
तातें ब्याह हेत अब जान । वाकूं ल्यावें याही थान ॥
रानी युत इमराय विचार । मोहि बुलायो ताही वार ।
तेरे लावन काज तुरंत । मोसो अज्ञानी को मंत ॥
आयसु पाय राजपुर जाय । मैं ढूंढो बागरु पतिराय ।
ताकूं लख्यो नहीं तिहि ठाम । जैसे मूरख आतम राम ॥
काहू नरतें ऐसे सुनी । बैठि जहाज़ गयो सो गुनी ।
तब मैं पार समुद्र मंझार । तेरो कियो तलाश अपार ॥
दैव योग तें होहि निहार । भए जहाज़ सहित निरधार ।
फिर लायो ताकूं इस थान । या कारण तें है मतिवान ॥
ऐसे सुन श्रीदत्त सुबैन । भयो सुमन में हर्ष उबैन ।

कहीं दुख कहीं सुख अतीव। जीवन को जग माँहि सदीव॥
खेचर अधर सेठ को थाप। गयो भूप के ढिग पुनि आप।
सकल वृतान्त सेठ कूं मवै। कहत भयो हर्षित सो अवै॥

अडिल्ल

मित्र आगमन सुनत भूप हर्षाय के।
दयो धनादिक ताहि प्रीति सरसाय के॥
ले परिवार खगेस सँग अपने जबै।
गयो सेठ के निकट भूप हर्षित तबै॥

* चौपाई *

बार बार मिलके भूपाल। कुशल क्षेम पूछी गुणमाल।
प्रीति धार उर मांहि विशेष। निजपुर लायो ताहि नरेश॥
भयो जहाज़ उदधि में नाश। कहो भूप सों सकल प्रकाश।
नृप ने खेचर लये बुलाय। उदधि तीर भेजे हर्षाय॥

* दोहा *

जाय उदधि के तीर तब, धन जनकादि ल्याय।
राजपुरी में सबन कूं दीने सो पहुंचाय॥

॥ चौपाई ॥

तब श्रीदत्त आपनो तात। आयो लखो नहीं विख्यात।
दुखित होय तव उनसूं कही। कहो सेठ क्यों आयो नहीं॥
सागर आदि सकल बिरतंत। अरु विजयारध गिरी पर्यन्त।
तासूं कह संतोषित कियो। रूपाचल को मारग लियो॥

पुनि खगेश श्रेष्ठी कूं न्हान । भोजन आदि कियो सन्मान ।
मिलें मित्र हितकारी जबें । कौन विनय करि है नहिं तबें ॥

॥ दोहा ॥

एक दिवस एकान्त में, सेठ प्रति भूपाल ।
कन्या को वृत्तान्त सब, कहत भयो गुणमाल ॥

॥ चौपाई ॥

विद्याधर के वच सुखकार । सुन श्रेष्ठी हर्षो तिहि वार ।
करे नृपति जाको सन्मान । सुखी होय नहिं कौन पुमान ॥
तब विद्याधर सुता मनोग । सौंपत भयो सेठ को जोग ।
मित्र गोड जगमें विख्यात । जासूं कहै गूढ़ सब बात ॥
रतन वसन कन धन बहु भाय । भूपति ने तब लिये मंगाय ।
निज कन्या के व्याह निमित्त । दिये सेठ कूं हर्षित चित्त ॥
सेठ विदा कीनो दर हाल । निज विमान देके भूपाल ।
कन्या सुत लग्न ताहि नरेश । हिये भयो है चिन्त विशेष ॥

॥ अडिल्ल ॥

नारी धारनी आदिक जे नृप की सबें ।
कन्या कूं प्रति बोध उलट आई तबें ॥
जिनके कन्या रतन होय घरमें सही ।
दान न करनी योग्य तिन्हें संशय नहीं ॥

जो कन्या की वांछा सार । सो सब जानै नृप न लगार ।
मूर्छा ग्राम और लय को भेद । नृप जानैं न करैं बहु खेद ॥
तब जीवंधर नाम कुमार । आयो कौतुक सहित उदार ।
तिष्ठत मद तज सकल नरेश । ज्यों मयंक कर लखत दिनेश ॥

॥ दोहा ॥

वीणा षोड़स तार की. जीवंधर मतिमान ।
कन्या की वीणा लई, ताहि बजाई सुजान ॥

॥ चौपाई ॥

मन वांछित सु बजाई बीन । कन्या जीत लई परवीन ।
विद्यासार पुरुष जो धरे । इस भव पर भवमें सुख करे ॥
काहू पै जीती नहिं गई । कुमर जीत छिनमें सो लई ।
जाके पुण्य प्रगट अब थाय । ता घर लक्ष्मी आवे धाय ॥
कन्या होय प्रसन्न दर हाल । जीवक के गल मेली माल ।
अपने मन को प्रेम अपार । प्रगट दिखावत भई उदार ॥

* कवित्त *

मोतिन की लर पाय कुमर कर कन्या सेती ।
जीवक के गल माँहि अधिक शोभा सो देती ॥
सुरगलोक तें माल किधों आई सुखकारी ।
पूर्व तप फल प्रगट दिखावत सबकूं भारी ॥
गंधोत्कट वर सेठ और जीवक के भाई ।
इन आदिक परिवार सबन कूं हर्ष बढ़ाई ॥

वनिता रूपी रतन निकट आवै सुख करता।
कौन जगत के मांहि पुरुष जो हर्ष न धरता॥

॥ चौपाई ॥

अंतर ईर्षा काष्टांगार। भयो उदास वदन तिहिवार।
दुर्जन को सुभाव है यह। पर को उदय देख दुख लहै॥
देश देश के आये राय। मद धारैं उरमें अधिकाय।
तिन सबकू लख काष्टांगार। क्रोधवंत कीने अब बार॥

॥ कवित्त ॥

भागवाह के अंग तब केयक धरणी धर।
जीवक सूं इम कहत भये उर मांहि क्रोध कर॥
जीवन की मति अकुल काज कूं सहज उपावै।
खोटी शिक्षा मिलन कहा नहीं क्रोध बढ़ावै॥
जीवक तू है वणिक पुत्र व्यौपार सभारा।
है प्रवीन तू क्यों न करै अपनो व्योपारा॥
वणिज कर्म कूं योग्य विदित है तूं जग मांहि।
बड़े रतन के छतैं रतनतिय मिलै सु नाहीं॥

(मद्रा) ॥ पद्धरी छन्द ॥

जो अपनो हित चाहो कुमार। दे कन्या भूपन कूं अवार।
उत्तम सु वस्तु जगमें विख्यात। सो भूपन की निहचै कहात॥
अब और भांति तोकूं महान। अति होय कष्ट संशय न जान।
यहां तैं कन्या को तूं अवार। किम लेय वणिज विचार॥

इम सुन जीवक पुनि वच उचार। सुनियतु हैं क्षत्री जग मझार।
शुभ नीति पंथ के चलन हार। रक्षा अवनी की करत सार॥
यह न्याय स्वयं पर में सदीव। धनवंत तथा निर्धन अतीव।
कुलवंत तथा अकुलीन जान। कन्या जो वरे सो वर प्रमान॥
निश्चय कन्या ने इम कराय। जीते मोहि बीना कूं बजाय।
सोई कन्या को वर विशेष। क्षत्रिन को कारज नहीं लेश॥
तुम न्यावत नृप हो मनोज्ञ। तुम को ये वच कहने न योग्य।
अन्यायवान राजन मंझार। थिर राज रहे कैसे उदार॥

॥ अडिल्ल ॥

जीवक के वच सुनत क्रोध उर धार के।
भारवाह के प्रेरे नृप हुंकार के॥
बोले सुनरे वैश्य क्रोध नृप कुल धरे।
बुद्धि हीन तूं समझ न्याय कैसे करे॥
भारवाह आदिक भूपति बैठे सबै।
तिनि आगे तू वचन कहत ऐसे अबै॥
सो हम निहचै करो हिये सु विचार कें।
वाँछित है निज मरन कुधी मद धार कें॥
रे वाणिक मति हीन रतन कन्या अबै।
लाय सितावी देय छोड़ के मद सबै॥
अथवा कर सँग्राम देय निज प्राण कूं।
जो तोहि रुचै सिताब करो तज मान को॥

भूपन के सुन वचन इसे जीवक तवै ।
करि प्रचंड उर क्रोध फेर बोल्यो जवै ॥
बहुत वचन भाषण कर कारज है कहा ।
देखो समर मझार मांहि भुजबल महा ॥
कन्या की अभिलाष करें भूपति जिके ।
भुजनि मध्य मेरी अब ही आवो तिके ॥
कन्या जमकी धाम तहीं तुमकी अवै ।
देहुँ शीघ्र पहुँचाय सुनो भूपति सबै ॥
जीवक के इम वचन सुने सब राजई ।
उठे कोप कर तबै सकल तन साजई ॥
लिये जु तीक्षण बाण युद्ध के करन कूं ।
करत भये प्रस्थान शत्रु के हनन कूं ॥
कोइयक क्षत्रिय नीति हिये सुविचार के ।
होय रहे मध्यस्थ सेन निज धार के ॥
नीति वंत क्षत्रिय जे हैं जग में सही ।
न्याय पंथ जे चले योग तिनकूं यही ॥
जीवक ले निज भ्रात सँग अपने सबै ।
उठो युद्ध को कोपधार उरमें जबै ॥
नीती वान जे सूर कुंत कर में लिये ।
चले कुमर के सँग धीर धरके हिये ॥
चढे युद्ध के करन हार भूपति जिके ॥

बिना बैर सँग्राम करन लागे तिके।
अति प्रचंड को दंड विषै शर लाय के।
छांड़त भये नरेश कोप सरसाय के॥

॥ भुजंगी छन्द ॥

छिदं कुंत सेती जु कइ एक सूरा। परे भूमि माँही कहैं वैन कूरा।
छुटें वान तीखे लगें जाय छाती। परे भूमि माही भहे देहराती॥
चवैं वैन कूरा किते वीर ठाड़े। बड़ी धीर सेती करें वाद गाड़े।
किते वीर बांके किये नैन राते। अरी शीश के केश खेंचे जु माते
किते वीर ठाड़े गदा तैं विदारे। परे भुमि माँही भये खंड न्यारे।
यथा बज्र सेती गिरी तुंग चूरै। खिरे खंड खंडे परे जाय दूरे॥
हिये सों हियो वीर केई भिडावें। किते शीस सों शीस जाके लड़ावें
गले सों गलो हाथ सेती जु धारें। तबै भीचकें वीर पीड़ा विथारे॥
किते वीर कूरा लिये खडग हाथे। गये वेग सेती दई जाय माथे।
परे शीस भूपै किधौं कंजराते। हते तुंगदंती महा मत्त माते॥
चलें शैल तीखे लगें जाय छाती। गिरे शूर भूपै दिये देहराती।
किते शूर प्यासे परे भू मझारा। चवें दीन वानी सहे कष्ट भारा॥

❀ अडिल्ल ❀

या प्रकार रण भूमि विषै वैरी सबै।
जीवक ने छिन माँहि भगाय दिये जबै॥
जैसे गरुड़ निहार महा भय लाय के।
भजैं सर्प समूह अधिक दुख पाय के॥

कैयक रण लख गेह गये जु पलाय के ।
कैयक जग तन अथिर लिये व्रत जाय के ॥
कैयक आकुल होय त्रास सहते भये ।
मरे किते इक मृग किते रण तज गये ॥
धनुष धरन में चक्रवर्ति सम सोहनो ।
छोड़त बाण समूह लखत मन मोहनो ॥
जीत लिये सब भूप भुजन के जोर तें ।
जैसे दंती नसैं सिंह की घोर तें ॥
जीवक ने संग्राम कियो भारी जबै ।
कांति रहित भूपाल भजे तब ही सबै ॥
सचिव वचन तें भारवाह तब आय के ।
पड़ो पांव इक कपट नेह सरसाय के ॥

॥ दोहा ॥

भारवाह तब इम कहो, सुनिये सकल नरेश ।
सुत यह मेरे सेठ को, युद्ध करो मत लेश ॥

॥ चौपाई ॥

भजे जात हैं भूपति जेह । रणकूं तजि आये पुनि तेह ।
वैरिन कूं रिपु वर्णो कुमार । तासूं करी प्रीति तिहिवार ॥
कैयक नृप बोले इम बैन । सब विद्या में जीवक एन ।
जीते जाते वैरी महा । क्षत्रिय कुल कर कारज कहा ॥

गंधोत्कट श्रीदत्त तब, तिनकूं बहु सन्मान ।
करके विदा किये सबै, गये भूप निज थान ॥

॥ चौपाई ॥

गंधोत्कट श्रीदत्त उदार । भली लग्न शुभ योग विचार ।
कीनो ब्याह उछाह महान । बाजे बाजे तबल निशान ॥
दिन दिन करत भये ज्योनार । तृप्त किये सब जन निरधार ।
वसन अभूषन दिये अमान । कियो सुजन जन को सन्मान ॥
शुभ लक्षण भूषित खग सुता । श्रीदत्त सेठ दीनी गुण युता ।
शुभ दिन लगन मुहूर्त्त विचार । अग्नि साख ब्याही सुकुमार ॥

॥ मरहटा छन्द ॥

घरकूं गुमन करि भूषित नव दंपति शोभा अति विस्तारै ।
पुनि नाशै दोष अखिल नन सेती महा कांति तन धारै ॥
अति परम हर्ष उर मांहि धरत है रति मनोज सम राजै ।
तिनि कियो पुण्य पूरब अति भारी तातैं सब गुण छाजै ॥

॥ सवैया-२३ ॥

तिनको वर रूप सुंदर नवै नरनारि विचार करैं मन में ।
इनके जु कपोल लसैं जिमि दर्पण सूरज कांति लसै तन में ॥
रति काम सुंदर किधौं शशि रोहिणि इन्द्र शचीवत है जन में ।
पयोधर ते मकि किन्नरनी युत किन्नर केलि करैं बन में ॥

॥ सवैया ॥

पूर्व कियो है पुण्य जीवक ने सार अति,
ता करि खगेश की जु पाई कन्या सार जू ।
भूपन सूं जीत पाई भयो है प्रताप भारी,
जग के मँझार भई कीरति अपार जू ॥
शोभित सुगेह माँहि भ्रात पाँचसौ समेत,
इन्द्र कैसी नाई रमै त्रिया सों उदार जू ।
धारत है बड़ी ऋद्धि भोगत है सुख सार,
सांतो सब जानों सुधी धर्म के विचार जू ॥

॥ पंचम परिच्छेद समाप्तः ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ त्रिभंगी छंद ॥

श्री सुमति जिनेशं सुमति विशेषं धरो अशेषं ज्ञान मई ।
तुम धर्म प्रकाशो भवतम नाशो शिव मग भासो कर्म जई ॥
तुम हो जग त्राता भवके भ्राता कर्म असाता वेग हरो ।
नथमल तुम ओरैं कर जुग जोरैं करत निहोरैं दया करो ॥

॥ चौपाई ॥

पुनि जीवंधर नाम कुमार । खग कन्या युत भोग अपार ।
भोगत भयो प्रमोद बढ़ाय । सुखसों काल व्यतीत कराय ॥

ऋतु नायक बसंत पुनि आय। धरत भये जन मद अधिकाय।
पुरुष मरारी जे जन सबै। ते विशेष मद धारें तबै॥
सहित मंजरी फल अधिकार। धरत भये तरुवर सहकार।
तिन्हें स्वाय कोकिल करि चाव। वनमें करत भई आराव॥

॥ गीतिका ॥

आयो सु नृप को रूप धरकें ऋतु बसंत सुहावनो।
फूले मनोहर विविध पादप मुकुट सो ललचावनो॥
फूले सरोज विशाल दृग सो फल मनोहर सुख धरें।
पुनि कमल स्वेत सो दशन पंकति अधर विंबा मन हरें॥
ताल तरु सोइ हाथ राजें केलि जंघा सोहये।
शोभायमान मुकंद पग हैं लखत जनमन मोहये॥
बहु सोपरी परफुल्ल सोई बसन तन में सोहने।
पहुव विविध भूषण विराजित चित्त पर जन मोहने॥

॥ दोहा ॥

ऐसो शोभामान के नृप बसंत मनुहार।
आयो वन को रूपधर सब जन मोहनहार॥

॥ चौपाई ॥

ऐसी ऋतु बसंत के माहि। शोभित भयो विपिन अधिकांहि।
कहीं इक कमल समूह अपार। कहीं इक कदली वन सुखकार॥

॥ बेमरी छन्द ॥

कहीं गुलाब मनोहर सोहैं, कहीं चमेली फूल रही।
कहीं केतकी जुही केवरा, कहीं सु दाखें झूम रही ॥
कहीं कुंद मोगरा विराजे, कहीं सेवती बहु विधि साजे।
कहीं नारंगी पंकति सोहे, कहीं चंपो सुवास मन मोहे ॥
कहीं दाड़िम फल सोहैं सारे, सीता फल सोहैं बहु प्यारे।
कहीं निम्बू सोहैं पुनि भारे, नारंगी लाल सरस अति भारे।
कहीं मचकुंद मोतिया राजे, कहीं गुल शब्बू शोभ धरैं।
पुनि नरगस चंपा दाउदी, कहीं सेवती फूल झरैं ॥
कहीं कदंब कचनार विराजैं, कहीं सदा फल झूम रहे।
कहीं निम्बू कहीं सेव फालसे, कहीं केले बहु झूम रहे ॥
मौलश्री अंबा बहु जामन, आडू अरु अंजीर भले।
तूत और खिरनी आदिक फल, बेर आवले अधिक फले ॥

* चौपाई *

ऐसी नील सुबन मनहार। देख सुबन पालक निरधार।
भारवाह नृप पै सो जाय। फल फूलादिक भेट धराय ॥
हे नरेश तुम क्रीड़ा योग। अब बन शोभित भयो मनोग
भोगन लायक भया विशेष। फून फलादिक भरा अशेष।
बनिता सम शोभित वनवेल। नर कुल की गाजत जुत केल
फूलन सहित रही विकसाय। सुफल पयोधर धारत गाय ॥
करैं शब्द तहँ हँस अपार। किधौं वचन बन कहत उदार
कोकिल शुक बोलत वाचाल। मनों बुलावत जन दर हाल।

॥ अडिल्ल ॥

विमल नीर करके सु भरी वापी खरी।
पद्मराग मन मई तहां शोभा धरी॥
संध्या समै उद्योत देख चकवी मही।
दिवस जान चकवा को सँग छोडे नहीं॥

॥ चौपाई ॥

हरित बरन शोभित तरु सार। सघन छांह फैली अधिकार।
बिना काल घन गर्जै उठान। केकी नृत्य करे सुख मान॥

कवित्त

सपरस करती पौन आय मलयागिर सेती।
शीतल अधिक सुगंध वहै बन में सुख देती॥
कामीजन के चित्त कमल परकाश करै है।
ताकर सुख दातार विपिन अति शोभ धरै है॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

बनपालक के सुन वचन भूप। दीनो इनाम ताको अनूप।
बन केल काज निज पुर मंझार। भेरी बजवाई हर्ष धार॥
चढ़के गयंद ऊपर नरेश। त्रिय पुरजन संग सेवक अशेष।
केई हय रथ ऊपर सवार। केई शिविका बैठे उदार॥
निज त्रिय सुत जीवक बुद्धिमान। पुनि मित्र संग लीने सुजान।
कौतुक अर्थी चालो कुमार। बन शोभा देखन हर्ष धार॥

उत्तम नर जीवक आदि जान। मित्रन जुत विपिन गयो पुमान।
वनितान सहित क्रीड़ा करंत। मनमें प्रमोद सबही धरंत ॥

॥ दंडक छंद ॥

किते मखान मँग में, सुगंध लाय अंग में,
गुमान की तरंग में, सुसार गीत गावते।
किते सुवाम साथ ले, सुवीन आप हाथ ले,
मृदंग सार बाथले, सुताल तैं वजावते ॥
कितेक नृत्य चावसों, करैं सुहाव भाव सों,
धरैं सुपाद दाव सों, सु हाथ को फिरावते।
सुरंग रँग लाय के, अवीर कूं लगाय के,
प्रमोद को बढ़ाय के, गुलाल कूं उड़ावते ॥

॥ किरीट छन्द ॥

केशर रँग रँगे वर चीर धरैं तन में सबही सुख मान।
चंदन सार लगाय हिये पुन फूल लिये करमें अमलान ॥
धारत कंठ मनोहर हार निहारत हैं वनको हित ठान।
फूलन की वर गेंद बनाय सुमारत आपस में कर तान ॥

॥ तोमर छन्द ॥

वर फूल गोद भराय। निज नार पैं मुसकाय।
उर नेह कूं सरसाय। निज हाथ सूं बरसाय।

॥ किरीट छंद ॥

भामिनि जोबन मोंहिं फिरे बहु गावत गीत सु भीत चढ़ावत।
बाजत हैं तिनके पग नूपुर कानन कूं अति ही ललचावत ॥
चंदन फूल सुगंध मनोहर ता करिके अति शोर मचावत।
देखत हैं द्रग मो जिनकी रुख काम विथा तिनकूं उपजावत।

॥ सुंदरी छंद ॥

कोइ इक डालन को पकरें भरता सग ही रत हैं बिलसें।
कोइ इक फूलन कों सु मनोहर मोर किरीट करे कलसें ॥
खेचर की सु सुता वर जीवक केलि वसंत करे जल में।
काम उछाह धरे चिरकाल सु प्रेम बढाय हिये हुलसे ॥

॥ सवैया ॥

रति को श्रम वेग निवारन कूं वर जीवक मोद धरे मनमें।
संगले निज बाम सबैं पुनि मित्र चलो जल थान खुशीवन में
असनान नदी लखके जुत मित्रन की उतखेद हरो छिनमें।
बर औसर देख सुखी जल से कहिं केलिकरें सु त्रिया जनमें ॥

॥ चौपाई ॥

जल क्रीडा कर जीवक तबै। निकसि नदी तैं आगे तबै।
यज्ञ करन वारे द्विज दुखी। तिनकूं लखत भयो जु सुखी ॥
ता औसर द्विज दुष्ट असार। मारत भये स्वान तिहिवार।
जो नर अदया चित्तमें धरे। कहा जु वध पर को नहिं करें ॥
आगमग करत स्वान को घात। तिनकूं देख कुमर विख्यात।

नेत्र लाल कर भौंह चढ़ाय । मनैं किये तिनकूं समझाय ॥
अपराध विन स्वान कूं अबै । तुम क्यों मारौ हो द्विज सबै ।
ऐसे पूछत भयो कुमार । कहत भये द्विज वचन उचार ॥

* कवित्त *

जास यज्ञ परभाव द्रिव्य स्वर्ग पावे सुखकारी ।
देव अंगना सहित लहे संशय न लगारी ॥
ताहि कियो अपवित्र श्वान सपरस इह वारा ।
तातें मारत याहि अबै दे कष्ट अपारा ॥

❁ अडिल्ल ❁

विन कारन जग मांहि अधर्मी जन सबै ।
मारत हैं बहु जीव प्रगट मानो अबै ॥
हम तो कारन पाय हतो याकूं सही ।
यातें हमकूं दोष कछू लागे नहीं ॥
विधि ने यज्ञ निमित्त पशूगण ये सबैं ।
रचे आप मति ठान सुनो जीवक अबै ॥
सब जन के सुख हेत यज्ञ ही जानिये ।
तातें यज्ञ विषें वध अवध प्रमानिये ॥
गो मेध के माँहि गाय हनिये सही ।
राज सु यज्ञ मझार भूप हतनो सही ॥
अश्वमेध के माँहि अश्व को मारिये ।
पुंडरीक है यज्ञ जहाँ गज डारिये ॥

औ विविध प्रकार पशुन के गन कहे।
नर तिर्यंच विहंग यज्ञ में जे दहे॥
ते मग कूं निरधार उच्चगति को लहें।
ममय नाहि लगार वेद में यों कहें॥

॥ चौपाई ॥

मुनि वसिष्ट पाराशुर व्यास। इनके वचन वेद युत भास।
इनकूं अपमान जो कहे। ब्रह्म घात पातक सो लहे॥
अंग सहित जो वेद पुरान। वेद ग्रन्थ ऋषि धर्म महान।
इनकी आज्ञा ही सिधि कही। कारन पाय उलंघे नहीं॥
जीवंधर बोलो इर हाल। सुनो विप्र मो वचन रसाल।
वेद अर्थ तुम भाषो येह। सो सब पाप अर्थ दुख गेह॥
ता करि दुर्गति जाय सुजीव। विविधि भाँति दुख सहे अतीव।
जैनी मुनि विन यह सु विचार। और करन समरथ न लगार॥

॥ दोहा ॥

देव शास्त्र गुरु मूढ पुनि, इन जुत जीव अतीव।
पाइय तु हैं या जग विषै, वर्जित ज्ञान सदीव॥
कर विचार चिरकाल जो, जीवंधर तिहिवार।
मान कंठगत श्वान कूं, देखो भूमि मँझार॥

॥ चौपाई ॥

देख श्वान की व्यथा कुमार। उरमें कियो विषाद अपार।
दयावंत नर मो धीमान। निज दुख समपरको दुख जान॥

जाके जीवन को सु उपाय । जीवक करत भयो धर भाय ।
दया धरें जे चित्त मँझार । ऊँच नीच देखे न लगार ॥
जल आदिक सींचो अधिकाय । तो भी लगो न कछू उपाय ।
पूरन होय आयु तिहिवार । कियो इलाज न लगे लगार ॥
प्रान कंठ गति देखो श्वान । ताकी सुगति हेतु मतिमान ।
तबही उर में दया उपाय । धर्म मंत्र नवकार सुनाय ॥

॥ कवित्त ॥

सुनत मंत्र नवकार श्वान निश्चल मन लीनो ।
शुद्ध भाव उर लाय तास सुमरन मन भीनो ॥
सुख सूं शिव मग गमन करत वांछा जे धारें ।
चरसारी वर मंत्र लहैं निश्चय निज लारें ॥
ताही समय मझार श्वान शुभ भाव धरंतो ।
तजत भयो निज प्रान मंत्र नवकार जपंतो ॥
भली सुगति के जानहार प्रानी जग माँही ।
मंत्र मुक्ति पद देन हार सुमरें कहा नाहीं ॥

॥ चौपाई ॥

शुभ भावन सों छोड़े प्रान । यक्षन को वर इन्द्र महान ।
उपजो अंत मुहूर्त्त मँझार । पूरण षट पर्यापति सार ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

उत्पाद सेज में उपजि देव । पूर्ण पर्यापति कर सु एव ।
उठके पुनि चिंतन इमि करंत । निज मनमें अति विस्मय धरंत ॥

को मैं कितते आयो अवार। इह कौन थान सुंदर अपार।
किसि हेत सकल ये मांहि देव। निज शीस नाय झुक करतसेव॥
इह विधि मनमें चिंतन करंत। तब अवधि ज्ञान उपजो तुरंत।
निज पूर्व भव को भेद सार। जानो स्वभाव तैं चित्त मंझार॥
देखो वर मंत्र तनो प्रभाव। मैं भयो श्वान तैं जक्षराव।
जैसे रस कूप संयोग पाय। अति लोह निंदवर कनक थाय॥
या मंत्र तनी महिमा महान। और मंत्र नहीं याके समान।
कंचन गिरी की जो शक्ति सार। किम और अचल धारे विचार॥
याके प्रभाव विष दूर होय। पन्नग को विष व्यापे न कोय।
पुनि क्षुद्र देव उपसर्ग ठोर। करने समर्थ नहिं नेक जोर॥
या मंत्र शक्ति कर सिंह क्रूर। भयकार भील अति शत्रु शूर।
भूपाल कष्ट गति दुष्ट देव। आधीन होय पुनि करे सेव॥

॥ चौपाई ॥

महा मंत्र तैं उदधि अपार। गोखुर सम है है निरधार।
मंत्र प्रभाव भूप श्रीपाल। दुस्तर सागर तिरो विशाल॥
परो वैश्य रस कूप मँझार। गिरि ऊपर वकरा निरधार।
चारुदत्त नवकार महान। दियो भये जुग देव प्रधान॥

" दोहा "

कपि कूं शिखर सम्मेद पर, दियो मंत्र मुनिराय।
अमर होय शिवपुर गयो, धर चौथी पर्याय॥
मंत्र पञ्चकनि सेठ तैं, सुनो वृप भये जीव।

नर सुर के सुख भोग के, भयो भूप सुग्रीव ॥
विंध्य श्री अहिने डसी, मंत्र तबै नवकार ।
दीनो जाय सुलोचना, भई सुरी मनुहार ॥
नाग नागिनी जरत लख, तिनकूं पार्श्व जिनंद ।
दियो मंत्र तत छिन भये, पद्मावति धर नेन्द्र ॥
कीचड़ में हथनी फसी, खग दीनो नवकार ।
अनुक्रम तैं सीता भई, सतियन में सरदार ॥
लखो चोर सूली चढ़ो, अरहदास गुनमाल ।
दियो मंत्र जल मांग तैं, भयो देव दर हाल ॥
चंपापुर में ग्वाल ने, जपो मंत्र अमलान ।
सेठ सुदर्शन सोभयो, तद्भ भव लहि शिव थान ॥
सात व्यसन में रत अधिक, अंजन चोर असार ।
श्रद्धा कर नव मत्र की, विद्या साधी सार ॥

॥ चौपाई ॥

दुष्ट दलिद्री दुखी अतीव । पाप करम में मगन सदीव ।
ऐसे जीवन कूं निरधार । भव तैं मंत्र उतारे पार ॥
बंधु समान पुरुष वह सार । जिन मोकूं दीनो नवकार ।
ताकी वातसल्य कछु जाय । करूं विनय करके अधिकाय ॥
हर्ष धार के यक्ष सुरेश । बैठो आय विमान विशेष ।
सत्य शील युत कुमर पुमान । तास निकट चालो वन थान ॥
आय गगन तैं यक्ष सुरेश । धरे काँति तन किधों दिनेश ।

जीवक की प्रदक्षिणा तीन। नमस्कार कर दई प्रवीन॥
आगे बैठो ताहि निहार। जीवक तब बोल्यो वच सार।
कौन हेत अब देव अधीश। मोकूं तुम नायो निज शीश॥

* दोहा *

यक्ष ईश उर हरप धर, पूरब भव विरतंत।
कहत भयो इम कुंवर सूं, अधिक विनय धरि संत॥

कवित्त

सार मेय पर्याय विषै मोकूं तुम स्वामी।
दियो मंत्र नवकार यही उत्तम जग नामी॥
तो प्रसाद कर भयो जाय यक्षन को नायक।
अचरज यामें कौन मँत्र यह शिव सुख दायक॥

॥ चौपाई ॥

प्रत्युपकार करन के हेत। यतन करै नहिं कौन सुचेत।
जल सेती सींची भूसार। कहा धान नहिं देत उदार॥
जीवक कूं जब यक्ष सुरेश। सिंहासन बैठाय विशेष।
भूषण वसन कुसुम अमलान। तिन करि पूज्यो कुंवर महान॥
मंत्र महातम कथन विशाल। जीवक को भाषो दर हाल।
फूलन की वर्षा वर्षाय। प्रगट पुन्य को उदय दिखाय॥
हाथ जोर कर यक्ष सुरेश। जीवक सों भाषो वच शेष।
मैं तेरो सेवक निरधार। बिना हेतु तुम बुध उदार॥

विषम और समकाज मँझार । सब थल सबही काज कुमार ।
मोकूं याद कीजिये संत । अपनो सेवक जान अत्यंत ॥
सारमेय चर देव सुजान । जीवक सूं इम विनती ठान ।
नमस्कार कीनो शिर नाय । फेर यज्ञ थानक में आय ॥
यक्षदेव कर यज्ञ विनाश । मारे द्विज कर कोप प्रकाश ।
पूरव भव को बैर विचार । दीनो दुख नाना परकार ॥
द्विज बंधने दुख देख कुमार । जाय छुड़ायो दया विचार ।
दर्शन व्रत ताकूं दे तबै । जिन मत में दृढ़ कीने जबै ॥
जीवंधर की भक्ति मंझार । सब ही द्विज कीने तिहिवार ।
पुनि चंद्रोदय गिरि सुर राय । गयो जनम थानक सुख पाय ॥
देव गयो पीछे तिहिवार । जीवक आदिक सकल कुमार ।
परम मंत्र की महिमा तबै । कहत भये हर्षित चित सबै ॥

॥ दोहा ॥

अहा मंत्र महिमा लखो, निंद्य श्वान तज प्रान ।
छिन माँही सुर सुख लहो, सुनत मंत्र निज कांन ॥

॥ चौपाई ॥

मंत्र शक्ति को कहते तबै । गये कुमर अपने घर सबै ।
गुनवंते नर जगत मझार । गुन ही को उर करत विचार ॥
कलप बेल सम तियन समेत । जीवंधर अति हर्ष उपेत ।
भोगत भये निरंतर भोग । विविध प्रकार नवीन मनोग ॥
अब आगे इस नगर मझार । सेठ कुवेर मित्र इकसार ।

धर्मवंत धनवान अतीव । धर्म विषै रत रहे सदीव ॥
ताके विनयवंत गुण धाम । त्रिया विनय माला अभिराम ।
वारिज दल सम नेत्र अनूप । रति समान सोहे वर रूप ॥
गुणमाला तिनके वर सुता । सुगुणमाल मानो सुर लता ।
रूप देख रति रँभा लजे । उत्तम भूषण तन में सजे ॥
ताही पुर मांही धनवंत । और सेठ इक वसे महंत ।
ऋषभदास नामा गुणवान । वंदीजन जस करें बखान ॥
शीलवती नामा त्रिय सार । गुण गन कर जीती वर नार ।
पति सूं करत सनेह अत्यंत । शशि के ज्यों रोहिणी लसंत ॥
देव मँजरी तिनके सुता । कल्प मँजरी समगुण युता ।
धरत कला गुण रूप अपार । शोभित है रति की उनहार ॥

* दोहा *

एक दिवस सुर मँजरी, जोवन कर शोभाय ।
सखियन सँग वन देखने, गई हर्ष उर लाय ॥
ऋतु वसँत आई सही, वन शोभित मनुहार ।
फूल फलादिक तें भरी, करें भँवर गुंजार ॥

॥ चौपाई ॥

ताही वन मांही तिहि घरी । गुनमाला आई गुण भरी ।
चढ़ पालकी माँहि उदार । निपुण सखी लेके निज लार ॥
दोउ मिल कर प्रीति अपार । करत भई जल केलि उदार ।
काम अंग कर पूरन गात । रतिसम शोभित गुण अवदात ॥

॥ सोरठा ॥

चँदन द्रव्य सुलाय, आपस में दोउ तबै।
छींटत बहु सुख पाय, महा प्रीत सरसाय के॥
चूरन उत्तम ल्याय, अति सुगंध दोउ तहाँ।
आपुस माँहि उड़ाय, ता पर वाद भयो तबै॥

॥ चौपाई ॥

गुणमाला पुनि सुर सुंदरी। कीनो तिन बिबाद तिह घरी।
जलक्रीड़ा आदिक सुखकार। तजत भई दोई तिहिवार॥
भई वाद के वश धर टेक। इह विधि करी प्रतिज्ञा एक।
जाको चूरन उत्तम होय। निश्चय जीते अब सोय॥
सबने करी परीक्षा अबै। निर्णय भयो न जाको तबै।
तिनि दोउ मिलि ऐसे कही। सत्पुरुषन पर भेजो सही॥

॥ अडिल्ल ॥

वाद हान के हेत दोउ कन्या जबै।
भेजी चेरी उभय देय चूरन तबै॥
उत्तम वस्तु समस्त बिना जाने सही।
बिना साखी निरधार कदाचित् ह्वै नहीं॥
निज २ चेरी सों जु कही ऐसे जबै।
सत्पुरुषन पै जाय करो निर्णय अबै॥
जग में सज्जन पुरुष कहें साची सदा।
मुख तैं झूठो बचन कहें नाहीं कदा॥

॥ दोहा ॥

युग कन्या के वचन सुन, युगल दासि तिहिवार ।
सत्पुरुषन के ढिग गई, हर्षित चित्त उदार ॥

॥ सोरठा ॥

निज निज चूरन सार, तिनके आगे धर दियो ।
परखन हेत उदार, तिनसों इम कहती भई ॥

॥ दोहा ॥

गुणमाला सुर मँजरी, युग कन्या गुणवान ।
अति सुगंध चूरन दिये, परखन हेत सुजान ॥
कहो सभा के नर सबै, किसको चूरण सार ।
निर्णय कर हम सों कहो, वाद मिटै दुखकार ॥

॥ कवित्त ॥

कसतूरी कर्पूर मिश्र चूरन सुख कारी ।
अति सुगंधता फैल रही दश दिशा मँ भारी ॥
ऐसो चूरन देख सभा के नर जे सारे ।
सखियन के सुन बैन चित्त में अचरज धारे ॥
अति सुगन्ध उत्कृष्ट चूर्ण दोऊ तिन जाने ।
अंतरँग को भेद नेक हूँ नाहिं लखाने ॥
करी परीक्षा नांहि किसी नर ने तिहिवारी ।
गूढ़ वस्तु को भेद जानतो जग में भारी ॥

॥ सोरठा ॥

कोइयक नर तिहिवार, सखियन सों ऐसे कही।
चूरन को निरधार, जो करवो चाहो अबैं ॥
तो जीवक के पास, जावो अब तुम वेग सों।
वह निज बुद्धि प्रकाश, चूरन को निर्णय करे ॥
ता वच सुनि हितकार, सखी उभय हर्षित भई।
जान ठिकानो सार, को न हर्ष उर में धरे ॥

* चौपाई *

जीवंधर के निकट तुरंत। जाय अग्र बैठी हर्षंत।
मति मृगी सम नेत्र विशाल। उभय सखी शोभित गुणमाल ॥
जीवक सों दोऊ गुणराश। शशि सम दशन अंशु प्रकाश।
कोमल वचन महा सुखकार। कहत भई हर्षित तिहिवार ॥
हे स्वामी इह विपिन उदार। ऋतु बसन्त सबजन मनहार।
मंद सुगंध तहाँ बहत समीर। थल २ विमल भरे बहु नीर ॥
क्रीड़ा सहित तहाँ गुणधाम। गुण कन्या आई अभिराम।
सुर मँजरी रूप की खान। आपस में दोऊ गुणमाल ॥
फिर सुगन्ध चूरन की केल। करत भई दोऊ गुणवेल।
निंज २ चूर्ण के गुण हेत। तिनमें वाद भयो शुभ चेत ॥
करी प्रतिज्ञा तिन गुणराश। जाको चूरण होय सुवास।
सो जीते सबमें निरधार। अहो वाद के जाननहार ॥
अहो कुमर तुम हो बुधिवंत। जु चूरन को परखो सँत।

तुम बिन इनको निर्णय कोय। करबे कूं समरथ नहिं होय॥
तब जीवक चूरन युग सार। परखन को लीनो तिहिवार।
जो नर अति विशेष गुण धरे। कहा परीक्षा सो नहिं करे॥

॥ दोहा ॥

वरन और शुभगंध को, निर्णय करि सुकुमार।
सखियन मूं कहतो भयो, ऐसी विधि तिहिवार॥

॥ चौपाई ॥

गुणमाला को चूरनसार। निहचै गुण धारत अधिकार।
अंतरँग गुण धरत विशेष। ऋतु वसन्त को साधिक वेश॥

॥ दोहा ॥

देव मँजरी की सखी, सुनकर अधिक रिसाय।
किये अरुण हग मद धरं, बोली अति दुख पाय॥

❀ अडिल्ल ❀

चूरण को गुण दोष विचारन कूं महा।
चतुर तुम्हीं जु कहावत हो जगमें कहा॥
और सकल बुधिवान देख चूर्ण यही।
उत्तम अधिक सुवास कहें सँशय नहीं॥
जीवंधर सुन बैन फेर तिनसूं कही।
चेटी तुम क्यों कोप वृथा करहो सही॥
इन युग चूरन को गुण दोष प्रगट सबै।
तोहि दिखाऊँ सकल जनन आगे अबै॥

॥ दोहा ॥

जैसी वस्तु निहारिये, तैसी कहिये ताहि ।
प्रगट काठ कूं देख कें, अगर कहो नहिं जाय ॥
ऐसी विधि सों कहि जबैं, ले चूरन युग सार ।
दोऊ कर से कुवर ने, फेंके गगन मँझार ॥
गुनमाला के चूर्ण कूं, उछलत भ्रमर अपार ।
बेढ़त भये सुगंध कूं, करें सर्व गुंजार ॥

अडिल्ल

देवमँजरी चूर्ण उड़ायो जु तहाँ ।
भ्रमर न एक लुभायो ता ऊपर जहाँ ॥
गुणवंतन को पक्षपात गुण ही सरे ।
गुणविन कोउ पक्ष जगत में ना धरे ॥
देवमँजरी को चूरण जीरण भयो ।
ता करि तुच्छ सुगन्ध तास माँही ठयो ॥
होत नवीन जु वस्तु सहित गुण जगत में ।
ता करि कारज सिद्ध होत हैं पलक में ॥
देख निपुणता कुमर तनी जहाँ जन सबै ।
तास प्रशंशा करत भये हरषित जबै ॥
सो प्रवीणता कहा नास कर वाद को ।
निर्णय नेक न होय परम आल्हाद को ॥

॥ सोरठा ॥

उभय सखी निरधार चूरन को कर कुमर सों।
करि प्रणाम पुनि सार गुन वर्णन करती चली॥

॥ दोहा ॥

दोउ कन्या सो तबै. जाय सखी वृतान्त।
निज निज चूरन को कहो, विधि सूं उर हर्षंत॥
गुणमाला निज जीतिले ,हर्षित भई अपार।
जग में जय कूं पायके, को न हर्ष उर धार॥
करन प्रशंसा सकलजन, जीवक की तिहिवार।
देखो चूरन को कियो, कैसो इन निरधार॥

॥ चौपाई ॥

सुर मँजरी देख निज हार। उरमें भई उदास अपार।
ईर्षा कर दुखित जो होय। ताकू न्याय रुचे नहिं कोय॥
पुनि जल केलि करन के हेत। गुणमाला उर हर्ष उपेत।
देवमंजरी कूं तिहिवार। टेरत भई सनेह विचार॥
सुरमंजरी कोप उर धार। जल की केलि करी न लगार।
ऐसे करके नार सदीव। धारत है उर क्रोध अतीव॥
गुणमाला बहु तोषित भई। सो भी अपने घर को गई।
सुरमजरी छोड वन थान। उलटी फिरी रोप मन आन॥
पुनि तिनि करी प्रतिज्ञा सार। कुवर विना नर रूप अपार।
कामदेव के सम जो होय। तो भी निहचै लखे न कोय॥

ऐसो हठ कर सुरमंजरी । निर्जनगेह विषै दुखभरी ।
निज सखियन जुत कीनो वास । सदा रहत चित मांहि उदास ॥
कभी इक सुरमंजरी उदार । बीन बांसुरी ताल सितार ।
सखियन संग बजावत सोय । गावत उर में हर्षित होय ॥
जीवंधर के गुण सुमरंत । गुणमाला उर मांहि अत्यंत ।
ता दरशन की वांछा सदा । धरत भई विसरे नहिं कदा ॥
एक दिवस गुणमाला सार । रमत भई ता विपन मझार ।
केलि करत सखियन के संग । लसत विविध आभूषण अंग ॥
धरत कुसुम अब लसत ललाम । देखत उपजावत है काम ।
रम्भा सम वर रूप अपार । गुणगण धरत विविध परकार ॥
करी गंधमादन तिहिवार । पुरतें निकसो खंभ उपार ।
अंजन गिरि समदेह उतंग । झरत बदन तें मद सर्वंग ॥
शीघ्र चाल तैं करी महान । अंकुस को मानत नहिं आन ।
पुर को भय उपजावत जाय । निज लीला सु भ्रमन कराय ॥
थंभ समूह करत अति खंड । मंदर सो ढाहत बलवंड ।
करत उच्छेद जनन को क्रूर । चल्यो जाय द्रुम छेदत भूर ॥
लता समूह उखारत जाय । तन पर डारत रज अधिकाय ।
सूंड फिरावत बारंबार । हस्ती और बुलावत सार ॥
चिंकारत अति शब्द करंत । जगत वधिर करतो भयवंत ।
दीसे करी महा विकराल । मानो जम आयो दर हाल ॥
व्याकुल करत चलो गज तबै । हाहाकार करैं जन सबै ।

निकस नगर तैं विपन मंझार। तरु उखार रोको मगसार ॥
ऋतु वसंत को उत्सव सार। तहां करैं थे लोक अपार।
काल रूप हाथी कूं देख। होत भये भयभीत विशेष ॥
गुणमाला के परिजन अवैं। कन्या कूं तजि भागे सबैं।
विपति निकट प्राणीन के होय। निश्चय सन्मुख रहे न कोय ॥
तब कन्या गजको भयधार। करै अकेली रुदन अपार।
अतिशय कर नारी जग माहिं। कायरता धारैं शक नाहिं ॥
कन्या कूं रोवत लख धाय। निज उरमें अति दया उपाय।
कन्या कूं पीछे कर दई। आप करी के सन्मुख भई ॥
कन्या घातक गज भयकार। पहिले मोहि हते निरधार।
ऐसो चित में साहस लाय। खड़ी रही कन्या ढिगधाय ॥

* दोहा *

जे जगमें साहस धरैं, ते निश्चय अब जान।
निज बल फोरैं तब तलक, जब तक घटमें प्रान॥
बांधव सोई जानिये, सुख दुख में सम होय।
कष्ट विषै तज जाय, जे ते वैरी अवलोय ॥
कोलाहल सुनिके तबैं, जीवंधर सुकुमार।
गज के सन्मुख सो गयो, धीरज बल अतिधार ॥

॥ अडिल्ल ॥

जीवंधर वच क्रूर कहै गज सों तबै।
सन्मुख आवत भयो उठाये कर जबै ॥

कुंभस्थल कर घात करी निर्मद कियो।
व्याकुल भयो अतीव केलि सब तजदयो॥
जैसे महा भुजंग अधिक दुख पाय के।
गरुड़ घात तैं भजे हिये भय लाय के॥
कहीं कदाचित् संत सर्व गुण कूं धरे।
काहू पे उपकार किसी को दुख करे॥
जो यह कारज करे नहीं निश्चय कहा।
तो जग की थिति होय किसी विधि सों सदा॥
हाथी को भय नसो तबै परिवार के।
जन सब आये निकट कुंवर की लार के॥
मानिनि के शुभ योग होय थिरता जबै।
बँधु भाव सब धरें प्रीति करके तबै॥
आपस में गुणमाला और कुमर जबै।
अवलोकन करके जु काम उपज्यो तबै॥
मानिनि के जग माँहि दुख पीछे सही।
अतिशय कर सुख होय यही संशय नहीं॥

* दोहा *

मूरतवंत सुमदन सम, रूप कुंवर को देख।
कन्या उर में काम की, पीड़ा भई विशेष॥

॥ सोरठा ॥

कन्या रति उनहार, कृश अंगी सुखदायनी ।
देख कुंवर तिहिवार, कामबाण करिके हत्यों ॥

॥ चौपाई ॥

जीवक रूप काम को धाम । ता करि गुणमाला गुण राश ।
बंधन भई गाढी निरधार । प्रेरत सखी चले न लगार ॥
सखियन को प्रेरी निज धाम । पहुँची देह मात्र गुण धाम ।
चित्त बसे है कुंवर मझार । बिसर गई तन सुध बुध सार ॥

॥ अडिल्ल ॥

कुंवर वियोग रोग कर गुणमाला तबै ।
पीड़ित भई अतीव सुहात न कछू जबै ॥
खान पान पुन शयन विपरित ना करै ।
चित्त में बसत कुमार भले लोचन धरै ॥
ना कन्या के लगे पँच शर मदन के ।
सोषण मोहन तापन आदि अर्चन के ॥
बिन कारण ही हँसै मदन की गहल में ।
कब ही अधिक उदास बसे निज महल में ॥
तिस वियोग में उपजी गरमी सो सही ।
चंदन कमलन कर उप शांत भई नही ॥
विरह के उपचार विविध कीजे सही ।
अंतरंग को दुख मिटे कबहु कहीं ॥

॥ चौपाई ॥

नाना जतन किये तिहिवार । दुख शोक नहिं मिटो लगार ।
बिना विवेक जल निश्चय धोय। मोह अग्नि कैसे शम होय ॥
निज सखियन सों कन्यासार । करत भई इह विधि सु विचार ।
रागअंध जे जग में जीव । हित जु अहित जानें न अतीव ॥
क्रीड़ा करवे कूं सुकुमार । शिक्षा देकर विविध प्रकार ।
कन्या कीर जीवक के पास । भेजत भई इष्ट धर आश ॥

* दोहा *

कीर जाय तत छिन तबै, लखो कुंवर छवि वंत ।
हर्ष धगो उरमें बड़ो, प्रीति सहित मतिवंत ॥

॥ कवित्त ॥

गुनमाला सब देश विषै जग जीवन कूं अति ।
वल्लभ है सुखकार धरें गुण रूप विमल मति ॥
अतिशय कर अब जान आपनो जीवन तुम तें ।
मानत हैं बहु सफल सुनो स्वामी तुम हित तें ॥
तुम वियोग तें गुणमाला निज सरवस तनकी ।
सुध बुध रही सु भूल कहत नहिं अपने मनकी ॥
खान पान नहिं करें धरें आकुलता भारी ।
दरशावत हैं मरन अवस्था अति दुखकारी ॥
हे जीवंधर सुनो वैन मेरे हित करता ।
कन्या जिहि विधि प्राण धरे सो कर सुख करता ॥

सकल अवस्था प्रगट करन अपनी तिन सोंको ।
भेजो है तुम पास कहाँ है सो मैं तो कों ॥
ताको सुन संदेश कुंवर अतिशय निज मनमें ।
धारत भयो प्रमोद महा फूल्यो निज तनमें ॥
भले थान में होय जलद वर्षा सुखकारी ।
हर्ष कौन के होय नांहि इस जगत मँझारी ॥

॥ दोहा ॥

प्रत्युत्तर दे कीर कूं, भेजत भयो कुमार ।
निःकारण वाँछा धरे, ते नहिं करत विचार ॥
कुंवर संदेशो पत्र जुत, लेके कीर सुजान ।
गुणमाला के निकट तब, गयो हर्ष उर आन ॥
अतिशय कर इस जगत में, पक्षी भी हितकार ।
कारज अपने स्वामि को, करे महा सुखकार ॥

॥ चौपाई ॥

पत्री सहित कीर कूं देख । कन्या हर्षित भई विशेष ।
निज प्रियवस्तु मिले जो आय । निश्चय हर्ष बढ़े अधिकाय ॥
पत्र कुंवर को बान्च सुजान । आप समान अवस्था जान ।
कन्या उर में हर्ष अपार । करत भई सुख को दातार ॥
कन्या के मनकी सब बात । सखी वचन तें जननी तात ।
जानत भयो हिये दुरहाल । जीवक विषं भई रतबाल ॥

अडिल्ल

सेठ कुवेर मित्र इह विधि सुनके तबै।
कियो विचार विनयमाला त्रियजुत जबै॥
कन्या को जु विवाह अबै कर दीजिये।
ता करिके सुख होय ढील नहिं कीजिये॥
रूपवंत कुलवंत भले गुण गण धरे।
शक्तिवंत मतिवंत तरुनि जग जस करे॥
भागवंत गंभीर प्रगट जीवक सही।
या सम वर अति योग जगत माहीं नहीं॥
वर कन्या को है संयोग भलो सही।
वय गुण रूप समान सेठ ऐसे कही॥
सकल कला में निपुण देख कन्या तनो।
मन आसक्त भयो जीवक माहीं घनो॥
या कारण ते जीवंधर सुकुमार सो।
कीजे कन्या को विवाह निरधार सो॥
या सम नर गुणवान रूप धारक सही।
जगत विषै सु प्रवीन और दीसे नहीं॥

॥ चौपाई ॥

दंपति ऐसो कर सुविचार। अति प्रवीन नर युग तिहवार।
गंधोत्कट पै हर्ष उपेत। भेजे तिन्हें ब्याह के हेत॥
गंधोत्कट श्रेष्ठी तिहिवार। मित्र वदन तें सुन निर्धार।

गुणमाला युत कुवर ललाम । भोगत भयो भोग निजधाम ।
दुर्लभ योग तिया कूं पाय । कौन पुरुष नहिं प्रीति बढ़ाय ॥

॥ रोडक छन्द ॥

विभ्रम हास विलास, हृदय लोचन वर करि के ।
कोमल वचन प्रकाश, प्रीति अति ही उर धरिके ॥
इन आदिक गुणमाल, देत सुख नाना पिय को ।
उपजावत सो भई पुण्य फल तें पति हिय को ॥

॥ छप्पय ॥

मिलै धर्म तें राज धर्म तें होय नाक पति ।
मिले धर्म तें रूप धर्म तें होय विमल मति ॥
दिन दिन होय अनंद धर्म तें बढ़ै ऋद्धि घर ।
होय अग्नि जलरूप धर्म तें जाय उदधितर ॥
अति विकट पवन परवत उदधि सिंह प्रबल अरि रण विषै ।
इक धर्म सदा रक्षा करे, मिलै अचल संपति अक्षय ॥

॥ षष्ठम परिच्छेद समाप्त ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ छप्पय ॥

पदम पदमवर वरन लसत जगमग जगमग तन ।
भव अर्णव जल हरन, अनलकण करम सघन वन ॥

॥ चौपाई ॥

अहो लखो अचरज सु महान। मेरो भुज बल यह नहिं जान।
जैसे लक्ष्मण को बलसार। रावण ने जानो न लगार॥
मोकूं विद्यमान थिति जान। भील भयंकर बन के थान।
इन जीते भुजबल कर जाय। तब तें मो चित शल्य रहाय॥

॥ अडिल्ल ॥

भील नाथ ने दिये वसन धन लाय के।
सो सबही इन लिये प्रीति उपजाय के॥
मो बैठे सु प्रवेश कियो पुर माँहि जू।
चक्रवर्ति कीसी नाई शक नाँहि जू॥

॥ चौपाई ॥

नंद गोप ने कन्या दई। सो विवाह विधि कर इन लई।
वस्त्राभरण विविधि परकार। बातें पाये इन निरधार॥
फिर विद्याधर की वर सुता। गंधर्व दत्ता गुण गण युता।
वीणा वाद विषै इन जीत। परणी ताहि हिये धर प्रीत॥
मोह उलंघ कोप सरसाय। महाबली भूपति अधिकाय।
धनुर्वेद के जानन हार। तिन तें युद्ध कियो अधिकार॥
तोभी मेरे मनके माँहि। क्रोध धनंजय उपजी नाँहि।
निज समान विन कोप उदार। सज्जन पुरुष न करे विचार॥

॥ चौपाई ॥

भूप कृतघ्नी की बहु सेन । चली कुंवर ऊपर दुख देन ।
मूरख नर को कोप महान । बिना ठिकाने बढ़त महान ॥

॥ दोहा ॥

भारवाह की सेन ने, बेढ्यो जाय कुमार ।
ज्यों कुरँग गण सिंह कूं, बेढ़त हैं अविचार ॥

* चौपाई *

जीवंधर लख सेन महान । उठो कोप करके बलवान ।
सुसा समान नरन कूं देख । को नहिं सन्मुख होय विशेष ॥
रण कूं उद्यत लखो कुमार । गंधोत्कट उर में निरधार ।
सुत कूं श्रेष्ठ वचन हितलाय । कहत भयो ताकूं समझाय ॥
हे सुत अब भूपति की लार । कहा युद्ध को कियो विचार ।
निज हित वाँछक पुरुष प्रधान । करैं काज निज कुल बल जान ॥
उपजे हम कुल वैश्य मझार । यह भूपालक राज उदार ।
या तैं युद्ध किये मतिवान । कैसे अखय रहे निज जान ॥
ऐसे प्रतिबोधे सुकुमार । रन तें ताकू दियो निवार ।
जे हित वाँछक पुत्र अतीव । पिता वचन लंघैं न सदीव ॥

* दोहा *

भूपति सों अति प्रीति के, हेत सेठ तिहिवार ।
सुत के कर बांधत भयो, पीछे कूं युग सार ॥

उत्तम सुत जे जगत में, तिनको यही सुभाय ।
आज्ञा पालें तात की, और न करें उपाय ॥

॥ चौपाई ॥

विधि युत सुत कूं बांध तुरंत । भूपति ढिग ले गयो महंत ।
दोषवान मो सुत भूपाल । तुम ढिग ले आयो दरहाल ॥
सुवरण रतन आदि बहु लेव । आयो शरन छोड तुम देव ।
वैरी भी जो पायन परे । दया भूप तिन ऊपर करे ॥

❀ अडिल्ल ❀

विविध भाँति प्रतिबोध सेठ करतो भयो ।
तो भी महा प्रचंड कोप भूपति ठयो ॥
संत नरन सों विनती सुख के हेत हैं ।
किये नम्रता दुष्ट महा दुख देत हैं ॥
कोटपाल यम दंड लियो सु बुलाय के ।
ताको जीवक सोंप कहो हन जाय के ॥
नीच नरन की बुद्धि जगत के माहिं जू ।
अतिशय करके नीच होय शक नाहि जू ॥
पिता वचन हितकार जान जीवक तबै ।
भारवाह भूपाल हनो नाहीं जबै ॥
तात वचन परवीन पुरुष पालें सही ।
प्राण जाय निरधार तऊ लंघैं नहीं ॥
जौलों जमसम कोटपाल यम दंड जू ।

कुवर हतन को उद्यत भयो मचंड जू ।।
तौलूं चित्त मझार कुंवर भय टार के ।
जपत भयो नवकार मंत्र हित धार के ।।

।। चौपाई ।।

मंत्र उच्चार करत तिहिवार । देव सुदर्शन आयो सार ।
निज स्वामी कूं कष्ट जु परे । कहा सहाय संत नहिं करे ।।
ऐसी देख अवस्था यक्ष । ताहि गगन लेगयो सु दक्ष ।
जाके पुण्य मित्र सुख दाय । ताकूं बैरी कहा कराय ।।
सकल लोक तब शोक अपार । कीनो व्याकुल है निरधार ।
करमन के बंधे जगजीव । उरमें सोचत भये अतीव ।।
सत्यंधर ने कुमति महान । करी कहा कहिये अब जान ।
याकूं दियो जु निज पद सार । इन वाको मारो निरधार ।।
अहो काम कैसो अवतार । पुण्यवंत यह महाँ कुमार ।
भारवाह ने हतो विनीत । छोड़ दई याने सब नीति ।।
दुष्टन में यह दुष्ट महान । पापिन में पापी अघ खान ।
दुर्जन में दुर्जन मति हीन । निंद्य कर्म में अति परवीन ।।
पुरके लोक सकल तिहिवार । ऐसे चिंतवें चित्त मझार ।
भ्रातन युत जननी दुख पाय । कियो शोक उरमें अधिकाय ।।

।। अडिल्ल ।।

समवर्ती यह काल कहावत जगत में ।
हम भ्राता सुंदर मति कीनी पलक में ।।

है असार निरधार दुष्ट बुद्धी महा।
तातें शोक किये कारज हमकूं कहा॥
महा भाग जमके आवास कहाँ गयो।
किधो मित्र तोहि आप गगन में लेगयो॥
अथवा ताकूं हरो कुधी अरि ने अवै।
तो वियोग तें दुखी महा हम हैं सवै॥
अतिशय करके दुष्ट भाव सेती भरे।
दीखत जगमें बहुत पुरुष दुर्जन खरे॥
सज्जन जग के माँहि लखे विरले कहीं।
चंदन वृक्ष जु अल्प घने पीपल मही॥

॥ चौपाई ॥

जैसे काग प्रचुर जग माँहि। हँस तुच्छ पाइये वहु नाहि।
खार नीर थल २ अधिकाय। मिष्ट नीर पुनि अल्प लखाय॥
वनमें तृन पइयत सव ठाम। शालि खेत कहुँ है अभिराम।
सज्जन पुरुष कष्ट तें पाय। दुर्जन जन थल २ अधिकाय॥

॥ कवित्त ॥

कहा पराक्रमवंत कुवर यह भुवन मझारा।
लावण्यता कूं उदधि स्वरूप गुण सहित उदारा॥
कहा भूप हम प्रथम स्वामि सूं द्रोह करो है।
अव जीवक विध्वंस पाप सूं अखिल भरो है॥

॥ चौपाई ॥

सब तत्र ऐसे करत विचार। तत्व ज्ञानतें शोक निवार।
तत्वज्ञान रूपी जल पाय। कहा शोक पावक न बुझाय॥
मात पिता मुनि वचन प्रवान। उरमें सुमरें अति सुख खान।
महा शोक आर्णव सूं पार। छिनमें होत भये निरधार॥
जीवक कूं बैठार विमाण। चलो लेय यक्षेश महान।
पुण्य विभव युत हैं ये जीव। तिनकूं दुर्लभ कहा सदीव॥
जीवंधर उरमें तिहिवार। हर्ष विषाद न कियो लगार।
संपति विपति विषै नर संत। सम परिणाम करे मतिवंत॥
चंद्रोदय गिरी ऊपर सार। शोभित भुवन उतंग अपार।
तहां कुवर कूं हित उर लाय। लेय गयो यक्षन को राय॥

अडिल्ल

रतन कनक मय भवन उतंग सुहावने।
और अप्सरा वृन्द परम मन भावने॥
यक्षराय को देख कुंवर हर्षो सही।
अपनो उदय निहार कौन हर्षै नहीं॥
पुनि जीवक सुकुमार विषै तिन हित करो।
सिंहासन पै थाप छत्र सिर पर धरो॥
ढोरें चमर समूह अपछरावाम सूं।
करत भयो अभिषेक सु उत्तम भाव सूं॥
गंगा सीता सिन्धु नदी अमलान जू।

तिनके द्रह अर कुंड तनो जल आन जू ॥
पुनि समुद्र को विमल तोय शुभ लाय कं।
जीवक को अभिषेक कियो हर्षाय कं॥

॥ चौपाई ॥

गीत नृत्य वादित्र बजाय। करि उत्साह पुष्प वरषाय।
भूषण वसन माल मनुहार। तिन करिके पूजो सुकुमार॥
फेर कुवर कूं विद्या तीन। दीनी यक्ष ईश परवीन।
बहु रूपणी प्रथम मनुहार। दूजी बंध मोचनी सार॥
तीजी विष मोचनी महान। दुर्लभ ये विद्या पर धान।
जीवक सूं अनुराग बढ़ाय। करत भयो अस्तुति इमि भाय॥
कृपा तिहारी तैं मैं स्वान। भयो पवित्र देव गुण खान।
तुम मेरे बिन कारण संत। हितकारी हो बंधु महंत॥
पुनि मेरे वच सुनो कुमार। एक वरस पीछे निरधार।
राज्य भार धरिके मतिवान। भोगोगे सब धरा महान॥
फेर नृपति धरकें वैराग। श्रेष्ठ महातप कर बड़ भाग।
कर्म खिपाय मुक्ति को राज्य। साधोगे निश्चय महाराज॥

॥ दोहा ॥

इस प्रकार यक्षेश ने सबे, कीनी थुति मनुहार।
सुखसों तहँ राखत भयो, महा प्रीति उर धार॥

॥ चौपाई ॥

पुनि कितने इक दिन पर्यंत । सुखसों कुमर तहाँ निव सँत ।
देशान्तर चलिवे की चाह । जान अवधि बलतें सुरनाह ॥
शुभअर अशुभ पदारथ माँहि । मनुष करे वाँछा शक नाँहि ।
होनहार माफ़िक मति होय । निश्चय कर जानो भविलोय ॥
कुंवर तबै ऐसी विध चयो । हे जख नायक मो मन भयो ।
देशान्तर देखन कूं अबै । करों तीर्थ यात्रा में सबै ॥
हित करता यक्षेश महान । जीवंधर की वांछा जान ।
माने कुंवर तबै बच सार । होनहार तिस उदय विचार ॥
फेर कुमर सेती विरतन्त । कहत यथारथ भयो तुरंत ॥
तीन काल की बातें देव । निश्चय कर जानें स्वयमेव ।
यक्ष सुदर्शन ने मगसार । दियो बताय चलो सुकुमार ।
सुर के गुण सुमरत उर सोय । मित्र सोई हितकारी होय ॥
इच्छा सेती विपनि मझार । चल्यो अकेलो जात कुमार ।
हर्षित चित्त महा बलवान । भय वर्जित जिमि सिंह महान ॥

॥ दोहा ॥

विपिनविषै पादपघने, विविध जात मनुहार ।
तिनकी शोभा देखतो, विचरत भयो कुमार ॥

॥ कुसुमलता छन्द ॥

अगर अंब आंवले अमलतास अनार भले ।
अमल वेंत दाडिम अंजीर साखी शोभित अधिक फले ॥

कदंब कैथ कंकोल कलोंजी, कटहल जंब तहां लूम रहे।
कंदूरी कचनार करदली, करहु करौंदा झूम रहे॥
करना और कायफल केरा, खिरनी खैर खजूर फली।
गोंदी गूमल अरुन घुंघची, ठौर ठौर शोभैं सुभली॥
चारौली के तरु अति राजैं, चन्दन अधिक सुवास करे।
छारछरीला अधिक छुहारे, उत्तम उन्नत शोभ धरे॥
जावित्री जामन जभीरी, जातीफल तज वृक्ष बढ़े।
तंतरीख तालीस तमोलन, तूत ताल के पेड़ बढ़े॥
दाख दाल चीनी अतिसुंदर, देवदारु बहु शोभ धरें।
पीपल पुनि पद्माख मनोहर, पिस्ता पीलू लाल झरें॥
उन्नत तरु पतंग के सोहे, ठौर ठौर मवाल भले।
फूले अरुण पलाश मनोहर, झूरत पवन तें पत्र गले॥
नींबू नीम नारियल लूंमे, नौजा के तरु मिष्ट खरे।
तूत फालसे थल थल राजैं, टूट टूट भू माँहि परे॥
वाय विडग विजौरा वदली, मौलश्री अति फूल रही।
विनैसार बादाम लेल तरु, वरना की शुभ वास ठई॥
मिरच मजीठ मरहठी माजू, महुआ तरु बहु सेव फले।
सिरस सदाफल सीसौ सेंवल, शिवासाल के पेड़ भले॥
सघन सौंजना और संभालू, सीताफल पुन संगतरे।
झूम रहे अति कठिन सुपारी, सुंदर फल झर भूमि परे॥
चंपौ पुनि मोतिया मोगरा, दाऊदी सदवर्ग खिले।

नीलोफ़र गैंदा पाडल, गुलशब्बू के बहु सुमन भले ॥
सदा गुलाब गुलाब मनोहर, अरुण गुल लाला फूल रहे ।
गुल खैरू गुल और रंगन के मचकदा के कुसुम ठये ॥
कमल केतकी और केवरा, वास जास महकाय रही ।
दोना मरुवा राय चमेली, थल थल में बहु फूल रही ॥

॥ दोहा ॥

इत्यादिक उपवन तनी, शोभा कही न जाय ।
फूले फले अनेक विधि देखत मन हरषाय ॥

॥ चौपाई ॥

अति सुगंध दस दिशा मँझार। फैल रही अति सुख करतार ।
ता करि अलि समूह विचरंत । कोकिल शुक झँकार करंत ॥
कहीं हँस बक तीतर काक । कहीं मोर बोले वरवाक ।
कहीं तूती मैना मनुहार । कहीं चकवा चकवी अतिसार ॥
कहीं इक नीर बहै अमलान । पीवत आय करी तिहि थान ।
फूले तामें पंकजसार । सारस गन डोले मनुहार ॥

॥ सोरठा ॥

कहीं केहरि ने आन शीस हनो गजराज को ।
मोती गण अमलान ताके मस्तक तें परें ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

कानन में बहु सिंह फिरें, वर कुंजर यूथ विहारत ।
रीछ विनोद करें बहु जंबुक, कोकिल मोर पुकारत ॥

रोज सुसागण सारंग बाँदर, शूकर ओर निहारत।
जीव कुमारग में चलते, उरमें भय नेक न धारत॥

॥ दोहा ॥

या प्रकार वन देख के, भयो न कायर सोय।
संपत विपत निहार के, मूढ़न कं भय होय॥

॥ चौपाई ॥

कैयक गज समूह वनथान। करनी कलभ सहित भयवान।
दावानल मधि जरते सवै। करत पुकार लखे तिन तवै॥
तिनकी रक्षा की उर माँहि। इच्छा करत भयो शक नाँहि।
पर की विपति देख मतिवंत। वड़ी बुद्धि धारैं जन संत॥
वृष को मूल दया निरधार। सो प्राणी रक्षा तें सार।
अशरण जनको शरण जु होय। धर्मवंत को लक्षण सोय॥
दया सहित उर माँहि विचार। कौन उपाय करो इह वार।
जो जन हित वांछक जु सदीव। दया करे सव ठौर अतीव॥
तव ही जीवक पुण्य प्रभाव। पावक अरु वादर उमगाय।
गरज २ बिजली चमकंत। मूसल सम धारा बरसंत॥
पुण्यवंत जो इच्छा करे। सो कारज छिनमें सब फुरे।
धर्मवंत को कारज सार। जगमें सफल होय निरधार॥
जंतुन की रक्षा लख संत। हरषो कुंवर दयालु तुरंत।
जीव दया तें धर्मी जीव। उरमें हर्षित होय सदीव॥
तव सव ही जनने तिहि थान। जीवक को अति धर्मी जान।

निज उपसर्ग निवारक संत। लख के को हर्षै न तुरंत ॥
तीरथ की वांछा उर करे। बन तैं निकसो भय नहिं धरे।
मन थापे जिनधर्म मँझार। गयो और बन माँहि उदार॥
शुभ तीरथ आवे जिहि थान। पूजा तहाँ करे गुणवान।
आगे सहस कूट जिन धाम। मणि तोरण युत लखो ललाम॥
हर्ष धार तहँ गयो कुमार। जुड़े कपाट लखे तिहि द्वार।
उन्नत जिनमंदिर कूं देख। उरमें विस्मय भयो विशेष॥
निज करते सपरस तिहिवार। खोले युगल कपाट उदार।
पुनि जिन मंदिर भीतर गयो। निसही निसही कहतो भयो॥
फटिक रूप सुवरण मणि मई। प्रतिमा तहाँ अनूपम थई।
शशि सूरज की किरण समान। तेजवंत हर्षो मतिवान॥
भक्ति सहित थुति विविध प्रकार। पूजा सहित करी अतिसार।
कर जोड़ शीश निज नाय। नमस्कार कीनो गुण गाय॥
जब लग सभा शाल में जाय। बैठो जीवक अति सुख पाय।
तब लग यक्ष ईश युत नार। कोइयक आयो कौतुक धार॥
पुन्यवंत नर लख जख ईश। नावत भयो कुंवर कूं शीस।
देखो पुण्य महातम एव। देव करैं बहु नर की सेव॥
सहित यक्षणी करत प्रणाम। देख यक्ष कूं कुवर ललाम।
सम्यक्‌दर्शन अँग समेत। ताहि दिढायो हर्ष उपेत॥
जक्ष कुवर तैं दर्शन पाय। अंगीकार कियो शुद्ध भाय।
ईख विषै जल वर्षै जोय। कहा न सुख को दाता होय॥

दर्शन दान कियो इन इष्ट । इह नर धर्म मूर्ति उत्कृष्ट ।
अणिमादिक विधि धारक देव । मान छोड़ कीनी तसु सेव ॥
प्रत्युपकार करन के हेत । जीवक कूं पुनि यक्ष सुचेत ।
लेय गयो निज गेह मँझार । धरम उदय युत शोभ अपार ॥
पुनि सिंहासन पर बैठाय । दिव्य वसन भूषण सुखदाय ।
दिव्य गुणन कर युत मनुहार । दिये कुवर कूं प्रीति विचार ॥
रण की केल करन के बाण । देत भयो पुन यक्ष महान ।
निज उपकारी जनकूं सही । ज्ञानवान कहा पूजे नहीं ॥
पुण्यवंत नर जगत मझार । अतिशय पूजनीक निरधार ।
तातें साता वाँछक जीव । धर्म विषै रत होय सदीव ॥
पुनि थुति कीनी विविध प्रकार । फेर तहाँ ते चल्यो कुमार ।
अचल गुफा सरिता अमलान । देखत जाय हर्ष उर आन ॥
अनुक्रम तें इह कुंवर उदार । देश आठ पल्लव मनुहार ।
पहुँचत भयो हर्ष उर लाय । शोभित देश तास अधिकाय ॥
बन उपवन करि अति शोभंत । पादप पल्लव सहित लसंत ।
लघु सरवर सरता सरताल । कूप वापिका तहाँ विशाल ॥

* दोहा *

तास देश के मध्य में, लसत नाभि वतसार ।
चंद्राभा नामा पुरी, शशि मंडल उनहार ॥

॥ चौपाई ॥

वलयाकार शोभित अति शाल। दरवाजे बहु अधिक विशाल।
खाई जलकर भरी अतीव। केल करें तामें बहु जीव ॥
मणिमय शोभित महल उतंग। कनक मई हैं शिखर अभंग।
पंकति वंत दिपैं अभिराम। मन हर्त्ता तिनमें चित्राम ॥
तिनमें बसें सुधी जन घने। संयम शील विषै सब सने।
सकल कला में निपुण विनीत। तजैं नहीं निज कुलकी रीति ॥
महा साधु दानी गुण भरे। वात्सल्य अंग धारे खरे।
करें सकल उत्तम व्यापार। हिंसा वणज न करें लगार ॥
नारी महा रूप की खान। पतिव्रता गुण धरे महान।
मधुर वचन बोलैं मनुहार। अति उदार मन रंजन सार ॥
घर घर विषै त्रिया गुणगांन। ताल सहित चूके नहिं तान।
कोकिलवती हैं कंट अनूप। सुरतिय सम धारें वर रूप ॥
जिनवर के तहाँ भवन उतंग। चंद्रकांत मणि मई अभंग।
कनक मई कलसे अतिसार। शिखरन पै सोहै मनुहार ॥
करे चंद्रमा जब उद्योत। जगमगात तिनको जब होत।
रूपाचल कीसी उर भ्रांति। उपजावत है जिनकी क्रांति ॥
बाजे बजें तहाँ अति जोर। मानूं घन गर्जत है घोर।
शिखरन पे ध्वज गण फहरात। किधौं भव्यजन कूं जु बुलात ॥
अगर तहाँ खेवें भव्य जीव। ता करि धूमा उठै अतीव।
किधौं जनन को अघ समुदाय। धूमा के मिस उड़ नभ जाय ॥

भव्य तहाँ नित पूजा करें। भव भव के संकट अघ हरें।
इस प्रकार नगरी मनुहार। स्वर्गपुरी सम शोभ अपार॥

॥ पद्धडी छंद ॥

तापुर को नृप धनपाल नाम। वलवंत रूप युत गुण ललाम।
भुजवल तें अरि जीते अनेक। परजा पाले उर धर विवेक॥
रानी तिलोत्तमा गुण निवास। नृपमन सरोज करती प्रकाश।
अति रूपवंत रति की समान। पतिव्रता शीलगुण रतन खान॥

॥ दोहा ॥

मघवाने शत तियन को, लेके रूप अपार।
एक ठौर चित्त लायके, रची तिलोत्तमा सार॥
ब्रह्मा के तप कूं अवै, नाश करन के हेत।
भेजी नार तिलोत्तमा, जग में हर्ष उपेत॥

॥ पद्धडी छंद ॥

सब भूमि पतिन को तप उदार। सोई आकर्षण मंत्र सार।
ता करि आकर्षी भूमि थान। सोई तिलोत्तमा किधौं जान॥
तिनके सुत्त सुंदर लोकपाल। सुर लोकपाल वत बल विशाल।
जस लोक विषै ताको अतीव। अति धीर वीर दानी सदीव॥

॥ चौपाई ॥

तिन के सुत पद्मावती नाम। नेत्र पद्म दल सम अभिराम।
ज्यों भीष्म नृप के रुक्मणी। त्यों नृप के पद्मावती भनी॥

कमला सम पद्मा शुभ जान । रूप कलावर गुण की खान
निज छवि तें जीती सुरनार । कल्प वेल सम तन सुकुमार ॥
ताही नगर में कुंवर महान । कौतिक रूप गयो सुख मान ।
महलन की पंकति मनुहार । तामें देखत जाय कुमार ॥
कहीं इक जिनमंदिर छविवंत । देखत भयो कुंवर बुधवंत ।
जय २ शब्द होय सुखकार । बाजे बाजें विविध प्रकार ॥
कहीं आंगन में रतन अनूप । तिनकी राशि लखी शुभ रूप ।
लखी कहीं कामिनि छवि देत । मणि भूषण शुभ वसन उपेत ॥
कहीं इक लखी जुधनकी राशि । कहीं यक सुवरणको परकाश
कहीं इक पंडित पढ़ें पुराण । तिनकूं देख हिये सुख मान ॥
धर्म मूर्त्ति छत्रिय बलवंत । शीलवान गुणवान सुसंत ।
खड्ग हाथ में लिये उदार । कही इक देखत भयो कुमार ॥

॥ दोहा ॥

या प्रकार पुर देखतो, नर उत्तम कहि थान ।
तौलों बैठी हर्ष युत, कौतक सहित सुजान ॥

* दोहा *

तौलों राजा की सुता, पद्मा अति मनुहार ।
गेरो हाथ उठाय के, कुसुम करंड मझार ॥
तहाँ सर्प ने क्रोध कर, फन उठाय दृग लाल ।
उसी सुपद्मा पलक में, भई तबै बे हाल ॥

॥ चौपाई ॥

विष फैल्यो सब अंग मंझार। भई विलखमन दुखित अपार।
मूर्छित होय परी भू थान। अति अचेत सो मृतक समान॥
विष प्रभाव तें कन्या ऐन। देखत नैन न बोलत बैन।
असन पान नहिं करे लगार। परी भूमि में तज सुख सार॥
ऐसी जान अवस्था तास। जनकादिक आये तिस पास।
दुख सों पीड़ित कन्या देख। हा हा कार करें सु विशेष॥
नृप आज्ञा तें वैद्य महान। विष प्रहार आये तिहि थान।
विष नाशन की क्रिया अनेक। करत भये उर धार विवेक॥
मंत्र जु पढ़िकें छींटो गात। विष की रक्षा करी विख्यात।
बहुरि मंत्र पढ़ छींटो तोय। विष हरता मणि दीनी धोय॥
नाना विध औषध विषहार। कन्या को दीनी तिहवार।
इस प्रकार कियो सु उपाय। विष नासो नांही दुखदाय॥
अतिशय कर इस जगत मझार। प्रलय काल की अग्नि अपार।
तुच्छ तोय सेती अवलोय। कैसी विध सेती सम होय॥
काहू नर सेती इम सुनो। राज लोक है व्याकुल घनो।
जीवंधर जब हिये मझार। दया भाव धरिके अधिकार॥
भूपन के ढिग जाय कुमार। प्रगट कहो तासूं तिहिवार।
कन्या विष भूती महाराज। मैं करिहों अवसार इलाज॥
नृप आज्ञा तें जीवक अबै। विषापहार मंत्र पढ़ि तबै।
विष कूं छिनमें दियो नसाय। गरुड़ देख ज्यों सर्प विलाय॥

अहि की डसी नृपति की बाल। दई जिवाय कुंवर तत्काल।
बिन कारण जन रक्षा करे। सहज सुभाव संत जन धरे॥
जीवक कूं धनपाल नरेश। प्रीति धार पूज्यो सु विशेष।
प्रानदान सम शुभ उपकार। और न दूजो जगत मझार॥
सज्जन जन संतन की सार। पूजा सहित करें निरधार॥
निज उपगारी लख के महाँ। ज्ञानवान पूजे नहीं कहा।
नृप जीवक को गात निहार। जानो यह नर ऊँच उदार॥
पुरुष प्रवीन देख के गात। ऊँच नीच जानो विख्यात।

॥ दोहा ॥

देख कुंवर के रूप कूं, पद्मा मोहित होय।
पँच काम के बाण से, अति पीड़ित भई सोय॥

* चौपाई *

जीवक कूं मोहित लखबाल। तब हर्षो भूपति धनपाल।
इष्ट वस्तु की प्रापति होय। कौन हर्ष धारे नहिं लोय॥
जीवक कूं नृप ने हर्षाय। अर्ध राज पद्मा सुख दाय।
देत भयो उरमें अति प्रीति। बड़े पुरुष धारें वर नीति॥
शुभ दिन लगन मुहूरत देख। तिनको कीनो ब्याह विशेष।
तिन दोनों के चित्त मझार। बढ़ो सनेह महा सुखकार॥

॥ कवित्त ॥

पुण्य सुफल की धरन हार कन्या छवि कारी।
ताकों कुवर विवाह भोग भोगे सुखकारी॥

गिरि कंदरा मझार भवन रमणीक विपिन में।
रमत भयो तिम सँग हर्ष धरतो निज मनमें ॥

॥ छप्पय ॥

जीवक पुण्य निधान पूर्व वृष फलो महा तरु।
तातें पद्मा नारि पाय सुंदर सुमहावरु ॥
रथगयंद वर तुरंग लहे अति ही सुख दायक।
भयो सहज ही आप देश पल्लव को नायक ॥
इम जानि भविक जिनधर्म को, पालो नित उर धर मुदा।
सँसार महा अर्णव तरो, विलसो शिव सँपत सदा ॥

पद्मालाभ वर्णनोनामः ॥ सप्तम परिच्छेद समाप्त ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ छप्पय ॥

जिन सुपास भवदाह हरण शिव सुख वर दायक।
जगत शिरोमणि ज्येष्ठ जगत गुरु हो शिव नायक ॥
भव समुद्र ते पार करन को हो सुपात्र वर।
कर्म अग्नि परचंड बुझावन कूं सुमेघ झरं ॥
यातें कृपाल मोपै अबै होय दीजिये वर सुमति।
युग हाथ जोर धर शीश पै चरण कमल नथमल नमत ॥

॥ चौपाई ॥

एक दिवस मन मांहि कुमार। मात पिता आदिक परिवार।
याद कियो निज नगर महान। झलको मोह हिये में आन॥
तब जीवक पद्मासों ऐन। कहत भयो कोमल शुभ वैन।
देशाँतर चलवे को चाव। मोमन में उपजो शुभ भाव॥
सुनो प्रिया निज राज उदार। जौलों मोहि मिले नहिं सार।
तौलों तुम रहियो इह ठाऊँ। राज लाभ पीछे ले जाऊँ॥
सुनि पद्मा पति के वच तबै। विह्वल होत भई अति तबै।
अहो नाथ तुम बिन मो प्रान। रहैं नहीं निश्चय यह जान॥
जीवक ने जानी उर मांहि। प्रिया मोह छोड़े अब नांहि।
मौन पकर बैठो तिहि थान। उत्तर कछू न दीनो आन॥
आधी निशि व्यतीत कराय। निकसे ग्रहतें तिय छुट काय।
चलो अकेलो जीवक संत। बैरी नृप जीतन बलवन्त॥
कंत गये पीछे तिहवार। जागी पद्मा नींद निवार।
कमला सम धारे वर रूप। लखो नहीं तिन कुमर अनूप॥
पति वियोग कर पद्मा सार। मगन भई दुख उदधि मझार।
तत्वज्ञान वर्जित जे जीव। तिनको व्यापत दुख सदीव॥

❀ अडिल्ल ❀

पद्मा की निज सखियन के मुख तें जबै।
नृप ने जीवक को जु गमन जानो तबै॥

तुरत चलो धनपाल ढूंढवे कुमर को।
ले सेना चतुरंग डरावत अरिन को॥

॥ चौपाई ॥

गयो कुमर जिस मारग हाल। तिसही पँथ गयो भूपाल।
तुरत करे जो कारज कोय। किसके लाभ निमित्त न होय॥
पायो कुमर महा गुणवंत। हर्षित चित्त भयो नृप संत।
सो आनन्द कहो नहिं जाय। भूपति अपने अंगन समाय॥
जीवक कूं घर लावन काज। नृप ने कीनो बहुत इलाज।
फिरो न उलटो कुंवर महंत। काढ़े वचन करे सो संत॥
अति आग्रह कीनो भूपाल। तब जीवंधर बुद्धि विशाल।
पूर्व वृत्तान्त आपनो सबै। कहत भयो भूपति सूं तबै॥
तब मंत्रिन कर सहित नरेश। कहत भयो इम वचन विशेष।
तुमरे राज लेन के काज। तुम संग चालें हम महाराज॥
सुन वच तिनके कुंवर उदार। मना किया तिनकूं तिहवार।
काज अयोग्य विषै नर संत। परकूं खेद करे न महंत॥
नृप मंत्री आदिक तिहिवार। ताही रोक सके न लगार।
जो कारज आरँभे सँत। औरन पै नहिं रुके तुरन्त॥

॥ दोहा ॥

सबकूं उलटे फेर के, आगे चलो कुमार।
पंच परम पद सुमर के, जीव दया चित्त धार॥

॥ चौपाई ॥

गुण समूह धारें सुखकार। तीरथ पूजत जात उदार।
सत्पुरुषन कर आश्रित थान। निश्चय पूजनीक होंय जान ॥
सत्पुरुपन कर आश्रित धरा। पूजनीक होय जगमें खरा।
अचरज यामें कौन बताय। रसतें लोह कनक होजाय ॥
जीव दया पालतो कुमार। प्रभु को सुमरत चित्त मझार।
विपन छोड़तो चल्यो महंत। महा सुवल धारत बुद्धवंत ॥
जिनमंदिर तीर्थ शुभ थान। तिनको वंदत जात महान।
भय वर्जित मारग सु मझार। पायन चलो जात सुकुमार ॥
सरिता के तट विपन महान। तपैं तहाँ तपसीगण थान।
तिनकूं देख कुंवर शुद्ध भाय। जातभयो तिन ढिग सुध पाय ॥
सात सहस तापसि तिह थान। मिथ्यामत तपतें अज्ञान।
खोटे तप करके अघलीन। तिनकूं देखत भयो प्रवीन ॥
तत्वज्ञान जुत कुंवर विशेष। तिनकूं कियो तत्व उपदेश।
अतिशय कर संतन को चित्त। पर कल्याण के होय निमित्त ॥
धर्म अहिंसा परम प्रधान। हिंसा रहित सु तप अमलान।
हिंसा रहित दान अतिसार। मुनिजन भाषो वेद मझार ॥
जीवंधर इत्यादि प्रकार। दीनी धर्म देशना सार।
छोड़ कुपथ सब शिवपथ लगे। लख तिन जीवक सुखमें पगे ॥

॥ दोहा ॥

संत पुरुष इस जगत में, अपनो उदय प्रभाव ।
परको उदय निहार कें हर्ष करें अधिकाय ॥

॥ चौपाई ॥

ज्ञान विभव इस जगत मझार । पाय करे नहिं पर उपकार ।
तो कारजकारी नहिं होय । इन्द्रायण फलसम है सोय ॥
फेर तहाँ तें जीवक संत । चलो हँसवत केलि करंत ।
विपद संपदा विषै समान । सदा हर्ष धारे मतिवान ॥
दक्षिण देश चलो उमगंत । हर्षत मनमें भय न धरंत ।
संपति रूपी चंद्र उदार । होनहार है उदय अपार ॥
मनुषन को इस जगत मझार । होनहार कारज अनुसार ।
निश्चय करके गमन जु होय । यामें संशय है नहिं कोय ॥
श्री विमान नामा जिनधाम । सहस कूट संयुत अभिराम ।
करत भयो जिनकी थुतिप्र.र । मानों वृष को पुंज उदार ॥
जुड़े कपाट लगे युग जवै । विस्मय चित्त भयो उर तवै ।
थुति कूं करत भयो उच्चार । दर्शन हेत हर्ष उरधार ॥
यह भव उदधि अनंत अपार । पड़े जीव तामें निरधार ।
तिनके काढन को भगवान । तुम उत्तम हो नाव समान ॥
दुरनय तम तें भरो अपार । यह संसार महाँ निरधार ।
तामें मोकूं दीपक ज्ञान । हो जग तम हरता भगवान ॥
यह सँसार कुमार्ग दुरंत । कर्म शत्रु आगे तिष्ठंत ।

तहाँ मुक्ति दाता भगवान। एक तिहारी भक्ति महान ॥
हे जिनंद इस जग के थान। अघ दाहक तुम बिन नहिं आन।
दिनपति बिना जगत तमभूर। अन्य कौन कर है अब दूर ॥

* रोड़क छंद *

सुरपति नरपति असुर आदि तुमको आराधें।
सो निज स्वारथ हेत सकल शुभ कारज साधें॥
आतप नाशन हेत पुरुष जो जगत मझारा।
सेवत शीतल नीर चन्द्रमा कूं निरधारा॥
शांतिनाथ शिवनाथ अहो तुम सब सिधि दायक।
मेरे भव भ्रम शांत करो त्रिभुवन के नायक॥
ज्यों शशि बिन सब जगत चाँदनी मई करनकूं।
और कौन समरत्थ सकल आताप हरनकूं॥
सदा शाँत तुम शाँतिनाथ आतम निज चीनो।
अनेकान्त मत रूप चित्त मेरो अति भीनो॥
ताकूं निरमल करो अहो त्रिभुवन के स्वामी।
ऐकान्तिक मत अंधकार नाशन रवि नामी॥

* नारांच छन्द *

दिनेश कोटि तेज तें सिवाय अंग जोत है।
निहार रूप संपदा अनंग मात होत है॥
सुरेश तोहि पूज ही सु शीस को नवाय के।
मुनीश तोहि ध्यावही सु आतमा लुभाय के॥

॥ चामर छंद ॥

जै जिनेश शाँति रूप तेज के निधान हो।
दिव्य दीन वन्धु मोक्ष पंथ के विधान हो॥
हे मुनीश नेह सों दया अपार कीजिये।
दीन को निहार के अनंत सुख दीजिये॥

॥ चौपाई ॥

यातें शांतिनाथ जिनदेव। सर्व वस्तु को जानो भेव।
भक्ति सहित थुति कीनी सार। देउ मोहि शिवपद अविकार॥
या प्रकार थुति करत किवार। उघड़ गये ततछिन तिहिवार।
भेदी नर सेती अवलोय। शिव कपाट क्या खुले न कोय॥
कठिन काज करिकें सुकुमार। गर्व धरो नहि हिये लगार।
जिम दिनकर जग तमकूं हरे। उर माँही मद नेक न धरे।

* अडिल्ल *

जीवक कूं कपाट युग खोलत देखके।
कैयक नर हर्षे उर माँहि विशेष के॥
देख अपूरव संत पुरुष को उर विषै।
ज्ञानवान को हर्ष करे नहिं जग विषै॥

॥ चौपाई ॥

जौलों भीतर गयो कुमार। सुवरणमणि मय सो मनुहार।
जिनकी लख मूरत अमलान। नमस्कार कीनो सुखमान॥
तौलों नर जीवक ढिग जाय। नमस्कार कीनो सिर नाय।

निज वाँछित कारज जब सरे। कौन पुरुष उर हर्ष न धरे ॥
मस्तक विषै धरे जुग हाथ। ताहि देख हर्षो नर नाथ।
विनय करे अपनी कोई आय। तब को नाँहि हर्ष बढ़ाय ॥
जीवक तब तासूं इह भाय। पूंछत भयो प्रीत सरसाय।
को तुम कितते आय तुरंत। कीनो मेरा विनय अत्यंत ॥

* दोहा *

कुमर वचन सुनके तबै, बोलो नर हरषंत।
सुनो बचन मेरे अबै, जो सुख होय तुरँत ॥

॥ चौपाई ॥

वलय नाम इह देश प्रसिद्ध। दक्षिण दिशि धारे बहु रिद्धि।
निरमल कुलके नर परवीन। तिन कर भरो न दुर्नय मदीन ॥

* दुमाल छन्द *

तिस देश विषै सरसी सरताल उदारस कूप भरे जल से।
तिन माँहि सरोज खिले अति सुंदर शोभ धरे सबही अलिसे ॥
बहु हँस फिरें तिनके तट पै तिनकी छवि देख हिये हुलसे।
तंह कोकिल कीर करें रव सुंदर नाचत मोर महाँ कलसे ॥

॥ चौपाई ॥

देश मध्य है क्षेमा पुरी। विमल नीर कर खाई भरी।
तामें पंकजगण मनहार। सुरगपुरी सम लसै उदार ॥
वलयकार शोभित शुभ साल। पंक्ति बद्ध प्रासाद विशाल।
सूत वद्ध राजत सु बाजार। तिनमें सुधी करत व्यापार ॥

देवराज तहाँ नृप बलवान । लक्ष्मी कर है इन्द्र समान ।
पीड़ित कीने शत्रु नरेश । विविध प्रकार धरें गुणवेश ॥
सुर कैसी क्रीड़ा नित करे । लच्छि कुबेर सदृश घर धरे ।
अरि भूपति शुभ पंथ लगाय । न्याय थकी मानो दिव राय ॥
ता नृप के सुन्दर पटनार । नाम देवदत्ता मनुहार ।
ता देखे लागे रति रती । गुण गण मंडित है वर सती ॥
नृप के सेठ सुभद्र ललाम । मन्त्री शोभित है गुण धाम ।
निज मति कर जीते मतिवंत । ज्यों कुबेर लक्ष्मी कर संत ॥
ताके त्रिया निवृत्ता नाम । व्रत कर भूषित अति अभिराम ।
पतिव्रता गुणगन कर भरी । मंत्री के प्यारी है खरी ॥
तिनके क्षेमश्री वर सुता । कमला सम शोभित गुण युता ।
मृग लोचनी क्षेम कर्त्तार । रंभा सम है रूप अपार ॥
ताके दृग कटाक्ष कर काम । कौतुक सहित भ्रमत इह ठाम ।
देख रूप कन्या को ऐन । मानो मोहित भयो सुमैन ॥
कन्या के वच शुभ अतिवाल । कला रूप सौभाग्य विशाल ।
या समान त्रैलोक्य मँझार । अवनि विषै दीसत न लगार ॥
व्रत आदिक गुणगण कर भरी । शुभ लक्षण भूषित जिमिसुरी ।
केलि कला विज्ञान उपेत । मदन मँजूषा किधौं सु चेत ॥

॥ दोहा ॥

या प्रकार कन्या धरे, गुणगन अधिक विशाल ।
और कथन आगे सुनो, अहो सुधी गुणमाल ॥

॥ चौपाई ॥

वृक्षन करि शोभित वनसार। एक दिवस तहाँ करत विहार।
सागरचन्द्र नाम मुनि राय। आये सब जनकूं सुख दाय॥
ज्ञानवंत मुनि आये देख। बन पालक के हर्ष विशेष।
जाय कह्यो नृपसों इह भाय। बनमें आये मुनि सुखदाय॥
मुनि को आगम जान नरेश। भूषण वसन उतार नरेश।
बन पालक को दीने सबै। आनन्द भेरि दिवाई तबै॥
शुभ वसु द्रव्य आठ ले संत। मुनि बन्दन को भूप तुरंत।
राजा रथ पर होय सवार। चाले सब मिल विपिन मझार॥
देख दूर तें मुनि को तबै। निज निज असवारी तज सबै।
तीन प्रदक्षिणा दे नम भाल। जुगल चरण पूजे गुणमाल॥
तिनकूं धर्म वृद्धि सुखकार। दई गंभीर वचन कहसार।
सुख कारन व्रत धर्म विशेष। तिनकूं करत भये उपदेश॥
धर्म सुधा पीयो तिहिंवार। कर्ण अंजुली कर तिन सार।
भूपति आदि अनीति महान। तजत भये अतिशय तिहि थान॥
सचिव सुभद्र मुनी सों जबै। बोलो भद्र भाव करि तबै।
हे मुनीश मो धिय को कंत। होनहार को भुव में संत॥
मुनि बोले सुनि सचिव उदार। तेरी कन्या को भरतार।
भाषूं तू सुनि चित थिर होय। निश्चय पावै जा विधि सोय॥
श्री विमान जिनवर को धाम। ताके जुग फाटक अभिराम।
जा कर सपरश तैं निरधार। खुलै होय सोई भरतार॥

इम सुनिके मुनि बचन विशाल। नमस्कार कीनो दरहाल।
मन सन्देह त्याग हर्षाय। नृप आदिक निज मंदिर आय॥

॥ अडिल्ल ॥

हे सुजान ता दिनतें मंत्री ने मुझे।
राखो है इस थान कहूं साची तुझे॥
है गुणभद्र सुनाम मेरो उर धारिये।
रहूं परीक्षा हेत हिये सु विचारिये॥

॥ चौपाई ॥

किते इक बीते दिन इसथान। मैं तुम को देखा बलवान।
ज्यों चकवा निशिमें दुखपाय। दिन कर देख अधिक हर्षाय॥
कह अपनो ऐसे विरतन्त। गयो पुरी गुण भद्र तुरन्त।
बड़ो हर्ष मन मांही धरो। मन को चिंत्तो कारज सरो॥
पुनि सुभद्र मंत्री पै जाय। कर प्रणाम निज शीस नवाय।
जीवक को सबही विरतन्त। कहत भयो गुण भद्र तुरंत॥
मंत्री सुन ताके वचसार। करत भयो बखसीस उदार।
आवे निकट हितू जन कोय। उरमें हर्षित को नहिं होय॥
पुनि सु भद्र मंत्री हर्षंत। यह सज्जन ले चल्यो तुरंत।
सहित तूर उर धरत हुलास। जात भयो जीवक के पास॥
वसन रहित जिन पूजन वार। मौन रूप सम लखो कुमार।
वजत तहाँ बाजे घनघोर। शरित भयो दशों दिश सोर॥
कुंवर गाज कूं लख मंत्रीश। हर्ष कियो उर माँहि सुधीश।

ताके तनकी सुर शुभ सार । फैल रही दश दिशा मझार ॥
बड़े प्रेम कर दोऊ जबै । मिल प्रणाम कीनो पुनि तबै ।
अतिशय बड़े पुरुष हित लाय । करें नम्रता सहज सुभाय ॥
कुशल क्षेम पूंछी तिहिवार । दोऊ मिल पूजे तिनसार ।
छिन इक बैठे थिरता लाय । फेर पुरी आये उमगाय ॥
सब जन करत प्रशंस अशेष । सचिव गेह कीनो जु प्रवेश ।
जीवक कूं आयो लखराय । मनमें हरष कियो अधिकाय ॥
इक दिन करी प्रार्थना सार । जीवक सूं मंत्री हित धार ।
जिन बांछा सूचक वच एन । भाषे युक्ति सहित सुख दैन ॥
मेरी सुता परन शुभ संत । उत्तम सुखकी सिद्धि निमित्त ।
संतन कूं संतन तें सिद्धि । निश्चय होत सहत सब रिद्धि ॥
सचिव वचन सुनिके मतिवंत । अंगीकार किये जु तुरन्त ।
उत्तम लक्ष्मी आवत जान । पगसूं को टाले मतिवान ॥
निमिती के बचतें तिहिवार । लगन तनो कीनो निरधार ।
परम उछाह ब्याह के हेत । मंत्री करत भये शुभ चेत ॥
जीवक कूं दीनी वर सुता । भली लगन माँही गुण युता ।
क्षेम श्री को ब्याह तुरंत । विधि पूर्वक कीनो गुणवंत ॥

॥ सवैया ॥

जीवक को जब ब्याह भयो नृप आदिक आय उछाह कराये ।
भूषण कंचन चीर हिये बहु लेकर के सबही सुख पाये ।

गावत गीत सिंगार किये तिय देखत नैन सबैं ही लुभाये।
पेख अपूर्व वाँछित कारज कौन करे नहिं हर्ष सवाये॥

॥ मरहटा छन्द ॥

नारिन के गण में अति उत्तम क्षेमश्री गति की उनहार।
शोभित है तनमें वर भूषण बोलत बैन अति हितकार॥
भौंहन को धनु ले कर में वर छोडत नैनन के सर नार।
ऐसी त्रिया ले जीवक मीत शुभोत्तर को फल मानत मार॥

॥ छप्पय ॥

किधों असुर फन ईश नागपति किधों सोमवर।
किधों मार खग ईश किधों धनपति सुचक्रधर॥
किन्नर किधों वसन्त मूर्तधर शिव इह राजत।
ब्रह्मागुरू मुरार देख छवि जगत लुभावत॥
इह भाँति करत विनर्क विविधि जगत जीव उरमें तबै।
लख पुण्य उदय जीवक तनो धन्य धन्य भाषत सबै॥

क्षेम श्री वर्णनो नाम: अष्टमोऽधिकार:।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

शशितें वर रूप सुधारक हो, भवताप हरो जगनायक हो।
भवसागर में बहु जीव परे तिनको अब काढ़ उधारक हो।
तुम तो बिन कारण बंधु बड़े जगमें तुमही सुख दायक हो।
शशि नाथ सुनो विनती हमरी अब तारो हमें शिवदायक हो॥

॥ चौपाई ॥

अब क्षेमश्री संग कुमार । रमत भयो कर प्रीति अपार ।
करे कभी रस कथा अनूप । कभी इक देखे सुन्दर रूप ॥
कितइक दिन बीते उमगाय । बहुरि चालनेकूं मन लाय ।
जब ताई वांछित नहिं होय । तब ताई थिर रहे न कोय ॥
एक दिवस जीवंधर सन्त । अर्धरात्रि बीते हर्षंत ।
क्षेमश्री सूं ऐसे कही । देशांतर जाऊं मैं सही ॥
बार बार त्रिय मना करंत । हठ कर तजत नहीं निज कंत ।
मौन सहित तब रहे कुमार । कपट धार निज चित्त मझार ॥

॥ दोहा ॥

सूती त्रिया कूं जानके, अर्धरात्रि तजि संत ।
चले अकेले निकस के, घर सेती हर्षंत ॥
कुंवर गये पीछे तबै, क्षेमश्री वरनार ।
जात कंथ देखो नहीं. रोवन लगी पुकार ॥
मोको तुम बिन हे पिया, शरणा नहीं लगार ।
जैसे शशि बिन चन्द्रिका, रहे न जगत मंझार ॥

॥ चाल ॥

हो नाथ महा छविकारी, मोहन मूरत सुखकारी ।
हा कंत कला निधि रूपी, नर उत्तम काम सरूपी ॥
मरजाद रहित गुण धारो, मुझनेत्र कमल रवि प्यारो ।
धारी शशि सम कीरति के, हो धारक बड़ी सुमति के ॥

कहाँ हो मो प्रान प्यारे, तज मोह भये क्यों न्यारे।
तुमही तिरपति के करता, इक वार वचन दो भरता॥
हाँ प्रीतम दरशन दीजे, तातें थिर ह्वो सुख वीजे।
भरतार सहित त्रिय होई, ताकूं मानै सव कोई॥
भरतार विना तिय ऐसी, विन प्रभाव मणी हो जैसी।
ज्यों शशि विन रजनी कारी, तैसे पिय विन है नारी॥
जल बिन सरसी नहीं नीकी, तिमि पिय विन नारी फीकी।
विन दीपक धर अंधियारो, पिय विन त्यों नार निहारो॥
हे नराधीश सुख दाता, तुम विरह थकी नहिं साता।
मोहि मृतक समान निहारो, तुम ज्ञाता निपुन विचारो॥

॥ सोरठा॥

क्षेमश्री वरनारि पति वियोगतें अति दुखी।
होत भई निरधार दग्ध जेवड़ी सम महीं॥

॥ दोहा॥

जगत विसैवनितान के प्राननाथ हैं प्रान।
निश्चय कर सव ठौर में अवर नहीं सुखमान॥

॥ चौपाई॥

उत्तम जीवक कूं तिहिवार। ढूंढन गये सुभद्र उदार।
गिरे स्वकर तें रतन महान। कौन जतन नहिं करे सुजान॥
पायो नहीं जीवक मतिवंत। तव सुभद्र चिंता सुकरंत।
पावन वस्तु जगत में कोय। ताके गये महाँ दुख होय॥

दक्षिण दिशकूं चल्यो कुमार। अपने भूषण देन विचार।
जिनके है विवेक वर चित्त। तिनकूं भूखन देई निमित्त॥
धर्मीजन कूं भूषण सार। दीजे इम चित्त माँहि विचार।
गेरै बीज देख शुभ थान। सहस गुणों उपजै सुख खान॥
जो सुपात्र को दीजे दान। निज पर को हित होय महान।
महिषी गो कूं दीजे तृणा। कहा दूध उपजे नहिं घणा॥
ईख नीम पर घन वर्षाय। अमृत कटुक रूप ह्वै जाय।
पात्र कुपात्र को त्यों ही दान। सुगति कुगति को दायक जान॥
पात्रन कूं दीजे धन सार। होय सकल फल को करतार।
आम बीज बोये शुभ थान। किसकूं सुख नहिं करे महान॥
कौन काज कृपगान को वित्त। निश्चय होय न दान निमित्त।
जो सागर में नीर अपार। काहू कूं नहिं देत लगार॥
काक सूम तें गुणवर धरे। पुरुष भक्षण कुल युत करे।
खाये न खरचे कृपण असार। विनसै यों ही वित्त अपार॥
कृपण पुरुष बहु धनकूं पाय। भूमि विषै पुनि देय गढ़ाय।
मर के होय भुजंग करूर। जाय कुगति विलसे दुख भूर॥
निरधन देत द्रव्य उत्कृष्ट। सबसों ऊँचो होय गरिष्ट।
उन्नत पर्वत जल मनुहार। नदियन को कहा देत न सार॥
तिय निमित्त धनतें घर भरै। सो तिय औरन तें रति करै।
यातें संतन को जग थान। कहा खेद करनो दुख खान॥
संग्रह करे द्रव्य मतिवंत। विविध भाँति कर जतन अत्यंत।

सोधन जौलों पुण्य रहाय। तौलों विना जतन थिरताय॥
घटे पुण्य तव लक्ष्मि सदीव। रहे नहीं कर जतन अतीव।
डूबे पोत समुद्र मझार। धन रक्षा नहिं होत लगार॥
यातें सत्पुरुषन कूं सदा। देना दान हिये धर मुदा।
पात्र अपात्र तनो निरधार। करके दीजे दान उदार॥

॥ दोहा ॥

वित्त होय नहिं घर विषै, मिले पात्र तव आय।
होय प्रगट जब विपुल धन, तव नहिं पात्र मिलाय॥
विपुल वित अरु पात्र शुभ, दोनों का संयोग।
मिले बड़े संयोग तें जानो गुणधर लोग॥

॥ सोरठा ॥

धन आदिक बहु पाय होय दान में रत नहीं।
पूरी करें सु आयु वशुव्रत कर्मन के ठगे॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे जीवक करत विचार। चलो जात मग माँहि उदार।
भूषण देवे की मन चाह। धरे सदा जीवक नरनाह॥
तव जीवक के निकट तुरंत। कोई इक दिन आयो मतिवंत।
भाग्यवान पुरुषन के पास। उत्तम जन आवें कर आस॥

* दोहा *

गात नवायो आवतो, सन्मुख लखो किसान।
तन धारत जीरण वसन, पूछो ताहि सुजान॥

॥ चौपाई ॥

कौन अर्थ किस थानक जाय। थिर चित है के नहीं बताय।
तासू ऐसे कहो कुमार । तब बोलो द्विज वच अतिसार ॥
उदर पूरती काज कुमार । इत उत भटकत भूमि मझार।
नित्य काठ बेचो कर कष्ट। भयो कर्म को उदय निकृष्ट ॥
जन्म दिवस तें साता लेश। मोह भई नहीं अहो नरेश।
अब तुम दरशन पायो सार। भयो हर्ष मो हिये अपार ॥
ऐसे सुन किसान के बैन। तब बोलो जीवक वच ऐन।
हे किसान तू धर्म पवित्र। साता हेत धार शुभ चित्त ॥
धर्म बिना नर कूं अवलोय। सुखदायक साता नहीं कोय।
सामग्री बिन जेम किसान। कहा धान्य पावे सुख खान ॥

॥ दोहा ॥

त्रय शल्यों करके रहित, निज आतम को साध।
अंतिम करके आपनो, निश्चय धर्म समाध ॥
ताके साधन तें सधे, विमल मुक्तिवर थान।
तहाँ अनंत सुख भोगवो, अहो विप्र मतिवान ॥

॥ चौपाई ॥

सो वृष स्वपर ज्ञान तें होय। निज अभ्यास करे बुध लोय।
पर कूं तजे असार निहार। लहे परम पद सो निरधार ॥
अनंत चतुष्टय मई अनूप। गुन समुद्र निज आतम स्वरूप
निश्चय उरमें जान विनीत। अपर वस्तु है सब विपरीत ॥

॥ अडिल्ल ॥

दर्शन ज्ञान मई निज आतम जानिये।
देह अचेतन रूप भिन्न परमानिये॥
पुद्गल विषै महान पुरुष नहिं रुचि धरें।
निज आतम के माँहि प्रीति निशिदिन करें॥

॥ चौपाई ॥

देह त्याग के हेत विचार। बाहिर परिग्रह तजे असार।
सो मुनि मारग है अमलान। पालें पुरुष महा परधान॥
मूल और उत्तर गुणसार। तो पै पलें नहीं निरधार।
भार गयंद तनो सुन संत। गो सुत पै नहिं चले तुरंत॥
यातें धर्म गृही को सार। गहो सनातन अति सुखकार।
निज कारज की सिद्धि निमित्त। करे योग्य कारज शुभ चित्त॥
करके तत्व हिये सरधान। पाले व्रत जु ग्रही अमलान।
जो परतीत बिना व्रत करे। सो अव्रत है ज्ञान न फुरे॥
पंच अणुव्रत गुणव्रत तीन। शिक्षाव्रत पुनि चउ अघ हीन।
ये द्वादसव्रत जानो सार। श्रावक के भाषे निरधार॥

॥ अडिल्ल ॥

द्विज बोलो स्वामी इह भाँति सुनो अबै।
व्रत मो देहु बताय करों मैं सो सबै॥
प्रथम अहिंसा नाम अणुव्रत सार है।
तामें त्रस जीवन की दया उदार है॥

॥ दोहा ॥

करुणा व्रत धारक पुरुष, अतीचार पन भेव ।
त्यागे मन वच काय कर, तासु करें सुर सेव ॥

॥ चाल छन्द ॥

पशु गति में बंधन बाँधे । सो बंध दोष नर लाधे ।
जो जीव हते मन लाई । बहु घात दोष उर आई ॥
पर नाक कान कूं छेदे । सो छेद दोष को वेदे ।
पशु पै बहु भार लदाई । भारारोपण अघदाई ॥
अन्न पान जीवन को जोई । विरियाँ सिर देय न सोई ।
अन्न पान निरोध सुनामा । पँचम दोष को धामा ॥

॥ दोहा ॥

एपनदोष निवार के, पाले करुणासार ।
सो स्वर्गादिक सुखलहे, संषय नाहिंलगार ॥

दूजे व्रत को कथन अब, सुनो विप्र मन लाय ।
सत्य वचन मुखसूं कहे, हितमित जनसुखदाय ॥

अतीचार याके अवै, कहूं पंच परकार ।
सत्य अणुव्रत के जो ये, हैं विशुद्धि करतार ॥

॥ अडिल्ल ॥

प्रथम दोष मिथ्या—उपदेश प्रमानिये ।
नाम रहो—भ्याख्यान दूसरो जानिये ॥

कूटलेख किरिया न्यासा–अपहार है ।
नाम जुपंचम दोष मंत्र–साकार है ॥

॥ चौपाई ॥

आप झूंठ बोले नहिं लेश । पर कूं विविध करे उपदेश ।
लोभ सहित जो करे सदैव । प्रथम दोष सो धरें अतीव ॥
नारी पुरुष की सुनकर बात । करे और सो जो विख्यात ।
दोष रहो भ्याख्यान कहाय । दूजा अवदायक अधिकाय ॥
लिखकर झूठ ठगैं नर घने । कूट लेख किरिया सो भनते ।
तृतीय दोष उपजे अघावान । जाय कुगति दुख सहे महान ॥
परको बढती तोल जुलेय । घटती तोल और कूं देय ।
सो अपहार कहाय निकृष्ट । दोष चतुर्थ्यो कह्यो अनिष्ट ॥
मरमछेद के वच दुखदाय । परसूं कहे आप सुखपाय ।
पंचम दोष मंत्र साकार । पांच दोष ये कहे असार ॥

* दोहा *

ये पुन दोष निवार के, बोलो साचे वैन ।
उत्तम पदवी तब लहो, भोगो सुख बहु ऐन ॥

* अडिल्ल *

बिन दीनों धन धान्य आदि नाही ग्रहे ।
सो अचौर्यव्रत तीजो जगके सुखलहे ॥
ता करके सुखसार लहे जगके विषै ।
लहे जीव निरधार जिनेश्वर जी अखै ॥

॥ दोहा ॥

अतीचार याके बड़े, पंच महा दुखकार।
तिनको कछु विस्तार अब, कहौं विप्र निरधार॥

॥ चौपाई ॥

चोरी आप करे नहिं कदा। औरन कूं उपदेश सदा।
स्तेन प्रयोग नाम है दोष। धारे नर सो अघको कोष॥
धरे धरोहर तस्कर तनी। दोष तदाहृत दूजो धनी।
राजनीति को त्याग कराय। खोटे वनज करे दुखदाय॥
हीन अधिक जो राखे बाँट। लेय अधिक जो देवे घाट।
राज्य विरुद्ध अतिक्रम यही। ताहि जु धारे मूरख सही॥
भली वस्तु में हीन मिलाय। बेचत हैं अच्छे के भाव।
हीन अधिक जानो उन्मान। चौथो दोष महा अघ खान॥
और दिखाय और ही देय। पर नर कूं छलके धन लेय।
प्रतिरूपक व्यवहार सुनाय। पँचम दोष महाँ दुखदाय॥

* दोहा *

अतीचार ये पाँच तज, जो पाले व्रत सार।
सो तीजो अणुव्रत धरे, परम शर्ण दातार॥
निज त्रिय बिन पर जोषिता, तजै सुधी निरधार।
अणुव्रत चौथो जानिये, ब्रह्मचर्य सुखकार॥
अतीचार या व्रत तनें, पँच महा अघखान।
तिनके भेद सुनो अबै, अहो विप्र मतिवान॥

॥ चौपाई ॥

परको व्याह करावे सोय । प्रथम दोष को धारक होय ।
अन्य विवाह करन तिम नाम । अघ करता है दुख को धाम ॥
परवनिता की इच्छा करे । अथवा विधवा सों रुचि करे ।
इत्वरिका के ये दो भेद । धारे जो नर पावे खेद ॥
योनि छांडि जो क्रीड़ा करे । क्रीडा अनंग व्यतिक्रम धरे ।
अति तृष्णा कर सेवे काम । सो नर पंचम अघको धाम ॥

॥ दोहा ॥

पंच दोष ये शील के, वरने जे निरधार ।
जो इनकूं सेवे सदा, लहे कुगति दुखकार ॥
दशविध परिग्रह को धरे, जो गिनती परिमाण ।
सोई अणुव्रत पंचमो, श्री जिनदेव बखान ॥
अतीचार इस व्रत तनो, कहूँ पंच परकार ।
सो सुनि थिर चित लायके, अहो ब्रह्म निरधार ॥

* चौपाई *

अति वाहन अति संग्रह करे । अतिविस्मय अतिलोभ जु धरे ।
भारारोपन अति पुन जान । अतीचार ये पंच बखान ॥
तज प्रमाण जो मारग चले । तहाँ अति वाहन दूषण धरे ।
सँग्रह अन्न जु राखे घना । सो अति सँग्रह दूषण भना ॥
वनिज मांहि जो टोटो खाय । करे विषाद हिये अधिकाय ।
अति विस्मय तहाँ दूषण लगे । लोभ कर्म अति हिरदै जगे ॥

पाय नफा अति विस्मय करे। लोभ दोष सोई अनुसरे।
तज प्रमाण बहु लादे जहाँ। है अति भारा रोपण तहाँ ॥

॥ दोहा ॥

ग्रंथ त्याग अणुव्रत तने, पँच दोष ये जान।
इन्हें त्याग जो व्रत धरे, सो नर है परधान ॥
पँच अणुव्रत ये कहे, गृहि जन को हितकार।
दोष रहित पाले सदा, सो सुख भोगे सार ॥
गुणव्रत तीन कहूँ, अबै ये जगमें हितकार।
जीव दया यासों पले, भवजल तारनहार ॥

॥ चौपाई ॥

दश दिशि की मरजादा करे। प्रथम गुणव्रत जो नर धरे।
अनर्थ दंड तजे मन लाय। दूजो गुणव्रत सो सुखदाय ॥
करे भोग उपभोग प्रमान। तीजो गुणव्रत सो अमलान।
ये ही तीन गुणव्रत सार। पोषत करुणा के निरधार ॥

* सवैया ३१ *

अतीचार पन भेद, तिनको कथन अब,
सुनो मन लाय, बुध तिनको सुनीजये।
ऊरध है व्यति क्रम, दूजो अधः नाम भन,
तीजो पुनि तिर्यग् अति क्रम तजिये ॥
चौथो पुनि क्षेत्र वृद्धि, दश दिशि विस्मरण,
पांचो दोष ये ही, महा भूल न लहीजिये।

परमाद वश होय, ऊरध की सँख्या तजै,
करे काज तिहि ठौर, दोष आदि भजिये ॥
काहू काज वस अधो तजे, अधो सँख्या तहाँ,
दूजो दोष अधो नाम तहां दुखदाई है।
चार खूंट चार दिशि, तिनकी जु मरजादा,
तजै अति लोभ कर तीजो मलठाई है ॥
लोभ प्रमाद कर, दिसा कूं बढ़ाय धरे,
चौथो मल वरे सोई, दुख ही की खाई है।
दिशा को प्रमान कर, भूल जाय शठ दुनि,
ये ही पांच अतिचार, दुर्गति की साई है ॥

॥ दोहा ॥

अतीचार ये त्याग के, दिगव्रत पाले जोय।
दया धर्म सो चित धरे, शिवपुर पावे सोय ॥

॥ चौपाई ॥

दुतिय अणुव्रत अति अभिराम। दंड अनर्थ व्रत है तसु नाम।
अनर्थ दंड इह बहु विधि घनो। पंच भेद अब याको भनो ॥
आदि कहो तहँ अघ उपदेश। दूजो हिंसादान अशेष।
तीजो भेद जु है अपध्यान। दुराचार दुश्रुत परवान ॥
वहु प्रमादवश जिनको चित्त। अनर्थ दंड ते सेवें नित्त।
हय गय आदिक तिर्यक् मांहि। क्रय विक्रय उपदेशे ताहिं ॥

अघ करता परकूं उपदेश । विविध भाँति के देत अशेष ।
प्रथम भेद यह अघ की खान । अनरथ दंड तनो परवान ॥
दुतिय भेद है हिंसा दान । अनर्थ दंड को कारण जान ।
शक्ती खड्ग आदि बहु शस्त्र । मांगे देय जीव बहु अस्त्र ॥

* दोहा *

ख्याति लाभ अभिमान कर, हिंस्य वस्तु न देय ।
प्राण अंत ताई विबुध, त्यागे अदया येहु ॥
भोगादिक जो वस्तु में, राग करे मन मांहि ।
सो कलेश वध बंध है, जातें दुख उपजाँहि ॥
परधन रामा हरन में, चिंता करे जु मूढ़ ।
अपध्यान सोई लहे, अघ आश्रव आरूढ़ ॥
पाप रूप कूं चिंतवन, स्वपर अहित करतार ।
दुष्ट बुद्धि जे नर करे, सो कुध्यान कूं धार ॥
कुगुरु कुदेव कुधर्म कर, भाषत कथा अलीक ।
याकूं सुनि जो रुचि करे, सो दुश्रुत धर ठीक ॥

॥ चौपाई ॥

जो प्रमाद सों कीजे काम । प्रमाद चर्या ताको नाम ।
जीवघात परमादी करें । सँग्रह अघ को तेई धरें ॥
मन वच काय तजे जो याहि । दयावंत नर कहिये ताहि ।
अतीचार जो याके तजे । निर्मल व्रत कूं सोई भजे ॥

॥ दोहा ॥

अनर्थ दंड तने कहूँ, दोप पँच प्रकार ।
तिनकूं तज जो व्रत करें, सो पावें सुखमार ॥

॥ चौपाई ॥

आदि दोष कदर्प मलीन । कौत्कुच्य दूजो अघलीन ।
तृतीय दोप मौखर्य सुजान । असमीक्ष्याधिकरण पुन ठान ॥
अति प्रसाधन पॅचम लेहु । अनर्थ दंड को कारी येहु ।
भंड कहे गाली जो देय । सो कंदर्प व्यति क्रम लेय ॥
पर की हाँसी मुख सूं करे । दुतिय दोप सोई नर धरे ।
बहु बकवास करे जो कोय । मोखर्य दोप कूं धारे सोय ॥
तजि विवेक जो कारज करे । दोप चतुर्थो सोई वरे ।
भोगोपभोग की सँख्या तजे । दोप पंचमो सोई भजे ॥
अनर्थ दंड इह भांति अनेक । छांडो होय सुधार विवेक ।
विना काज सिर दूपण चढ़े । दुर्गति के दुख जासू बढ़े ॥
याकूं त्याग करें जे जीव । स्वर्गवास ते सेवें सदीव ।
तृतीय गुणव्रत अब जो कहूँ । इन्द्रियन को दम जासू लहूँ ॥
भोग और उपभोग प्रमान । तीजो गुणव्रत सो अमलान ।
पान वसन आदिक तबूल । शुभ आभूपण अच्छे फूल ॥
एक बार ये सुख कूं देय । पुनि विनाश को छिन में लेय ।
लोलुप इन में हूजे नहीं । इनकी सँख्या कीजे सही ॥

वाहन वसन जु नारी भने। भूषण तुरंगादि ग्रह ठने।
बार बार सुख उपजे सही। सो उपभोग कहावे सही॥
अतीचार याकूं निरधार। कहूं जिनागम के अनुसार।
प्रथम विषय अनु प्रेक्षा गिने। दूजो दोप अनुस्मृति ठने॥
अति लोलुप अति तृष्णा होय। पंचम अनुभाव जानो सोय।
छोड विचार सुभोगे भोग। दोष प्रथम को जामें जोग॥
भोग जु सुमरन पिछले करे। दोष अनुस्मृति सोई धरे।
कामातुर चितमें अति रहे। सो अति लोलुप अतिक्रम वहे॥
भावि काल के बाँछे भोग। दोप अति तृष्णा धारे भोग।
काल अकाल गिने नहिं जोय। दोष पँचमो धारे सोय॥
अल्प भोग जे नर अनुसरे। दोष रहित तेई व्रत धरे।
कोट पाल तें तस्कर डरे। भव्य विषय से त्यों भय धरे॥

सवैया २३

भोग प्रमाण करें जे विचक्षण, ते गुण सागर दोष के हारी।
वेई लहें सुख नाक के उत्तम, टारि दई तिन दुर्गति सारी॥
पाप महा तरु छेदन कूं, इह नेम कही अति तीक्षण आरी।
ते शिव मारग माँहि बसे, नित जे नर तीजे गुणव्रत धारी॥

॥ सवैया ३१ ॥

गुणव्रत कहिके जु कहिये है शिक्षाव्रत,
चारि परकार सोऊ शिक्षा रूप भासिये।

देशावकाशिक आदि दूजो सामायिक नाम,
　　　　　　　　प्रोपधोपवास शुभ तीजो तहाँ राखिये ॥
वैयावृत चौथो तहाँ एही चार शिक्षाव्रत,
　　　　　　　　इन ही को विस्तार सुन अब आखिये ।
देश मरजादा कर रहे बुधिवंत नर,
　　　　　　　　बाहर न जाय तासूं शिक्षा आदि साखिये ।
बन गेह नदी ग्राम जो जन गणित कर,
　　　　　　　　अदया के नाश हेत शिक्षाव्रत गहिये ।
मन वच काय कर काल की अवधि धार,
　　　　　　　　दिन पख मास आदि देश व्रत गहिये ॥
बाह्य प्रमान सुं जु तृन की न हिंसा होय,
　　　　　　　　सर्वस लोभ खोय निर्लोभ रहिये ।
त्याग के चपल पद लहियतु है थिर पद,
　　　　　　　　महाव्रत सम याहि ताहि ते जु कहिये ॥

॥ चौपाई ॥

सुनो विप्र तुम अब धर कान । पंच अति क्रम अघ की खान ।
आदि गनीजे प्रेष्य सु नाम । दूजो शब्द जु अति हो वाम ॥
और आनयन अघ को लेष । रूपाभिव्यक्त जु पुद्गल क्षेप ।
भू प्रमान कर आप न रहे । सीम परे पर प्रेषण बहे ॥
दोप आदि तहाँ प्रेषण होय । नेम समल को धारक सोय ।
देश सीम सों बाहर होय । ठाड़ो देखे किंकर जोय ॥

अरु खंखार कर सारति करे। दोष शब्द को सोई वरे।
सीम परे इक वस्तु जु होय। किंकर पास मँगावे सोय॥
दोष आनयन ताको गने। समल रूप व्रत तामें ठने।
क्षेत्र सीम सों बाहर होय। सैनन काज बतावे सोय॥
अतीचार रूपाभिव्यक्त। होय नेम तहाँ दोषासक्त।
देश लोक सों बाहर ठाय। सेन बतावे ठाम मँगाय॥
सेवक पास करावे काम। पुद्गल क्षेप अति क्रम नाम।
पँच अति क्रम ये मैं भने। चित्त चलावत ये सब ठने॥

॥ दोहा ॥

शिक्षाव्रत दूजो कहों, सुनो विप्र मतिवान।
सामायिक है नाम तसु, पाले ग्रही सुजान॥

* चौपाई *

सब जीवन सों समता करे। संजम भाव हिये में धरे।
आर्त रौद्र ध्यान परिहार। सो सामायिकव्रत सुखकार॥
अतीचार ये अब तुम सुनो। इनको त्याग सामायिक गुनो।
मन वच काय त्रधा ए जान। अस्मरण अनादर पंचम ठान॥
करत सामायिक दुरवच कहे। दोष वचन को सोई लहे।
ध्यान समय तिस हालै काय। काया दोष लहे तिह ठाय॥
समता तज मन विकलप भजे। चित्त व्यतिक्रम ताकूं सजे।
अनेकाग्र मन राखे जोय। स्मरण व्यति क्रम धारे सोय॥

बिन आदर सामायिक करे। दोष अनादर सोई धरे।
पँच व्यतिक्रम येही जान। धर्म ध्यान को राखे हान॥

॥ सवैया ३१ ॥

सामायिक कहके जु कहते हैं,
अब तीसरो सु शिक्षाव्रत प्रोषध के रूप है।
अष्टमी चतुर्दशी निरदोष प्रोषध,
जु धरे नर सोई महाँ सुगति को भूप है॥
प्रथम दिवस एक भुक्ति करे तिस विधि,
पारनो भी करे सोई प्रोषध अनूप है।
अशन पान व्रत के जु दिन माँहि त्यागिये,
खाद्य स्वास इन आदि सब दुख कूप है॥

॥ दोहा ॥

अतीचार याके सुनो, भेद जु पंच प्रकार।
तिनकूं तजिके व्रत धरे, सो प्रोषध अविकार॥

॥ सवैया ३१ ॥

गिनिये अदष्ट मृष्टव्युत्सर्ग आदि ही जु,
दूजो दोष संस्तर आदान तीजो जानिये।
चौथो है अनादर पुनि अस्मृत कहो पँच,
यही पाँच अतीचार हेय रूप मानिये॥
विना ही बुहारे भूमि देहमल डारे जोई,
सोई मूढ़ आदि दोष धारक वखानिये।

देखे बिना चीर आदि वस्तु कछु जाय गहे,
अति ही जु भूखो होय दूजा दोष ठानिये ॥
नैनन सूं देखे बिन झारे बिन निशमांहि,
रचे मूढ सांथरो जु तीजो दोष वान है।
अति भूख लागे जहाँ ध्यान पूजादिक मांहि,
करत अनादर सो आपदा की खान है ॥
प्रोषध को धरके जु चित्त को चपल कर,
काज करे गृह के सु दोषन को थान है।
पंच प्रकार के जु दोष कहे हने जोई,
शिक्षाव्रत तीसरो जु धारक सुजान है ॥

* दोहा *

प्रोषध शिक्षा तीसरी, कही जिनागम जोय।
चौथी शिक्षा दान की, कहिये है अब सोय ॥
आदि दान आहार है, दूजो औषध दान।
ज्ञान दान है तीसरो, चौथो अभय प्रमान ॥
ये गृहस्थ धारें सदा, शुभ विवेक उर आन।
दान पात्र विधि जानकर, देहु दया चित ठान ॥
पात्र भेद सुनि तीन विधि. तिनमें मुनि उत्कृष्ट।
पुनि श्रावक व्रतवंत है, तीजो सम्यग्दृष्टि ॥
सुनो विप्र अब दान के, दोष पंच प्रकार।
तिनको तजके दान शुभ, दीजे सुख करतार ॥

॥ चौपाई ॥

आदि निक्षेप सचित्त सुजान। पुनि अपिधान अनादर ठान।
चौथो मत्सर नाम वखान। कालातिक्रम पंचम जान॥
जो सचित्त पात्रादिक माँहि। राखे अन्न लगे मल ताहि।
पुनि सचित्त सों ढाकें जान। दूजो दोष लगे अपिधान॥
बिन आदर जो दानहि देय। तीजो दोप अनादर लेय।
अपरदान गुण देख न सके। अपनो दान महातम बकें॥
जो प्रामाद सों ढील कराय। कालातिक्रम दोष धराय।
येई पंच अतिक्रम तजे। निर्मल दान तनो फल भजे॥

※ दोहा ※

देय सुपात्र हि दान जो, विधि चतुर्विधि पोप।
इह भव परभव सुख लहे, क्रमसों लहे सो मोख॥
द्वादशव्रत युत जो सुधी, करे सल्लेखना मर्ण।
अंत समय व्रत सब सुफल, होय लहे जिन शर्ण॥
जीवे की वाँछा करे, मरन चहे लहि दुक्ख।
सुमरे मित्र सनेह उर, पूर्वे सुमरे सुक्ख॥
पुनि निदान बंधन करे, परभव सुख के हेत।
सो मूरख जगमें प्रगट, पँच दोष अघ लेत॥

॥ चौपाई ॥

मद्य माँस मधु निन्द्य अपार। पंच उदंबर फल अधिकार।
निशि को भोजन कीजे त्याग। नीर अगालित तजि बड़भाग॥

अदरक आदि कहे जे कंद । तजो मित्र बुध जन करि निन्द्य ।
काय अनंत जु पूर्ण गात । ये अभक्ष तजिये सब भ्रात ॥

॥ दोहा ॥

एक जीव के मरण में, विनसें जीव अनंत ।
तातें तजिये कंद सब, बचें अनंते जंतु ॥
वीज नीर संयोग तें, उपजें जीव अनंतु ।
तातैं अब ये त्यागिये, अन्न अंकूरा वंत ॥
जामें जानी जाय नहिं, पोरी अरु सिर संधि ।
ऐसे तरु सो जानिये. बहु जीवन के खंध ॥
सर्षप सम जो कंद कूं, खाय अधर्मी जीव ।
बहु जीवन के अशन ते, दुर्गति बसे सदीव ॥
खाय कंद जो मूढ़ नर, गद नासन के हेत ।
सो भाजन है रोग के, शुभ्र कूप गति लेत ॥
ऐसे निंद जु कंद कूं, जान पूंछ के खाय ।
सो निकृष्टगति कूं लहे, मोपै कही न जाय ॥
हलाहल सम जान के, करो कंद को त्याग ।
बहुत कहाँ लौं मैं कहूँ, दया धर्म कूं लाग ॥
नीम सोंजना के कुसुम, और कुसुम कचनार ।
सूक्ष्म त्रसनतें ए भरे, त्याग जु इनको सार ॥
सागपत्र अरु मूल मत्र, तजो जु इनको धीर ।
दयाधर्म दृढ़ता धरो, जो विनसे भवपीर ॥

विल्व वेर जंव्वादि फल, जीवों कर भरपूर ।
दयावान इन कूं तजैं, खाय सो हिंसक क्रूर ॥
पेठा भटा कलिंद अरु, वहु वीजं इन आदि ।
तजिये इनकूं अन्तलूं, यह आगम मरजाद ॥
जो अज्ञात फल देखिये, भूल न खैये ताहि ।
प्रानन कूं संशय लहे, वहु अधर्म तिममांहि ॥
कृमि पूरित नवनीत जो, महादोप की खान ।
निन्धनीक जिनवर कहे, छोडो चतुर सुजान ॥
विन फोरे एलाभखै, सो आमिपमी नीच ।
विन देखो फल त्यागिये, जीव वसै इन वीच ॥
दही तक्र सवही तजो, द्वै दिनतें उपरान्त ।
वे इन्द्री उपजें सही, त्याग जोग इम भाँति ॥
बासी भोजन के विपै, त्रसकाई उत्पत्ति ।
त्यागी याके जे महाँ, पाप भीतते नित्त ॥
स्वाद गंधसों चलित जो, ऐसो अन्न जु होय ।
सोतो सदभी त्यागिये, दाता अघको सोय ॥
तजो अथानो मित्र तुम, प्रान अन्त परजत ।
कीट फफूंदन भर रहो, खाय सु नीच असंत ॥
जिह्वा लंपटी मूढ़ नर, खाय अथानो जोय ।
कीट अमिष के असनतें, नीच जात समसोय ॥
अन्न तक्र संयोगतें, दूजे दिन त्रस होय ।

ता कारण यह त्यागिये, निन्द्यनीक है सोय ॥
ऊंटनी भेड़कूं आदिदे, इनको दूध अनिष्ट ।
त्रस काया उपजे तुरत, इनको त्याग सुइष्ट ॥
जिह्वा लंपटी मूढ़ नर, जे अभक्ष कूं खांहि ।
ते डूबें अघ भार सों. भव सागर के मांहिं ॥
विष्टा सम ये जानि के, तातें तजो अभक्ष ।
दया धर्म जो अति बढ़े, सकल होय सुखअक्ष ॥
भोजन षट रस पान अरु, लेप फूल तंबोल ।
गीत नृत्य पुनि जानिये, बनिता संग कलोल ॥
स्नान आभूषण वमन अरु, आसन वाहन सेज ।
पुनि सचित्त इनके बिषै, कर संख्या दिन रैन ॥
संख्या सों संतोष लहि, लहे ख्याति पूजादि ।
स्वर्ग मुक्ति पावे सही, बहु सम्पति भोगादि ॥
चक्रवर्ति कल्पेशपद, लहे एक छिनमाँहि ।
तीन लोक शोभित करे, मिले तीर्थपद ताहि ॥
तातें संख्या भोग की, धरिये निज चित्तमांहि ।
नेम बिना एके घड़ी, रहिये कबहुँ नांहि ॥

॥ चौपाई ॥

नेम बिना नर मूढ़ अयान । बिना नेम नर पशू समान ।
नेम बिना नर सबही खाय । लहे पाप पुनि नरकही जाय ॥
जो गृहस्थ नर धारे नेम । मुनि समान सो जानो एम ।

वंछे भोग मुनीसुर होय । महा नीच सम कहिये सोय ॥
ये द्वादस व्रत पाले जोय । महाव्रती सम नर सो होय ।
तातें तू गृहस्थ को धर्म । पाल विप्र जो उपजे शर्म ॥
ऐसे प्रतिबोधो तब विप्र । गहो ग्रही को वृपतिन शीघ्र ।
भाग उदोत होय जब महाँ । उत्तम वस्तु मिले नहिं कहाँ ।
पुनि जीवक ने द्विजकूं तवै । भूषण आदिक दीने सवै ॥
साधर्मी कूं दाता दान । देत तास फल होय महान ।
भूषण और धर्म अमलान । पाके हर्पित भयो किसान ॥
संतन के निरखे सुख महाँ । दान सहित पुनि कहनो कहा ।

॥ दोहा ॥

सुर तरुवर को लाभ ही, है जगमें हितकार ।
धर्म लाभ पुनि होय वर, ताको वार न पार ॥
रोग हरण औषधि मिले, होत प्रमोद महान ।
फेर स्वाद युत जो मिले, ताको कहा कहान ॥

॥ चौपाई ॥

ब्राह्मण को कर विदा तुरंत । चलो तासु गुण उर सुमरंत ।
गुन ही में रत होय महंत । जिमि सुगंध लखि भ्रमर भ्रमंत ॥

॥ कवित्त २३ ॥

वनको अवगाहत जीवक जी परमोद धरें अति ही मनमें ।
कहुँ देखत सिंह अनेक पशू वहु वांदर विचरें सो वनमें ॥
कहुँ देख सुसागन सार कहूँ सुनतो ध्वनि पँखिनकी तरुमें ।

इम देखत कानन की महिमा भय धारत नांहि कहीं मनमें ॥
कहीं केलि करें बगुला तरु पै कहीं नाचें मोर हिये हुलसे।
कहीं हंस फिरे सरके तटपै कहिं क्रीड़ा करें मबही जल से॥
तहँ खेदित होय सु जीवक·जी किसही थल बैठ रहो अलसै।
दश हूं दिश कानन की छवि कूं सु निहारत है अपने वलसैं॥

* दोहा *

जिनकी मति है धर्म में, तिन सबकूं जग मांहि।
पुण्य एक शरनो बड़ो, अन्य कहो कोइ नांहि॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

ताही सुकाल भविदत्त नाम। विद्याधर गुण गणको सुधाम।
रानी अनंत तिलका सरूप। ता युत आयो अतिधर सरूप॥
क्रीड़ा करती भरतार संग। लख दूर थकी जीवकसु अंग।
अतिकामवाणकरचितमंझार। पीड़ित जु भई खेचरी अपार॥

॥ सोरठा ॥

ऐसे करत विचार खेचरी मनमांही तवै।
कारज सरै न सार पति आगे मोपै अवै॥

॥ दोहा ॥

भेजो अब भरतार कूं, कोई थान मंझार।
या संग भोगूं परम सुख, इह विधि हिये विचार॥

॥ चौपाई ॥

लगी प्यास मोकूं अब कंत । तासूं देह तप्त अत्यन्त ।
पैर धरन समरथ नहिं अवै । प्यास थकी पीडित वपु मवै ॥
अहो नाथ मैं बैठी यहाँ । तुम जाओ उत्तम जल जहाँ ।
ल्याओ तोय तहाँ ते लाय । ज्यों शरीर की तप्त बुझाय ॥
तिय वचतें खग मूढ़ अयान । गयो ताल लेने जल थान ।
भामिनि करके जगत मझार । कौन द्रव्य नहीं ठगे अवार ॥
गई फेर जीवक के पास । धरे काम सेवन की आश ।
निश्चयकरिकामिनिजगमाँहि । स्वेच्छाचार चले शक नाँहि ॥
लखी अकेली सन्मुख आत । विमुख भयो जीवक विख्यात ।
जिनको चित विरकत है सदा । तिनको रुचै नहीं तियकदा ॥
अति उदास यों चित्त मझार । करत भयो तव कुमर विचार ।
जे कृतज्ञ वैरागी संत । राग थान लख रुचि न करंत ॥

॥ दोहा ॥

चर्म मांस मल अस्थिसूं, तिय तनो भरो असार ।
बुद्धिवान ताके विषै, माह न करें लगार ॥

॥ चौपाई ॥

लीक जूंक के भाजन केश । मूत्र गंध मल भरे अशेष ।
लोचन विषै ढीड़ बहु धरं । रेंट नासिका तें अति झरे ॥
है वराटका सम तिसदंत । मल दुर्गंध सों भरे अत्यंत ।
ऐसो त्रिया वदन तिस हेत । लिपटो चर्म थकी छवि देत ॥

रागी नर तिय मुख को कहे। चन्द्र त्रिंब की उपमा यहै।
रोग सहित हैं जिनके नैन। कहैं सीप मूं रूपो ऐन॥
वारिज की डांडी अमलाने। तासम तिय भुज कहे अमान।
कामी मोह करे अधिकाय। ज्यों मरीचिका लख अगधाय॥
तिया कंठ की शोभा धरें। कुधी शंख की उपमा करें।
अस्थि शंख सम नर परवीन। वाम कंठ मानत उर चीन॥
रागी तिय कुचमंडल लखे। सुधा कुभ की उपमा अखे।
मैं तो मानत हों उर बीच। पिंड माँस के तिये कुच नीच॥
देख नाभि मंडल वल जीव। मन मथ सरसी कहत सदीव।
दीप लोय लख जेम पतँग। कनक जान दाहत निज अंग॥
चरनन कूं लख करत वखान। रक्त कमल सम शुभते जान।
माँस रुधिर अस्थिन कर भरे। सो वे चर्म लपेटे खरे॥

* दोहा *

या प्रकार है जान मन, नारी देह मँझार।
कहा सुख को हेत है, तामें मोह विथार॥
करत प्रीत तिय तन विषै, मूढ़ विपुल सुख हेत।
तजिये याके मोह कूं, तू है ज्ञान उपेत॥

॥ चौपाई ॥

तिय शरीर कर मोकूं कहा। मांस अस्थिमय निंदित महा।
मुग्ध काम सर कर जे फँसे। ते तिय गात निरख बहु ग्रसे॥
नौनी सम पुरुषन को चित्त। पावक सम कामिनी तन मित्र।

ता समीप को अतिशय पाय। पिघले मन नर को अधिकाय ॥
वाल तरुण अरु वृद्ध अतीव। परवनिता लख उत्तम जीव।
पुत्री भगिनी मात समान। जानें व्रत धारक उर आन ॥
बैठे नहिं तरुण के पास। अवलोकनि करहै सुख हास।
कहे वचन नहिं मुखविहसंत। जो जगमें उत्तम गुणवंत ॥
या प्रकार वैराग विचार। चलवे कूं पुन भयो तैयार।
जो प्रवीन भयभीत पुमान। ते तिय लख भय धरत महान॥
रूप धरे खेचरी तिहिवार। विरकत चित जानो सुकुमार।
जीवक की चेष्टा अभिराम। परखत है सुभाव सों वाम ॥
कुंवर दरश तें विद्याधरी। भई काम कर आतुर खरी।
रुचिर वस्तु को लहकर नार। धरे विकार भाव निरधार ॥

॥ दोहा ॥

जीवक के वश करन कूं, मनमें वांछा धार।
या प्रकार वृतान्त पुनि, कहत भई खग नारि ॥
वनिता जन इस जगत में, पर वचन प्रवीन।
तुरत बुद्धि परकाश के, करे काज मति हीन ॥
महा भाग परवीन तुम, कला सहित अभिराम।
निज सरूप कर नाथ तुम, जीत लहो है काम ॥
निज सुभाव करि गुण उदधि, सबही कूं सुख देत।
मेरे वच सुनिये अबै, सुख करता शुभ चेत ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

खेचर की मैं तनुजा उदार । अति-काँतिवान सुंदर अपार ।
मैं हों अनंग तिलका पुमान । तियगनमें तिलक समान जान ॥
इक दिवस अचल ऊपर नरेश । क्रीड़ा जु करों थी अति विशेष ।
कोई खग मानो लसत सार । मुझ देख भयो विह्वल अपार ॥
जब ताईं मोकूं हे सुजान । हरके सु चलो सो गगन थान ।
तौलों ताकी नारी सु आय । कर कोप होंठ डसती अघाय ॥
तखनार उदास भयो अधीर । ताके भय तें हे सुभट धीर ।
मोह छोड़ गयो बनके मँझार । किसही थल जात भयो अवार ॥
मनुषन के तिलक तनो गरीश । मो जान अकेली हे महीश ।
यातें रक्षा करिये सुजान । तुम बिनसरनो नहिं अवरजान ॥
हे नाथ धीर मोहि वर अवार । करपाणिग्रहण मेरो उदार ।
मनुषन में उत्तम तुम अतीव । मेरी रक्षा कर अब सदीव ॥

॥ दोहा ॥

खगी वचन सुनके तबै, बोलो जीवक संत ।
जिनमत को वेत्ता बड़ो. गुण गण कर शोभंत ॥
हे वाले तेरे पिता, आदिक को सु अभाव ।
यातें यह कारज हमें, उचित नहीं कर चाव ॥
मेरे तो यह नेम है, बिन दीनी पर वाल ।
वरों नहीं ऐसे कियो, व्रत नाशे दरहाल ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे कह जीवक शुभ चित्त । त्यार चलन को भयो पवित्र ।
लख अभेद चित खगनी जवै । भई उदास विलख कर तवै ॥
तौ लूं खेचर लेकर नीर । आवत भयो तहाँ अतिधीर ।
तहाँ नार जिन देखी नांहि । भयो उदास तवै मनमाँहि ॥
आरत युत वाणी खग चई । हे सुंदरी प्रिय तूं कित गई ।
पंचानन आदिक जिय जान । पूरित है अतिही भयवान ॥
हेशशि बदनी तो बिन जान । कहा करों तिष्ठों किह थान ।
भोजन कहा करों कित शयन । का संती भाषूं शुभ वैन ॥
पतिव्रता आदिक गुण खान । सकल त्रियनमें रतन समान ।
तो विन मोकूं सुख नहिं लेश । तू सुख की दाता सु विशेष ॥
शील रूप संपति गुणभरी । सोहि रची विधनाने खरी ।
तो समान नारी नहिं और । बोल वचन मोसों इह ठौर ॥
पुनि जीवककूं लखतिहिलयो । आरतयुत वच कहतो भयो ।
राग अंध नर लाज न करे । भलो बुरो वच कहत न डरे ॥
अहो मित्र मेरी वरनारि । पतिव्रता सो तृस अपार ।
ताहि थाप इस थानक वीर । ताको लेन गयो मैं नीर ॥
ताकी तृषा नाश के हेत । मैं जल ल्यायो हर्ष उपेत ।
सो मैं लखी न इस थल देव । कहाँ गई जानो नहिं भेव ॥
विद्यमान विद्या इस धरी । फुरत नहीं मोकूं अवधरी ।
उत्तम हो तुम सब में देव । भाषूं तुम्हें कहो सो एव ॥

ऐसे सुनके खग सूं धीर । हंसि के कहत भयो गंभीर ।
पर कूं जो प्रति बोध करेय । सोई पुरुष महा फल लेय ॥
हे भविदत्त सुनो मो बैन । तू विवेक धारत है ऐन ।
वृथा हिये में आरति करे । विद्या तें सब कारज सरे ॥

॥ अडिल्ल ॥

मूरख पंडित माँहि भेद इतनो परे ।
एक लखे बहुभेद एक चिन्ता करे ॥
गति आकार मझार और नहिं भेद है ।
हे खग ईश विचार और सब खेद है ॥

॥ दोहा ॥

सहस तियन के बीच में, पतिव्रता कोई होय ।
यातैं बुधजन मन विषै, विकलप करे न कोय ॥

॥ चौपाई ॥

मदकर सहित सकल तिय जान । क्रोध समूह धरे अघखान ।
अतिशय कपट धरें उर बीच । धरे सुभाव महा अति नीच ॥
मद माया ईर्षा पुनि क्रोध । रोष राग पुन धरत न बोध ।
मूरख मृषा अशुद्ध अपार । सकल त्रियनके अति धन सार ॥
दोष सहित पापनी सदीव । पर वंचन कूं निपुन अतीव ।
दया हीन घिन नेक न करे । क्रूर कपट बहु विध उर धरे ॥
दूजे नर की कर लालस्य । अघकारन है निर अंकुश्य ।
कैसे वांछा धरे महंत । ऐसी बात विषै नर संत ॥

॥ सोरठा ॥

इस प्रकार उपदेश विद्याधर को ना रुचो ।
घी पियावे वेश शांति नहीं मृग दंश है ॥

* चौपाई *

दयाधार कीनो उपदेश । विद्याधर को रुचो न लेश ।
ज्ञानिन में विरलो कोई संत । ताहि लगे उपदेश तुरंत ॥
कहां गई तू तिय सुख दाय । ऐसे कहि बन भ्रमण कराय ।
लोक विषै विद्याधर पनो । कारण मूरखता को भनो ॥
कोइक थल बैठी तिय पाय । देखत चित्त भयो हर्षाय ।
बैठ विमान हिये हुलसंत । गगन पंथ में चलो तुरंत ॥
पुन्यवान जीवंधर संत । चलो तुरत मनमें हरषंत ।
वस्तु अपूरव देख प्रमान । अचरज धारे हिये महान ॥
पंथ चलत इक दिवस मंझार । भूप विपिन तहाँ लखो उदार ।
सुंदर कोकिल शब्द करंत । जीवक आगम कियो भनंत ॥
कुंवर विवेकी लख बनसार । अति प्रसन्न मन भयो उदार ।
वस्तु अपूरव देख अतीव । उत्कंठित चित होय सदीव ॥
ता बन माँहि तूत तरु एक । दीर्घ डाल फल भरे अनेक ।
भले पत्र युत अति दृढ़ कंद । उन्नत सुर तरु किधों अमंद ॥

* कवित्त *

तामें इक फल सार सबन सों ऊँचो जानो ।
धनुधारी नर निपुन देख तिस कौतुक ठानो ॥

ताके बेधन हेत वान छोड़े नर सारे ।
विधो न फल सहकार बुद्धि कर सब जन हारे ॥

॥ दोहा ॥

शक्ति रहित है जन जिको, तिनपै कार्ज उदार ।
सुगम काम कहा सिद्ध है, हिये करो सु विचार ॥

॥ चौपाई ॥

जौलूं बैठो लखे कुमार । ता तरुके फल अति मनुहार ।
जैसे शिवफल सुख के हेत । जोगी देखत हर्ष उपेत ॥
जौलों कोई इक राज कुमार । सेवक गन लीने निज लार ।
ता तरु को फल बेधन हेत । आयो तहाँ प्रमाद उपेत ॥

❀ अडिल्ल ❀

ता फल को सु निशानो कीनो चाव सों ।
शर समूह ताहूं पर छोड़त दाव सों ॥
नर प्रवीण कूं लख जैसे वनिता भले ।
दृग कटाक्ष पंकति फेंकति मनसों रले ॥
तिन सब राजकुमार मध्य कोऊ तबै ।
वेधन कूं जु समर्थ भये नाहीं जबै ॥
ज्यों वैरागी पुरुष तनो हिरदै सदा ।
भेदन को समरत्थ नहीं नारी कदा ॥

॥ चौपाई ॥

माँग लेय तिनको सुकुमार। धनुषबाण लीनो कर सार।
ताके वेधन कूं तत्काल। उद्यत होय उठो गुणमाल॥

॥ दोहा ॥

कौरव वंश आकाश में, जीवक भानु समान।
तासु वचन सुनके तबै, नृप सुत सब गुणवान॥
तामें ते सहकार को, कोई इक फल गूढ़।
दियो दिखाय सु कुमर कूं, कौतिक कर सब मूढ़॥

॥ चौपाई ॥

धनुधारी जीवंधर संत। धनुष खैंच शर छोड़ तुरंत।
गिरो सुफल भू मांही एम। पाय उदय कर तैं धन जेम॥
बान सहित फल करमें जबै। लियो उठाय सु करसों जबै।
पुण्यवान नर उद्यम करे। वाँछित काज तुरत सब सरे॥
जीवक की लख शक्ति महान। विस्मय चित्त भये मतिवान।
शक्ति धरें थे तोभी सबै। करत प्रशंसा ताकी सबै॥
निज विरतंत यथाव्रत तबै। कहत भये जीवक सों तबै।
समरथवंत पुरुष कूं देख। करें बड़े भी विनय विशेष॥
अहो चाप विद्याधर धीर। मेरे वचन सुनो वर वीर।
तुम समान सज्जन गुणमान। जगत विषै देख्यो नहिं आन॥
याही देश विषै अभिराम। प्रगट पुरी हेमाभा नाम।
किधौं भूमि त्रिया को हार। हेम मई भूषन अतिसार॥

तुंग शालि कर बेढ़त पुरी । सुर पुर सम शोभित है खरी ।
धन कन मन जन पूरित लसे । सकल सुधी नर तामें बसै ॥
रंभा सुधा सुरनके धाम । लोक पाल बन नन्दन नाम ।
इन कैसी शोभा कूं धरै । सुर्गपुरी सूं होड़ जु करै ॥

❀ रोला—छन्द ❀

वेदी जम्बूद्वीप तनी बलयाकृति राजे ।
तावत शाल विशाल गोल अति ही छवि छाजे ॥
ताकी छवि कूं देख निशापति नभके माँही ।
लज्जित ह्वै के भ्रमत फिरे अजहूँ शक नांही ॥

* दोहा *

सो नगरी की खातिका, को मिसकर नागेश ।
अधो लोक तें आयके, सेवत किधों विशेष ॥

॥ कुसुम लता ॥

बापी कूप सरोवर सुन्दर तिनमें शीतल नीर भरे ।
तिनके तट ऊपर अति राजत भाँति भाँति के वृक्ष हरे ॥
सघन छाँह शीतल छविधारे मारग को श्रम वेग हरे ।
मानो ए सज्जन हितकारी सब ही की मनुहार करे ॥
ता नगरीको नृपति विराजे अति बलिष्ट दृढ़ मित्र सुधी ।
विनय सहित छत्रियगण सेवे रिपु ताके कोई नांहि कूधी ॥
प्रभु को वचन रूप अमृत वरसाकर निज मन तृप्त कियो ।
दुखी दीन लखके नित पोषत ताकरि जगमें सुजस लियो ॥

नलिना नाम नृपति के नारी आनन पदम समान लसै ।
नेत्र कंज दलकी छवि धारत ता लखिके शशि जोति नसै ॥
तिनके सात पुत्र अति सूरे सहश्र रश्मिको तेज हरे ।
रिपु विनाश करता बलवंते किंधो सप्तऋषि शोभ धरे ॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम सुमित्र महान द्वितिय धन मित्र विराजे ।
पुन्यमित्र युगमित्र मित्र सुवरन छवि छाजे ॥
रतन मित्र बुधिवंत छठों सुन्दर अति सोहे ।
धर्म मित्र शुभ चित्त सातवों अति मन मोहे ॥

* दोहा *

इन सातों पुत्रनि सहित, शोभित भूप उदार ।
सप्त ऋषिन तारानकर, ज्यों शशि गगन मंझार ॥

॥ चौपाई ॥

रूप सुगुन इम धरत उदार । मित्रन युत चपकर इकसार ।
विद्या कर इम रहित प्रवीन । ज्यों मनोज्ञ तरु फल कर हीन ॥
तिनके कनक सुमाला नाम । सुता विविध गुण धरत ललाम ।
कनक वरन ताको सब गात । हमरी भगिनी है विख्यात ॥
हमें जनक ने विद्या चाप । प्रीति सहित सिखलाई आप ।
पै तुमसी विद्या हम पास । आवति नहीं अहो गुण राशि ॥

* अडिल्ल *

गुणवंतन में तुम गुणवंत गरिष्ठ हो ।
धनुर्वेद विद्या में पुनि सु वरिष्ठ हो ॥
बलवंतन के माँहि महां बलवान हो ।
रूपवंत मनुषन में काम समान हो ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे कह नृप नंदन तेह । हठ कर लेय गये निज गेह ।
पुण्यवान की जगत मँझार । कौन जु सेव करे नहिं सार ॥
ताकूं देख नृपति मतिवंत । जानो यह नर बड़ो महंत ।
मनुषन को परभाव महान । प्रगट दिखावत वपु अमलान ॥

॥ अडिल्ल ॥

न्हवन अशन सु वसन आभूषण कर तदा ।
कियो महा सन्मान कुमर को नृप मुदा ॥
पुन्यवान सूं प्रीत करें सबही महा ।
पुनि हो जासूं काज तास कहनो कहा ॥
अरज करी भूपाल कुमर सों कर बली ।
विद्या तुम पै चाप सवन सूं है भली ॥
ताते हे गुणवंत हमारे सुतन कूं ।
कृपा धार उर माँहि सिखावो सबन कूं ॥
करी प्रार्थना भूप इसी विधि सों सबै ।
तव तहां अंगीकार करी जीवक तबै ॥

जो विद्या हो पास दीजिये आपसों।
किये जाचना कहा न दीजे चाव सों॥
राजकुमारन को सुचाप विद्या भली।
कुवर सिखावत भयो धार उर में रली॥
पर कारज के करन हार पर हित करें।
अहित काज निरधार कदाच न उर धरें॥
विद्या चाप महान् और नर भी तदा।
सीखत भयो सु आप कुंवर पै कर मुदा॥
जिमि वरसे जब मेघ सकल जगमें सही।
धान थकी सोभाय कहा नहीं सब गही॥
धनुर्वेद विद्या जु यथावत् सब जबै।
पाय हर्ष उर धार भये क्षत्रिय सबै॥
पाय जगत में सार महा विद्या भली।
कौन धरे नहिं हर्ष हिये में अति रली॥
पुनि सुमित्र आदिक सातों भ्राता तदा।
विनय करी परत्यक्ष कुंवर की धर मुदा॥
विद्या जग के मांहि महा सुखकार है।
काम धेनु सम करत मनोरथ सार है॥
जानत भयो नरेश पुत्र मेरे सबै।
विद्या सीखत भये तास हर्षो जबै॥

होत पिता के पुत्र हर्ष कारन महां ।
पुनि विद्या जुत होय तास कहनो कहा ॥

॥ चौपाई ॥

धरा शीश निज चित्त मझार । कियो तवै उरमाँहिं विचार ।
है ये महा भाग शुभ चित्त । पर उपकार विषै रत नित्त ॥

॥ दोहा ॥

यह उपकारी नर महाँ, पायो प्रत्युपकार ।
कहा करों निश्चय अवै, ऐसे हिये विचार ॥
विद्या के दातार की, प्रत्युपकार विशाल ।
कैसी विध सों होत है, करों सु मैं तत्काल ॥

॥ चौपाई ॥

प्रत्युपकार करन के हेत । सुता देऊं निज हर्ष उपेत ।
कौरव वंश विषै परधान । धरत धनुष विद्या बलवान ॥
सुता देन जीवक सों राय । करी प्रार्थना विनय कराय ।
आदर कर बहु दीजे दान । दाता कूं यह योग्य प्रमाण ॥
व्याह निमित्त नृपके वचसार । कीने अंगीकार कुमार ।
रूपवंत कन्या सूं नेह । कौन करे नहिं हर्ष धरेय ॥
नृप आदर कर धर अभिलाष । विधि पूर्वक पावक की साख ।
व्याह मंगलाचार विशाल । करत भये तिनको दरहाल ॥

॥ दोहा ॥

पुन्यवंत दोनों लसें, कनक वरण मनहार।
करत भई वनिता सबै, तिनकी शोभासार॥

सवैया २३

कंचन के वर भूषणतैं सब भूषितगात महा मनुहार।
हाटक अंग सुवारिज लोचन शोभ लहैं रतिसों अधिकार॥
कंचन दान थकी जग पोषत सोहत है जगमें जिम मार।
ऐसी तिया लहि जीवक जी रमहै नित ही उर प्रीत विथार॥
श्री जिन भाषित धर्म अनूपम लोक विषै सुखको करतार।
तास निरोग शरीर लहे वर रूपधरे सु वरे वरनार॥
या भवमें बहु रिद्धि लहे परलोक विषै सुख होय अपार।
जान इसे जिनधर्म गहो भवि बेग लहो शिवके सुखसार॥

कनकमालालाभ वर्णनो नाम नवम परिच्छेद।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

दशवां परिच्छेद

॥ छप्पय ॥

पुष्पदंत मदमंत कामगज हतन सिंह वर।
कर्म हुताशन मेघ मोहतम को जु सूर्भचर॥
भव अर्णव को पोत पापघन पवन कहीजे।
मदतरु प्रबल कुठार मान नग वज्र भणीजे॥

हे नाथ देख तुम दरशवर अशुभकर्म छिनमें भगत ।
दुरगति निवार भवपार कर शीस नाय नथमल नमत ॥

॥ चौपाई ॥

अब आगे जीवक मतिवान । तिया कनकमाला गुणखान ।
हंस गामिनी सुंदर अंग । अहनिशि सुख भोगत ता संग ॥
कभी इक कोमल हांस करंत । कभी भोग सुख करत अत्यंत ।
कभी धर्म की वाँछा करे । शुभ कारजमें मति अनुसरे ॥
सातों साले करत सनेह । तिनकर सुख मानत गुणगेह ।
प्रीति करनतें मोह महान । बढ़े सनेही के सुखखान ॥
बहुतकाल तहाँ थितितिनकरी । चित उदास नहीं कबहुँ धरी ।
प्रिय जनमें ते करत निवास । ते कबही नही होय उदास ॥
ता पुरतें चलवे को जीव । करे नहीं रम रहो अतीव ।
बसे सुजन में बारा मास । बीते एक छिनक समतास ॥

॥ कवित्त ॥

कनक वरण तन लसत कनक माला गुणवंती ।
आयुध शाला गई एक दिन हर्ष धरंती ॥
निज भरतार समान एक नर रूप धरे अति ।
ताहि विलोकत भई निपुण यह धरत महामति ॥
कियो तवै सुविचार सार अपने मन माँही ।
आई मैं अब हाल छोड़ निज मंदिर सांई ॥

स्वामी के सम तुल्य कौन नर है हितकारी।
यह मेरे मन भयो अबै अचरज अति भारी॥

॥ चौपाई ॥

यह जीवंधर है या और। मैं देखों हूं कौन इह ठौर।
इम विकलप उर मांहि करंत। गई कंत के पास तुरंत॥
देख कंत तहँ विस्मयभयो। उरमें तत्र इह भाँति जु ठयो।
देख अपूर्व वस्तु जु कोय। अचरज चित्त कौन नहिं होय॥
मेरे स्वामी ने वररूप। धरो कहा दूजो मुअनुप।
अथवा कोई इक नर यहांआय। विद्याकर यह रूप धराय॥
इम विचार करती निजनार। जीवक ने देखी तिह बार।
धरे रूप निज काम समान। तासू पूछत भयो सुजान॥
हे प्रिये कहा चित्त में धार। कौतुक कौन लखो इहबार।
मोहि जनावो चेष्टा तोय। कह मनमें वरते है सोय॥
सुनो नाथ मो वचन विशाल। आयुध शाल विषै दरहाल।
तुम समान कोई पुरुष महान। देखो अब मैं काम समान॥
सुनतमात्र जीवक तिहि बार। विस्मय चित्त भयोअधिकार। ८
देख तथा सुन बात अयोग्य। अचरज करत सबैही लोग॥
जीवक मन इम चिंतन करी। कहा नंद आयो इस घरी।
जहाँ बसे हितकारी कोय। तहँमनकी गतिसहजहीहोय॥
प्रथम बढ़ो उर माँही सनेह। पुनि लोचन फरकत भुज येह।
ता आगम सूचक ये सार। चेष्टा होत महा सुखकार॥

तब उठके जीवक मतिवान। तियासहितपहुँच्यो तिहिथान।
सहज करें उत्साह महंत। भ्रात देख किम करे न संत॥

॥ अडिल्ल॥

लखत भयो निज भ्रात तहाँ जीवक तबै।
उरमें विस्मय कियो हर्ष धारो सबै॥
लखे भ्रात को प्रीत बढ़े उर में महा।
मिले बहुत दिन माँहि तास कहनो कहा॥
देख कुंवर को नन्द महा हर्षित भयो।
दुख चिरकाल वियोग तनोलख तस गयो॥
भुज पसार के मिले हर्ष सेती जबै।
फेर परस्पर कुशल क्षेम पूंछी सबै॥
कैसे आये नन्द कहो हितलाय के।
पुनि मुझको यहाँ जानो किहि विधि आयके॥
मेरे निकसन तैं सुतात अरु मात ने।
कीनो होयगो दुख बड़ो सब भ्रात ने॥

॥ पद्धड़ी छन्द॥

पद्मा सुआदि मेरे सुभ्रात। कैसे तिष्ठत हैं कहि सुवात।
मेरी तिय कैसे दुख करंत। इम कहो नंदसों कुंवर संत॥
ऐसो सुन के तब नंद संत। उरमें प्रमोद धरके अत्यंत।
जीवंधर सूं पिछली सुवात। सो कहत भयोसबही विख्यात॥
तुमकूं सुगये पीछे कुमार। जननी सुपिता भ्राता उदार।

दुख करत भये सबही अशेष। कहिवेको समरथ हों न लेश ॥
हे पूज्यपाद मूर्छा महान। तुझ पाछें आई मुझसुजान।
सब अंगभयोजिमि रहितजीव। दुख होतभयो मोको अतीव ॥

॥ चौपाई ॥

बोलो हे तुम भ्रात प्रवीन। भारवाह है यह अघ लीन।
मेरो भ्रात हनो इन इष्ट। हतों याहि यह है अति है निष्ट॥
इक भाई बोलो इहि भाय। हनूं आदि छिनमें इस जाय।
इक बोलो फाँसी गल डार। हनूं याहि यह दुष्ट अपार॥
कोप सहित सब ठाड़े भये। खड्ग हाथ ले निकसत भये।
दुष्ट नृपति के मारन काज। बखतर आदि सजे सब साज॥
रण उद्यत लख चित्त उदार। गंधोत्कट बोलो तिहि बार।
अहोपुत्र तुम थिर चित्त सुनो। जीवक की चेष्टा मैं भनों॥
जीवक जन्म भयो तिहि बार। तब मैं पूछे मुनि हितकार।
मुनिने जो भाषो विरतंत। सुत अब कहों सुनो सो संत॥
जीवक राज करे चित लाय। मुनिपद धार सुमुक्ति जाय।
विष वेदना अग्नि असिधार। इनतें नांही मरत लगार॥
प्रान हरण की वस्तु अतीव। तिनते मरन न होय सदीव।
कोई देव महाँ हितकार। जीवित लेय गयो तिहिवार॥
निहचे मिल है तुमते आय। यामें कछु संदेह न थाय।
यामें नेक न संशय करो। सुनिके वचन हियेमें धरो॥
जब जीवक आवे इह संत। तब ही राज जु देय तुरंत।

फूलत नहीं वृक्ष बिन काल । यातें चित्त करो थिर बाल ॥
ऐसे किये तात ने मने । वचन सुधारसतें सब सने ।
हित वाँछक जे नर जग मांहि । गुरु के वचन उलंघे नाँहि ॥
इक दिन गुण माला के गेह । गयो भ्रात मैं उर धर नेह ।
तुमरो ही आलंबन सार । धारत है निज चित्त मंझार ॥
मोहि देख गुणमाला बाल । रोई लुंचे केश विशाल ।
जगत माँहि हितकारी देख । करे मोह उरमाँहि विशेष ॥
शोक अग्नि कर तपत शरीर । शोकित तन है उदास अधीर।
बोली नन्द तुम्हारो भ्रात । कहां गयो जानत सब बात ॥
ता बिन प्राण धरूं नहिं कोय । सुनो पुत्र तुम थिरचित होय ।
जिहि विध प्राण रहैं मुझमार । सोई करो उपाय अवार ॥
गंधोत्कट भाषै शुभ वैन । कहैं सुगुण माला सूं ऐन ।
ता करि धीरज दे गुणवंत । निकसो ताके स्वरतें संत ॥

* कवित्त *

गंधर्व दत्ता नारि प्रेम पूरित छविकारी ।
मो भ्राता की त्रिया रूपवन्ती अति प्यारी ॥
पति वियोग तें कैसे तिष्ठत है निज घर में ।
जानत है विरतंत सकल विद्या कर मन में ॥
है जीवक उरमें विचार कीनो सुखकारी ।
ताके घर में विषै जान कूं बुद्धि विचारी ॥

इष्ट कार्य की सिद्धि होनहारी जब होई।
तब तैसी ही बुद्धि होय संशय नहिं कोई॥

* चौपाई *

तब गंधर्व दत्ता के गेह। गयो अहो स्वामी धर नेह।
विद्या करके अति सोभाय। मोह देख तिन विनय कराय॥
किंचित् चित् उदास खेचरी। सब सिंगार किये सुंदरी।
मुख तंबूल कर शोभित लाल। विकसितदृगनीरज सुविशाल॥
हंस हंस कहत सखिन सूं बैन। सुंदर वसन धरत तन ऐन।
ऐसे लखि के भ्रात महान। पूंछत भयो ताहि हित आन॥
पतिव्रता नारी जे कोय। कंथ रहित जे जगमें होय।
ते सुख कहाँ वांछे अवसार। हे प्रभावनी हिये विचार॥
जान नंद के उर की बात। खेचरी तव बोली अवदात।
बड़ो भ्रात तेरो निरधार। सुख सूं तिष्ठे पुत्र अवार॥
हम सब कंत विना सुन संत। पाप जोग तें दुखित अत्यंत
पाप उदय निश्चय जग जीव। लहे इष्ट को विरह सदीव॥
रहित उपद्रव जीवक सन्त। तें किम जानों कहि विरतंत।
अहो पुत्र आगे मुझ तात। रूपाचल गिरिवर अवदात॥
तिन पूंछो मुनि सूं इम जाय। मोहि सुता को वर सुखदाय।
कौन होय इस जगत मंझार। बोले मुनि सुन भूप उदार॥
गंधर्व दत्ता विद्या कर वाल। जो जीतेगो बुद्ध विशाल।
सो वर उत्तम होसी जान। चर्म शरीरी नर परधान॥

(

कर वृत्तान्त यह आदि सुचेत । निज स्वामी के देखनें हेत ।
विद्या अवलोकनी तुरंत । मैं भेजी सुनि पुन्य महन्त ।
ग्राम ग्राम प्रति थान सुथान । देश देश में नर परधान
निज कन्या दे विनय करंत । ऐसे भूमि विषै विचरन्त ॥
अब है हेम पुरी सुमंझार । देख कुंमर को विद्यासार ।
आई मेरे पास तुरन्त । कही सकल मोसूं विरतंत ॥

॥ दोहा ॥

निज परदेश विषै लहे, पुण्यवान नरसार ।
भाग हीन सम्पति विषै, लहै विपति निरधार ॥

॥ चौपाई ॥

भ्रात लखन की वांछा सार । जो तेरे सुत होय अवार ।
तो विद्याबल तें अब सन्त । लेख सहित भेजो मतिवंत ॥
इम कह पत्र सहित तिहिवार । सुलायो मोहे पलंग मंझार ।
तिह मोकूं हे प्रभु तुम पास । भेजो निज विद्या परकाश ॥
बांच कुंमर ने पत्र तुरन्त । गुणमाला को लिखो वृतंत ।
चतुर पुरुष बांचत ही लेख । निज कारज जानो सु विशेष ॥

॥ दोहा ॥

खग कन्या के पत्रवर, जीवंधर सुकुमार ।
ऐसी विधि बाँचत भयो, प्रेम हर्ष उर धार ॥

॥ चौपाई ॥

स्वस्ति श्री बहु उपमा जोग । हेमपुरी राजत सुमनोग ।
विराज मान जीवक सुकुमार । विजया सुन्दर सोमनुहार ॥
राजपुरी तें लिख अभिराम । गंधर्वदत्ता करत प्रणाम ।
विनती मेरी अहो नरेश । तुम प्रसाद हम सुक्ख अशेष ॥
तुम दर्शन की वांछा नित्य । अहनिशि वरते है मुझ नित्य ।
दर्शन दान देह मुझ आस । अब पूरण कीजे गुणरास ॥
तुम दर्शन विन सब परिवार । महा दुखित अब है भरतार ।
स्वामी अरि हत दरश तुरंत । देहु हर्ष सब लहे अत्यंत ॥
चिरजीवो नन्दो सुकुमार । अरि समूह जीतो निरधार ।
तुम माता इन आदि अशीस । देत तुम्हें नित अहो महीश ॥
तुम वियोग तें दुखित नरेश । सदा रहित हैं मात विशेष ।
तुम दर्शन की वांछा धरे । तुमरे गुण नित सुमरण करे ॥

॥ नाराच छन्द ॥

सिताब कन्त आइये । प्रमोद कूं बढ़ाइये ।
वियोग को घटाइये । सनेह कूं बढ़ाइये ॥

* दोहा *

जान पत्र के भेद कूं, देखत भयो सुजान ।
प्रबल शत्रु चलि जीतिये, इम वांछा चित ठान ॥

॥ चौपाई ॥

प्रिया शोक कूं ज्ञान कुमार। आप सोच कीनो न लगार।
शोक आदि कारण है जहाँ। ज्ञानी करे न रंचक तहाँ॥

॥ दोहा ॥

अहो जान सुनंद के, नृप आदिक सब आय।
कियो तास सनमान, बहु हर्ष हिये परसाय॥

॥ चौपाई ॥

इह तो कथन रहो इह ठाँहि। नंद गये पीछे घर माँहि।
भाई पद्म आदिक सबै। नंद विरह दुखित भये तबै॥
चितमें भ्राता करत विचार। कहाँ गयो अब नंद उदार।
बिना कहे बाँधव उठ जाय। किसे हर्ष होय अधिकाय॥
व्योमचरी सूं सब विरतंत। पूछें हम अब जाय तुरंत।
विद्या को तिन पायो पार। इम विचार तब गये कुमार॥
हे गंधर्व दत्ता सुन बात। नंद कहाँ जु गयो हम भ्रात।
कौन थान तिष्ठै वह सही। जानत हो कै थानक नहीं॥
विद्या धरी कहो परकाश। गयो नंद निज भ्राता पास।
विद्या बल तें जान वृतंत। तासों मैं भेजो मतिवंत॥
तासों जान सकल विरतंत। चढ़ चल वाहन चले तुरँत।
सँबोधी पुनि सब परिवार। हर्षित भई कुँवर की नार॥
चलत चलत दँडक बन पेख। तपै तापसी तहाँ अशेष।
तिनको आश्रम है जु सुचेत। गये सकल श्रम नाशन हेत॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

कीनां जु स्नान सब मिल कुमार। नवकार मंत्र ते जपत सार।
पुनि अशन पान कीनो विशेप। भ्राता सों नेह धरें अशेप॥
रमणीक विपिन के सकल थान। तहँ भ्रमत भये उर हर्षमान।
लख तापसीन को थान सार। थितिकरत भयेसबही कुमार॥
सब को सरूप वयसम निहार। तिनसूं बोली विजया सुनार।
आये कितते कित जाहु नन्द। क्योंथितिकीनीउरधर अनद॥
सुनके विजया के वचन सार। विस्मय सब करतभये कुमार।
प्रत्युत्तर देवे को तुरन्त। करते सुभये आरंभ सन्त॥
वरयुत सनेह पूंछत वृतन्त। ताहु को उत्तर देत सन्त।
पूछे सुबात उर प्रीति वान। दीजे उत्तर बहु हर्ष जान॥
हे मात राजपुर के मँझार। जीवक कुमार शोभित उदार।
वैश्यन को पति सोहै गगीश। गुण धरत विविधि सुंदर सुधीश
ताके हम सेवक हैं महान। सबही विद्या में निपुण जान।
ताके जीवन तें हम सदीव। जीवित सुखसों वरतें अतीव॥
काहू के कहवे करमात। भारवाह कोपो विख्यात।
पाप रहित जीवक सुकुमार। तास हनन कूं भयो त्यार॥
इम सुनके विजया सुंदरी। परी भूमि मांहि तिही घरी।
हा सुत ऐसे वचन उचार। मूर्छित भई मृतक उनहार॥
पुनि सचेत है मृगलोचनी। करत विलाप चित्त अनमनी।
भारवाह भूपति ने सही। ताहि हनो अथवा कै नहीं॥

* दोहा *

जा वृष ने रक्षा करी, प्रेत सुविपिन मंझार।
सो तुव पुण्य कहाँ गयो, हे सुत रविद्युति धार ॥

* चौपाई *

देवी दीर्घ उसास भरंत। अति विलाप कर रुदन करंत।
झरं दृगनसूं आंसू अपार। जिमि बरसे घनसे जलधार ॥
तपसिन को रोवती निहार। करत भये सब मनै कुमार।
मत रोवै जीवक नहिं मरो। बहुत पुन्य को भाजनखरो।
काहू सुरने हरो कुमार। भ्रमन करत बहु देश मंझार।
हेमापुरी विषै अब संत। तिष्ठत है नृप सेव करंत ॥
ऐसे वचन सुधाकर पान। सुखित भई बिजया दुखभान।
तब बोले सब ही जु कुमार। हे माता तूं को निरधार ॥

॥ दोहा ॥

जीवक सूं सम्बन्ध अब, कहा तिहारो मात।
सो हमसों भाषौ अबै, जासौं भ्रम न रहात ॥

॥ चौपाई ॥

सत्यंधर नृप की मैं वाम। विजया देवी मेरो नाम।
मो सुत जीवंधर गुणवंत। पालो गंधोत्कट ने संत ॥
सुनो सकल सुत मेरी बात। धरनी तिलक नगर विख्यात।
तहाँ नृपति गोविन्द महान। मो भ्राता मानत नृप आन ॥

॥ अडिल्ल ॥

ऐसे सुनकर निज माता जानत भये ।
ताके दोउ चरनन कूं सब ही नये ॥
जीवक के ढिग जाने को माता कने ।
सीख माँग के चले सकल हितसूं सने ॥
जौं लौं मगमें चले शीघ्र ही सब तदा ।
हेमापुरी निहार निकट पहुंचे तदा ॥
तौ लौं गोधन सकल चोर हर ले गये ।
ताको करो उपाय जु सब नृप पै गये ॥

॥ दोहा ॥

ग्वालन के वच सुनत ही, कोप कियो भूपाल ।
तस्कर दुष्ट महा अवै, मैं जीतों दरहाल ॥
शक्ति क्रांत भुजबल धरे, जो नर जगत मंझार ।
कहा कोप नाँही करे, दुष्टन कूं जु निहार ॥

॥ चौपाई ॥

नृपगन कर सेवित भूपार । चलो सेन चौविधि ले लार ।
कष्ट देख रक्षा नहिं करे । तो जगजन थिति कैसे धरे ॥
क्षत्रिय रणभेरी सुन तदा । कैयक घोड़न पै चढ़ मुदा ।
कैयक दंती पै असवार । चले सूर लेकर हथियार ॥
कैयक बखतर पहिर शरीर । सहित उछाह चढ़े नर धीर ।
कैयक धनुप वान ले हाथ । चले शीघ्र स्वामी के साथ ॥

ऐसे रण को उत्सव भाल। कुंवर सुनन्द सहित उठहाल।
शंकित भयो सुसुर तिहिवार। तोभी वेग चलो सुकुमार॥

॥ अडिल्ल ॥

जीवक के हितकार धनुषधारी सबै।
धनुष बाण ले हाथ शीघ्र चाले तबै॥
शक्ति रहित जो होय पराभवता सहे।
महाबली अपमान देख कैसे रहे॥

॥ कवित्त ॥

पुरकी गली मझार पद्मा भ्रातादिक प्यारे।
नृप जीवक की सेन विषै प्रापत भये सारे॥
देख परस्पर तबै भये संतोषित भाई।
चतुर पुरुष लख बंधु प्रीति धारै जु सवाई॥

॥ चौपाई ॥

जीवक के पीछे सु निहार। नृपने विस्मय करो अपार।
हर्ष धरो उर माँहि विशेष। जैसे कंज निहार दिनेश॥
अरि समूह कूं जीत तुरंत। निज मंदिर आये हर्षंत।
जीते हर्ष धरे नहि कोय। बंधु मिले तें अधिको होय॥
बैठ एकान्त विषै सुकुमार। पूंछी भ्रातन सों तिहिवार।
तात मात नृप मंत्री तनो। कथन तियन आदिक तिन भनो
कहत भयो पद्मास्य महान। भाग्याह को विभव महान।
तुम वियोग तें जननी तात। तिया आदि सब दुख विख्यात

गज लेन को करै उपाय । तब तुमकूं हम लेय बुलाय ॥
प्रानन सों प्यारी निज नार । तासों कहत भयो सुकुमार ।
तिय उल्लंघ कारज मतिवंत । करे नहीं जग माँहि तुरंत ॥

॥ दोहा ॥

चलो राजपुर को तुरत, संग लिये सब भ्रात ।
मनमें उत्कठित भयो, नैन लखो निज मात ॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

अनुक्रमतें दंडक वन निहार । जो सरनो तपसिन को उदार ।
ताके जु विषै जीवक नरेश । भ्रातन युत शीघ्र कियो प्रवेश ॥
तिह थान तिष्ठती लख सु मात । अति प्रेम बढ़ो नहिं अंग मात ।
बिन तत्वज्ञान उपजत सदीव । रागादिक प्राणिन कूं अतीव ॥
माता के युगपद कूं विलोक । निज शीस नाय दीनी सु धोक ।
धारक विवेक जे नर उदार । ते करें काज अवसर निहार ॥
सुतसूं आलिंगन कर उदार । पुनि मस्तक चूमो हर्ष धार ।
कर प्रबल मोह वैठाय अंक । तज शोक भई माता निशंक ॥
माता के युग कुच कुंभ तुंग । तिनतैं पय खिरत भयो अभंग ।
ताकर जीवकको न्हवन होत । जैसे गिरि पै बरसत उद्योत ॥
जन्मत ही प्रेत सुवन मंझार । तो कूं मैं छोड़ो हे कुमार ।
बैरी नृप के आगे कुमार । कैसे तू वृद्ध भयो अवार ॥
तेरे सु देखवे ते कुमार । आई सब अवनी कर मंझार ।
तेरे प्रताप तें अहो नंद । बैरिनको नासो सकल कंद ॥

कर कंज थकी सुतकी सुदेह । सपरश करती उर धरत नेह ।
दृग वारिजकर विजयासुमात । निरषत सु रूप नाहीं अघात ॥

हे पुत्र पिता को पद महान । पृथ्वी को ईश्वर पनो जान ।
अरिगणकोक्षय करके विनीत । अब राज उदै हूहै पुनीत ॥

॥ चौपाई ॥

सामग्री विन काज उदार । कहा होयगो सुत निरधार ।
तातें दुर्लभ है यह काज । महा कष्ट तें आवे राज ॥
अहोमात तुम हो गुण भौन । कारज बहुत कहनतें कौन ।
तेरो सुत जो वांछा धरे । सोई कारज छिन में करे ॥
खेद करन तें कारज कहा । पुरुषविदग्धन को बल महा ।
कारज परे तब ही विस्तरे । निज परशंसा मूरख करे ॥
सुत सुवचन इम मानत भई । सकल धरा मुझ करमें ठई ।
यामे नहीं संदेह लगार । सुत बल धारत है निरधार ॥
पुन स्नान भोजन कर पान । कर विश्राम सकल सुखमान ।
गूढ मंत्र करवे कूं संत । सब ही तत्पर भये तुरंत ॥
माता मंत्री सहित कुमार । मंत्र विचारत भयो उदार ।
कारज के वेत्ता गुणखान । कारज करें विचार महान ॥
कष्ट विषै अपनो बल तोल । करे काज मन कर सु अडोल ।
तो शुभफल साधै सु अतीव । निश्चय जगमें करत सदीव ॥
भूपन को मारग यह सही । करे विश्वास बंधु को नहीं ।
निज त्रिय शत्रुभाव अनुसरे । पर विश्वास भूप कित करे ॥

करै पक्ष बल पहिलौ भूप । पीछे अरि जीते बहिरूप ।
ऐसे कियें नृपति कौं सिद्धि । कीरति होय मिले बहुरिद्धि ॥
हित बाँछक निज नर्द सार । माननीक हो जगत मंझार ।
धन करकै परजन छिन मांहि । होय मित्र अपनो शक नाहिं ॥
अपने पक्ष बिना अवलोय । किंचित कारज कभी न होय ।
यातैं निज सहाय कै हेत । करै जतन प्राणी शुभ चेत ॥

❀ अडिल्ल ❀

यातैं हे सुत अबै आपनो करन कूं ।
फेर काष्ठअंगार भूप कै हतन कूं ॥
भूपति गोविंद नाम बली है तेरो मामा ।
ताके घर तुम चलो वेग अब ही गुण धामा ॥

॥ चौपाई ॥

मात वचन सुनकै सुख पात । माम धाम जावे कूं भ्रात ।
सब उत्कंठित भये तुरंत । अंबा बच नहीं लंघैं संत ॥
तब पुनि जीवंधर सुकुमार । तपसिन के ढिगतैं तिहिवार ।
जननी हितकारी सब भ्रात । तिन युत चलो सुधी हर्षात ॥
अनुक्रम तैं जीवक मतिवान । गये राजपुर निकट महान ।
ताके विपिन विषै थित भयो । अति प्रमोद उर मांही ठयो ॥
चितमें भाव धरो सुकुमार । राजपुरी देखी मनुहार ।
अपनी वस्तु देखतैं संत । कौन उछाह करै न तुरंत ॥
पीछे मित्रन कूं तिहि थाप । गयो फेर पुर माँही आप ।

जैसे इन्द्र करे सु प्रवेश। अमरावती पुरी लख वेश ॥
एकाकी जीवक मतिवान। पुरकी चहुँ ओर सुख मान।
विचरत लीला पूर्व स्वच्छन्द। देखत शोभ चले गतिमंद ॥
पुर की शोभा देख अत्यंत। तृप्त भयो जीवंधर सत।
जासैं राग धरैं जगजीव। तासौं मोह करे जु अतीव ॥
ताही पुर में सागर दत्त। सेठ बसे ताके बहु वित्त।
कमलावती जासु धर नार। जैनधर्म पाले सुखकार ॥
तिनके विमला नामा सुता। आनन विमल लसै गुण युता।
जाको मनमुनि सम अमलान। रत्न स्वरूप धरे सु महान ॥

❀ कवित्त ❀

सिरकी अलकें अति ही झलकें शुभ स्याम घना बरसे नभमें।
लख रूप सुरी सुलजी अति ही अजहूँ न लगे पलके दृगमें ॥
सुनके वच कोकिल श्याम भई कुच कुंभ लसै युगहू तटमें।
सरसी सम नाभि धरैं गहरी कटि केहरि की सु लसै तनमें ॥

॥ दोहा ॥

कलप सारववत भुज लषै, कर कोमल मनुहार।
कदली सम है जंघ युग, चरन अरुण छवि धार ॥
दिवस एक निज महल पैं, लिये सखी जन सँग।
विमला कंदुक केलि वर, करे जु हर्षित अंग ॥

॥ चौपाई ॥

क्रीड़ा करत गेंद मनुहार । पड़ी महल तैं भूमि मझार ।
किधौं गेंद मिस लक्ष्मी आय । जीवक पद पर्शन उमगाय ॥
गिरती गेंद लखी सुकुमार । ऊँचो मुख कीनो तिहिवार ।
तरुण मनोहर कन्या देख । तासों मोहित भयो विशेष ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

यह देव किधौंशशि खगमहीश । अथवा सूरज कै है फणीश ।
कै कामदेव आयो विख्यात । ऐसे वितर्क कन्या करात ॥
लीनों उठाय कंदुक कुमार । वर कनक तारतैं ग्रही सार ।
कन्या की चेरी कुमर पास । माँगी सुगेंद तिन वच प्रकाश ॥
ता औसर सागरदत्त सेठ । आयो जीवंधर के सुहेठ ।
रमनीक भाव वर रूप देख । उरमें विस्मय कीनो विशेष ॥
ताको आदर कर सेठ संत । लायो अपने घरमें तुरंत ।
चिरकाल धरे जाकी सु आस । सोई जु मिलै तब है हुलास ॥

॥ चौपाई ॥

महा भाग मेरे सुन वैन । विमला कन्या है मुझ ऐन ।
कमला सूं उपजी निरधार । गुणगण मंडित शुभ आकार ॥
पूछो हम निमिती इक संत । होय कौन कन्या को कंत ।
विकै रतन की राशि महान । जाके आये सो पति जान ॥
तुम आये तैं हे महाराज । बिके रत्न हमरे बहु आज ।
भागवंत नर आवे जबै । कहा रिद्धि पावै नहिं सबै ॥

निमिती ने भाषे जे वैन। महा भाग सोहे सब एन।
तुम उत्तम नर हो गुणवंत। यातें विमला परणो संत॥
ऐसे हठ तें जीवक संत। सेठ वचन मानों मतिवंत।
पुन्यवत वाँछा जो करे। सो कारज छिनमें अनुसरे॥
उदधिदत्त ने तब तत्काल। कियो विवाह उछाह विशाल।
विधि पूर्वक जीवक सुकुमार। विमला परनी रति मनुहार॥

॥ सोरठा ॥

रम्भा सम वर नार पाय कुमर भोगत भयो।
सुख नाना परकार भोगे पुन्य प्रताप तें॥

* एला छन्द *

एकाकी सुकुमार फिरे हो पुरी मझारा।
सुजन नहीं इक संग धर्म ही थो तिसलारा॥
ताही धर्म प्रभाव वरी रति सम तिन नारी।
ऐसी भविजन जान धर्म सेवो सुखकारी॥

सवैया ३१

शिवपुर जायवे कूं धर्म सरल मग,
वशीकरण मंत्र वर मुक्ति रमणि कूं।
वाँछित सुखदेवे को धर्म ही कल्पतरु,
सींचवे कूं मेघसम रोग की प्रगनि कूं॥
कामधेनु चिन्तामणि धर्म सूं अधिक,
नाँहि धर्म है परमनिधि आकर गुणन कूं।'

पापअरि खंडवे कूं बज्रसम धर्म जान,

हरिवे कूं हरि सम अक्ष से गजन कूं ॥

त्रिमला लाभ वर्णनो नाम दशम परिच्छेद ।

* अथ ११ वाँ परिच्छेद *

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

* दोहा *

शीतल शीतलता करो, शीतल गुण परकाश ।

कर्म महां तरु तुम दहो, जिमि हिमकर दुखराश ॥

सवैया ३१

शीतल सुभाव धर शीतल ही बैन कर,

भ्रम तप नाशक जो शिवपद थान है ।

धर्म जल वरषा कर मेट भवदाह सब,

पाप ताप नाशिवे कूं शशिको विमान है ॥

कुगति को नाश करे सेवत सुकति धरे,

कोपज्वर नाशिवे कूं अमृत का पान है ।

ऐसे जिन शीतल के चरण कमल पूजो,

अघतम भेदन कुं मंडल सुभान है ॥

कन्या सुर मँजरी सुरी सम है परा ।
जगत त्रिषै परसिद्ध रूप धारै वरा ॥
काहू नर को रूप लखे नाहीं कदा ।
पुरुष नाम नहिं सुने रहे घर में मुदा ॥
पुनि ताकी वर सखी तास आगे सही ।
पुरुष नाम मुखतैं जु कदा काढ़े नहीं ॥
क्रीड़ा करत विलास विविध घरके विषै ।
अति प्रवीण बहु सखीं सहित ताके नखै ॥
परने जो वह बाल जाय जीवक भली ।
तो जानो यह भागवान जगमें बली ॥
और भांति नहीं कहूं सुबुधि धारी अबै ।
अल्परूप युत धरत नार जो भी सबै ॥

॥ चौपाई ॥

बुद्धसेन के सुन वच संत । हसत भयो जीवक गुणवंत ।
दुर आग्रह कारज निरधार । सो छल कारन तें हैसार ॥
पुनि बोलो जीवक मतिवंत । सुनो वचन सब ही तुमसंत ।
ताकूं करो अबै वरा जाय । इम कह कुमर उठो उमगाय ॥

रोड़क—छन्द

जक्षदेव ने दई पूर्व विद्या सुखकारी ।
रूपपरावर्तिनी कुमर उर माँहि विचारी ॥

वाँछित कारज सिद्ध हेत जगजन जग माँही।
करै अनेक उपाय सुधी संशय कछु नाँही॥

॥ चौपाई ॥

उर में कोंख कियो विचार। कैसे वश कीजे वह नार।
वृद्ध रूप धारे बिन सही। और भांति वश है वह नहीं॥

॥ दोहा ॥

वृद्धरूप निन तासु धर, मेरो गमन न होय।
बालक अरु वहु वृद्ध पै, दया करे सब लोय॥

॥ अडिल्ल ॥

यक्षदेव को दियो मंत्र सुमरो जवै।
हो गयो वृद्धरूप छिनक माँही तवै॥
विद्या अति उत्कृष्ट जगत में नरन कूं।
सिद्ध कहा नहिं होय सु कारज करन कूं॥

चाल—छन्द

वृद्धरूप सु इह विधि धर के। विचरत पुर में छल करके।
या को निरधार सुउर में। करने समरथ नहिं पुर में॥
लख रूप सुधी जन सारे। विषयन तें भये जु न्यारे।
लख वृद्धरूप जग माँही। विरकत क्यों होय सुनांही॥

॥ चौपाई ॥

नारे तनकी त्वचा असार। माखी पंख समान निहार।
संतन कूं मानो इम कहे। वृद्धपने लावण्य न रहे॥

नासा ताकी झरत अपार । किधों नरनसूं कहत पुकार ।
जगत विषै थित हैं जे जीव । तिनकूं वय इम गलत सदीव ॥
युग दृग ताके भ्रमत अत्यंत । जग जनकूं मनो एम भनंत ।
सुत कलित्र मित्रादिक आदि । सकल अथिर इनतें रुचि वादि ॥
लार शिथिल मुखतें बहु बहे । मोही जनसों मनु इम कहे ।
जगमें जे हैं भोग महान । सो सब अथिर महादुख खान ॥
स्वेत केश मिस वृद्ध सुगूढ़ । कहत एम जग जन सब मूढ़ ।
विभ्रम युत मति धरे अथाहि । लख पर वस्तु करे उत्साह ॥
डिगते चरण धरे अधिकाय । किधौं जगतकूं अथिर बताय ।
निकस्यो कूब अधो मुख रहे । जग को नीची गति मनु कहे ॥
पुरजन कूं वितर्क उपजात । नगर विषै सो भ्रमण करात ।
नर प्रवीण लख होय उदास । मूरख देख करें बहु हास ॥

* दोहा *

लिये लष्टि निज हाथ में, कंपित सकल शरीर ।
भ्रमत फिरे घर २ विषै, धरत नहीं मन धीर ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे सबको अथिर कहंत । भ्रमत भ्रमत अति खेद धरंत ।
देव मंजरी को लख ग्रेह । वृद्ध गयो छिनमें धर नेह ॥

॥ अडिल्ल ॥

करन लगे परवेश गेह माँही जबै ।
द्वार पालनी नार देख तासं तबै ॥

बोली आदर सहित वृद्ध तुम आय के।
आये क्यों इस थान कहो समुझाय के॥
मेरो आगम सुनो कहों साची अवै।
कन्या देखन कूं आयो निश्चय अवै॥
अरु निज आतम हित धार उर के विषै।
आयो हौं इस थान अहो तुमरे नखै॥

॥ चौपाई ॥

वृद्ध वचन सुनके सब नारि। मिलके हसत भई तिहिवार।
वचन अपूरब सुनके कहा। हास करे नाहीं नर महा॥
कर सेती रोकें हम सबै। तो इह गिरै भूमि में अबै।
गिरतें प्राण नसैं दुर हाल। इम चिंतवन करें सब बाल॥
घरमें जातो लख सब नार। मनै कियो नहिं दया विचार।
देख अपूरब नर बल हीन। तापै कृपा करे परवीन॥
उरमें भय धरती सब भई। देव मंजरी पर फिर गई।
भय सनेह युत किंकर हीन। निज स्वामी के रहत अधीन॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

इक वृद्ध पुरुष कंपित शरीर। त्वच अस्थिमात्र दीखत शरीर।
आवत है घर भीतर विख्यात। हम रोकनकूं समरथ न मात॥
सुन कन्या बोली वच विशाल। तुम बरजो मत याकूं सुबाल।
जा विध के भावी होनहार। ताही माफिकमति होय सार॥

अति वृद्ध पुरुष लखके नवीन । कन्या, हर्षी मन में प्रवीन ।
पूरव है जैसो संस्कार । उपजे तैसो ही योग सार ॥

॥ दोहा ॥

भूखो लख अति वृद्ध कूं, भोजन बहु सुमिष्ट ।
कन्या देत भई तबै, भयो महा संतुष्ट ॥

॥ चौपाई ॥

भोजन कर वर सेज मँझार । निद्रा मिस पौढ़ौ तिहवार ।
निज कारज करवे को संत । योग समय देखें बुधवंत ॥
जग मन रंजन गान विशाल । सुनत होय वश तिय दरहाल ।
कानन कू अति ही प्रियकार । गावत भयो वृद्ध तिहवार ॥
निद्रा मिस कर कछु इक काल । सोवत भयो वृद्ध गुणमाल ।
कछु इक थान संत निरधार । कपट धरें निज अर्थ विचार ॥
सुनके ताको राग प्रवीन । राग विषै जानो परवीन ।
जो है आप विचक्षण सार । भलो बुरो परखै निरधार ॥
पँचम राग आदि मनुहार । ताकी ध्वनि सुन कन्या सार ।
खिची भई आई गुणरास । आदर सहित वृद्ध के पास ॥

❀ अडिल्ल ❀

मन वाँछित निज काज परीक्षा को जबै ।
कन्या ताको करत भई आदर तबै ॥
निज मतलब उर धार जगत जन जग विषैं ।
विनय करें अधिकाय जाय पर के नखैं ॥

॥ रोड़क छन्द ॥

बोली सुर मँजरी इन्द्र तो सम जग माँही ।
गान कला में निपुण मोहि दीसे कोउ नाहीं ॥
तुम हो अति परवीन कोकिला मम तुम वाणी ।
कानों में निरधार हिये तुम हो पर ग्यानी ॥
जैसी तोमें शक्ति गान विद्या के माँही ।
तैसी और जु काज विषै हैगी अक नांही ॥
प्रानिन को समरत्थपनो जग जन नहिं जाने ।
प्रगट लखै वर शक्ति तवै निहचै उर आनै ॥

॥ चौपाई ॥

कहत भयो मुनिये अव वाल । निमित ज्ञान में शक्ति विशाल ।
तीन काल की है जे वात । सो मैं कहूँ अवै विख्यात ॥
अहो निमित्त ज्ञानी जु वताय । मोहि इष्ट वरको सु उपाय ।
दीन वचन जाचना मँझार । कहत न रागी करत विचार ॥
जीवक स्वामी गयो विदेश । कितै भ्रमत जानूं नहिं लेश ।
पंडित जन मन मोहित सोय । ता विन मेरो मरनो होय ॥
कल्प वृक्ष सम कित है कंत । कैसे प्राप्ति होय महंत ।
सुनके निमित ज्ञानकूं देख । कहत भयो पुनि वचन विशेष ॥

॥ आडिल्ल ॥

सरिता तट वन मांहि काम को धाम है ।
मन वांछित शुभ काज करत अभिराम है ॥

निज कारज के हेत जान जनता विषै ।
हे बाले तूं जान बात सांची अखै ॥
कामदेव की पूजा समय विचारिये ।
मिले तोहि भरतार न संशय धारिये ॥
अपनो वाँछित काज जगत में करन कूं ।
अतिशय निर्मल चित्त होत है नरन कूं ॥

॥ चौपाई ॥

वृद्ध वचन सुनके तब बाल । निज मनमें जानो पति हाल ।
मन वांछित कारज जब सरे । तब अतिशय प्राणी सुख धरे ॥
या प्रकार कहि के विरतंत । चल्यो तहाँ संती मतिवंत ।
अति विशेष ज्ञाता जो होय । सुख आशा धर सेवें सोय ॥
सुरमंजरी महा गुणमाल । करो बधाई मिष दरहाल ।
निज सखियन कर वेढ़ित भई । कामदेव के मंदिर गई ॥
भगति भाव उर मांहि बढ़ाई । कामदेव पूजो मन लाई ।
रति सुख हेत जगत में नारि । चेष्टा कहा करे न असार ॥

रोड़क—छन्द

विविध द्रव्य सूं पूज फेर जांचो तसु संती ।
जो तुझ मांही शक्ति होय तो कर मुझ एती ॥
जीवक वेगि मिलाप तरुण जाकूं शुभ प्यारो ।
पूरब भव को नेह होत नाँही अब न्यारो ॥

॥ सोरठा ॥

तब जीवक मतिवान बुधसेन कूं लाय के।
बैठायो इक थान मूढ़ काम के धाम में ॥
कन्या के सुन बैन बुधसेन बोल्यो तबै।
गुप्त वचन सुख देन कामदेव को मिस धरै ॥
सो पूजा करि सार पायो वर तैं निकट ही।
प्रगट भयै निरधार संशय उर में मति करै ॥
सुरमजरी तिहिवार कामदेव ही के वचन।
मानो उर निरधार वांछित मुझ कारज भयो ॥

॥ दोहा ॥

रहित विचार विवेक बिन, त्रियजन जगत मंझार।
तिनके वर भूषण यही, मूरखता निरधार ॥
देखो तब ही कुमर को, मुखपीछे सुखकार।
करत भई लज्जा तबै, उरमें आनन्द धार ॥

॥ चौपाई ॥

करि कटाक्ष जीवक तिहिवार। करी तिया को तृप्त अपार।
जगमें काम अंध नर जेह। दृष्टिपात कर जीवें तेह ॥
कहो त्रियासूं उर धर नेह। अब तुम जावो अपने गेह।
तेरे पीछे हे वरनार। मैं आऊं तो गेह मझार ॥
जीवक के वच सुन हर्षन्त। गई आपने गेह तुरन्त।
दोनों को चित होय समान। सो दम्पति जगमें परधान ॥